व्याकरणसौरभम्

(कक्षा XI-XII के लिए संस्कृत व्याकरण,
छन्द एवं अलंकार की पाठ्यपुस्तक)

लेखक

प्रो. कमलाकान्त मिश्र

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN : 81-7450-168-1

प्रथम संस्करण

जून 1979 आषाढ़ 1901

संशोधित संस्करण

नवंबर 2002 कार्तिक 1924

PD 5T DRH

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैम्पस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्लू.सी. कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन बनाशंकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	32, बी.टी. रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110 016	**बैंगलूर 560 085**	**अहमदाबाद 380 014**	**24 परगना 743 179**

प्रकाशन सहयोग

संपादन	दयाराम हरितश
उत्पादन	प्रमोद रावत
	राजेंद्र चौहान
आवरण	बालकृष्ण

रु. 58.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटर मार्क 70 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली - 110016 द्वारा प्रकाशित तथा शगुन ऑफसेट, 132, मौहम्मदपुर, भीकाजी कामा प्लेस, नई दिल्ली 110066 द्वारा मुद्रित।

पुरोवाक्

भारतीय शिक्षा-व्यवस्था में संस्कृत के महत्त्व को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् का सामाजिक विज्ञान और मानविकी शिक्षा विभाग प्रारम्भिक स्तर से उच्चतर माध्यमिक स्तर तक आदर्श पाठ्यक्रम और आदर्श पाठ्यपुस्तकों का निर्माण करता रहा है। इसी क्रम में सन् 1979 में परिषद् द्वारा 10+2 की शिक्षा-पद्धति के अनुसार उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के छात्रों के लिए व्याकरण जैसे जटिल विषय को छात्रोपयुक्त सरल शैली में प्रस्तुत करने के लिए **व्याकरणसौरभम्** नामक पुस्तक प्रकाशित की गई जो छात्रों के लिए अत्यन्त उपादेय रही है।

परिषद् द्वारा सन् 2000 में प्रकाशित विद्यालयीय शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा के अनुसार विकसित संस्कृत के नवीन पाठ्यक्रम, विगत वर्षों में प्राप्त अनुभव तथा पाठ्यपुस्तक-समीक्षा-गोष्ठी में विशेषज्ञों से प्राप्त सत्परामर्शों के आलोक में प्रस्तुत पुस्तक–**व्याकरणसौरभम्** (*संशोधित-संस्करणम्*) तैयार की गई है जो कक्षा 11-12 (ऐच्छिक संस्कृत) के लिए निर्धारित व्याकरण, छन्द एवं अलङ्कार के अंशों के अध्ययन-अध्यापन की अपेक्षाओं को पूरा करती है। आशा है, यह संस्करण न केवल उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के छात्रों के लिए अपितु संस्कृत भाषा के जिज्ञासुओं के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगा।

इस पुस्तक के लेखक एवं संशोधित-संस्करण की पाण्डुलिपि के समीक्षार्थ आयोजित कार्यगोष्ठी में उपस्थित होकर जिन विषय-विशेषज्ञों एवं अनुभवी अध्यापकों ने अपने बहुमूल्य सुझावों से सहयोग देकर पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाने में योगदान किया है, परिषद् उन सभी के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती है।

पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तक का विकास एक निरन्तर गतिशील प्रक्रिया है। अतः पुस्तक को और अधिक छात्रोपयोगी बनाने के लिए विशेषज्ञों एवं अनुभवी अध्यापकों द्वारा प्रेषित परामर्शों का सदैव स्वागत होगा।

जगमोहन सिंह राजपूत
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

मार्च 2002
नई दिल्ली

पाण्डुलिपि-समीक्षा-संशोधन-कार्यगोष्ठी के सदस्य

1. **प्रो. आद्याप्रसाद मिश्र**
   पूर्व कुलपति
   इलाहाबाद विश्वविद्यालय
2. **प्रो. अवनीन्द्र कुमार**
   अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
3. **प्रो. जगदीश सेमवाल**
   वी.वी.बी.आइ.एस.एण्ड आइ.एस.
   पंजाब विश्वविद्यालय, होशियारपुर
4. **डा. योगेश्वर दत्त शर्मा**
   रीडर, संस्कृत
   हिंदू महाविद्यालय, दिल्ली-7
5. **श्री वासुदेव शास्त्री**
   अवकाश प्राप्त प्रभारी संस्कृत
   रा.शै.अनु.प्र.सं., उदयपुर
6. **डा. अर्कनाथ चौधरी**
   रीडर, व्याकरण
   केंद्रीय संस्कृत विद्यापीठ, जयपुर
7. **डा. रामनाथ झा**
   सहायक आचार्य
   संस्कृत अध्ययन केंद्र
   जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
   नई दिल्ली
8. **श्रीमती संतोष कोहली**
   उप *प्रधानाचार्या* (अवकाशप्राप्त)
   सर्वोदय कन्या विद्यालय
   कैलाश एनक्लेव, रोहिणी, दिल्ली
9. **श्री भास्करानन्द पाण्डेय**
   पी.जी.टी. संस्कृत
   राजकीय उच्चतर माध्यमिक बाल
   विद्यालय, नांगलोई, दिल्ली
10. **श्री परमानन्द झा**
    पी.जी.टी. संस्कृत
    राजकीय उच्चतर माध्यमिक बाल विद्यालय
    आदर्श नगर, दिल्ली
11. **श्री मदन मोहन शर्मा**
    टी.जी.टी. संस्कृत
    केंद्रीय विद्यालय, सेक्टर VIII
    आर.के.पुरम्, नई दिल्ली
12. **डा. पुरुषोत्तम मिश्र**
    टी.जी.टी. संस्कृत
    राजकीय उच्चतर माध्यमिक बाल विद्यालय,
    जहांगीर पुरी, दिल्ली
13. **श्रीमती उर्मिल खुंगर**
    सेलेक्शन ग्रेड लेक्चरर
    सामाजिक विज्ञान और
    मानविकी शिक्षा विभाग
    एन.सी.ई.आर.टी.
    नई दिल्ली
14. **डा. कृष्ण चन्द्र त्रिपाठी**
    रीडर, संस्कृत
    सामाजिक विज्ञान और
    मानविकी शिक्षा विभाग
    एन.सी.ई.आर.टी.
    नई दिल्ली
15. **डा. दया शंकर तिवारी**
    प्रोजेक्ट फेलो, संस्कृत
    सामाजिक विज्ञान और
    मानविकी शिक्षा विभाग
    एन.सी.ई.आर.टी.
    नई दिल्ली

विषय-सूची

पाठ्यक्रम (नवीन)

कक्षा XI-XII के (ऐच्छिक संस्कृत) के लिए व्याकरण, छन्द एवं अलङ्कार के निर्धारित अंश –

कक्षा XI

प्रथम सत्र

व्याकरण **15 अंक**

1. *शब्दरूप :* (5 अंक)

अजन्त पुंलिङ्ग	-	बालक, मुनि, भानु , पितृ, भ्रातृ ।
अजन्त स्त्रीलिङ्ग	-	लता, मति, धेनु , मातृ ।
अजन्त नपुंसकलिङ्ग	-	फल, वारि, मधु ।
सर्वनाम	-	तद्, एतद्, किम् - तीनों लिङ्गों में । अस्मद्, युष्मद् ।
संख्यावाची	-	एक, द्वि, त्रि, चतुर् - तीनों लिङ्गों में ।

2. *धातुरूप :* (5 अंक)

भू , पठ् , पा (पानार्थक पिब) गम्, खाद्, स्मृ, पच्, अस्, कृ, शक् , प्रच्छ् (पृच्छ्), पत्, नश्, कथ, चुर् — परस्मैपदी पाँचों लकारों में (लट्, लोट्,लङ्, विधिलिङ्, लृट्,)
सेव्, लभ्, वृध्, वृत्, रुच्, जन् — आत्मनेपदी पाँचों लकारों में (लट्, लोट्,लङ्, विधिलिङ्, लृट्,)

3. *कृदन्त प्रत्यय :* (5 अंक)

क्त्वा, ल्यप्, तुमुन्, क्त, क्तवतु , शतृ, शानच्, तव्यत्, अनीयर्, क्तिन्, ण्वुल्, तृच्, ल्युट् ।

द्वितीय सत्र

व्याकरण **15 अंक**

1. *तद्धित एवं स्त्री प्रत्यय :*
   त्व, तल्, त्रल्, मतुप्, ठक्, टाप्, ङीप्, (5 अंक)
2. *अव्यय :* (4 अंक)
   पुनः, उच्चैः, नीचैः, शनैः, अधः, चिरम्, नूनम्, पुरा, खलु, मुहुः, भूयः, ह्यः, श्वः, अद्य, अधुना, तूष्णीम्, कुत्र, उपरि, मा, न, च।
3. *सन्धि :* (6 अंक)
   (क) स्वर-सन्धि - दीर्घ, गुण, वृद्धि, यण्, अयादि । (2 अंक)
   (ख) व्यंजन-सन्धि - श्चुत्व, जश्त्व, ष्टुत्व, च् (तुक्) आगम, षत्व-विधान एवं णत्व-विधान । (2 अंक)
   (ग) विसर्ग-सन्धि - सत्व, षत्व, णत्व, उत्व, रुत्व, लोप । (2 अंक)

कक्षा XII

प्रथम सत्र

(1) *छंद :* **10 अंक**

(क) लघु, गुरु, गण एवं यति का प्रयोगात्मक ज्ञान

(ख) अनुष्टुप, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, उपजाति, वंशस्थ, शार्दूलविक्रीडित, वसन्ततिलका, मालिनी, शिखरिणी, मन्द्राकान्ता।

समस्त छन्दों का संस्कृत में लक्षण देकर सोदाहरण लघु, गुरु, मात्रा, यति लगाकर स्पष्ट करना।

(2) *समास :* **5 अंक**

सभी समासों का सामान्य परिचय

अव्ययीभाव, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्वन्द्व, द्विगु, बहुव्रीहि।

(क) समस्त पदों का विग्रह करना तथा विग्रह किये गये पदों का समस्त पद बनाना।

(ख) समासों के नाम से परिचित कराना।

द्वितीय सत्र

अलङ्कार : **10 अंक**

अनुप्रास, उपमा, यमक, श्लेष, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, अतिशयोक्ति, व्याजस्तुति और अप्रस्तुतप्रशंसा (अन्योक्ति)।

संकेतसूची

आ0	-	आत्मनेपदी
उ0	-	उभयपदी
उ0पु0	-	उत्तम पुरुष
ऋ0 प्रा0	-	ऋक् प्रातिशाख्य
एक0	-	एकवचन
च0	-	चतुर्थी
तृ0	-	तृतीया
द्वि0	-	द्वितीया
द्विव0	-	द्विवचन
नपुं0	-	नपुंसकलिंग
पं0	-	पंचमी.
प0	-	परस्मैपदी
प्र0	-	प्रथमा
प्र0 पु0	-	प्रथम पुरुष
पा0	-	पाणिनीय अष्टाध्यायी
पुं0	-	पुंलिंग
बहु0	-	बहुव्रीहि
बहुव0	-	बहुवचन
म0 पु0	-	मध्यम पुरुष
मध्यसि0 कौमुदी	-	मध्यसिद्धान्तकौमुदी
ल0 सि0 कौ0	-	लघुसिद्धान्तकौमुदी
ल0 सि0 कौ0 सू0 वृत्ति	-	लघुसिद्धान्तकौमुदीसूत्रवृत्ति
वा0	-	वार्तिक
ष0	-	षष्ठी
सं0	-	संबोधन

भारत का संविधान

भाग 4अ

नागरिकों के मूल कर्त्तव्य

अनुच्छेद 51अ

मूल कर्त्तव्य - भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह -

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे,

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे,

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाए रखे,

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे,

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभावों से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हों,

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे,

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्रणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे,

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे,

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखें और हिंसा से दूर रहे, और

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू सके।

भूमिका

भाषाशरीरजीवातु ज्ञानविज्ञानपुष्पकम्।
शब्दानुशासनोद्यानं सर्वशास्त्रोपकारकम्॥
पाणिनीयं च तत्रापि प्रशस्तं सर्वतो मतम्।
तन्मूलकमिदं दद्याच्छात्रेभ्यो ज्ञानसौरभम्॥

जिस संस्कृत भाषा में वेदों के समय से लेकर आधुनिक काल तक की भारतीय परम्परा, विचार, चिन्तन और संस्कृति निहित है उसके सम्यक् अध्ययन के लिए व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है। व्याकरण शब्द का अर्थ है –

व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः अनेन इति व्याकरणम्

अर्थात् जिसके द्वारा शब्दों की व्युत्पत्ति की जाए, उनके शुद्ध स्वरूप का ज्ञान प्राप्त हो, उसे व्याकरण कहते हैं। इसके समुचित ज्ञान के बिना भाषा का सही ज्ञान संभव नहीं होता। परिणामतः वास्तविक अर्थ की प्राप्ति भी संभव नहीं होती। इसलिए अति प्राचीन काल से ही सभी शास्त्रों में व्याकरण को प्रधान स्थान प्राप्त रहा है–

मुखं व्याकरणं स्मृतम्।[1]

व्याकरण का निर्माण भाषा में प्रचलित शिष्टजनप्रयुक्त शब्दों के विश्लेषण के आधार पर होता है। वैयाकरण शब्दों को विभिन्न वर्गों में

---

1. छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते॥
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥ ❑ पाणिनीयशिक्षा 41-42

विभाजित कर उनकी सिद्धि के लिए कुछ सामान्य और कुछ विशेष नियमों का निर्माण करता है जिनके सहारे उस भाषा के वाङ्मय को सरलता से समझा जाता है। साधु शब्दों के विश्लेषण के आधार पर उत्पन्न यह शास्त्र शब्दानुशासन कहलाता है, जिसका अर्थ है शब्द की प्रवृत्ति का अनुसरण करते हुए अनुशासन करने वाला शास्त्र । किंतु कालान्तर में वह शब्दों का निरंकुश शासक बनने की कोशिश से अपने नियम तथा उपनियम की परिधि में नहीं आने वाले शब्दों को अशुद्ध करार देता है। इसका परिणाम यह होता है कि भाषा की वह गति रुक जाती है और धीरे-धीरे साधारण समाज में भाषा अपना दूसरा रूप अपना लेती है जो अभिव्यक्ति का माध्यम बन जाती है। वैयाकरण जब इसका भी विश्लेषण कर इसे भी नियमों में बाँध देते हैं तब वह भी कुण्ठित होकर अपना नया रूप धारण करती है। इस प्रकार अपने-अपने व्याकरण के कारण भाषायें नया-नया रूप धारण करती जाती हैं और एक समय ऐसा आता है जब प्राचीन भाषा को समझना अत्यन्त कठिन हो जाता है। उस समय उसका व्याकरण ही उस भाषा से परिचय कराने वाला एक साधन होता है। संस्कृत व्याकरण के सहारे ही हम अत्यन्त प्राचीन काल में लिखे गए वेद, उपनिषद्, पुराण, रामायण, महाभारत के साथ-साथ भास, कालिदास, माघ, श्रीहर्ष, बाण और जगन्नाथ आदि की भाषाओं का रसास्वादन करने में समर्थ होते हैं। अत एव पुराने वाङ्मय को समझना अर्थात् उसकी रक्षा करना व्याकरण का प्रथम प्रयोजन है जैसा कि महर्षि पतञ्जलि ने महाभाष्य में कहा भी है–

रक्षोहागमलध्वसन्देहाः प्रयोजनम्।

व्याकरण का दूसरा प्रयोजन ऊह (तर्क) है। एक प्रयोग को देखकर उसके आधार पर आवश्यकतानुसार अन्य प्रयोगों या रूपों की कल्पना को ऊह कहा गया है। नए रूपों की कल्पना के अवसर पर अवैयाकरण गलती कर बैठता है। गच्छति को देखकर गच्छिष्यति जैसे रूपों की गलत कल्पना न हो, अग्नये स्वाहा की तरह सूर्यये स्वाहा का ऊह न हो, इसके लिए व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है।

भाषा के ज्ञान के लिए व्याकरण सबसे छोटा, सबसे सरल और सबसे सुलझा हुआ साधन है। व्याकरण वह शक्ति देता है जिसके कारण

सारे श्रुत और अश्रुत शब्दों का, पठित और अपठित वाङ्मय का रहस्य अल्प काल में सामने आ जाता है। इसलिए कहा गया है –

उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचम् उत त्वः श्रृण्वन्न शृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं विसस्रे ....। वाङ्. नो वृणुयादात्मानमित्यध्येयं
व्याकरणम्।

(कुछ ऐसे भी विद्वान् हैं जो वाणी को देखकर भी उसे नहीं देख पाते हैं, कुछ उसे सुनकर भी नहीं सुन पाते, परन्तु एक ऐसा भी विद्वान् है; जिसे वाणी अपना शरीर समर्पित कर देती है, जिसके निकट अपना सारा रहस्य खोल देती है।) पतञ्जलि ने बताया है कि इस श्रुति के पूर्वार्द्ध में अवैयाकरणों की ओर संकेत है और उत्तरार्द्ध में वर्णित विद्वान् वैयाकरण है। व्याकरण के अध्ययन से तत्सम्बद्ध भाषा में लिखित सारे शास्त्रों के रहस्य को समझने की अपूर्व शक्ति प्राप्त होने के कारण ही आनन्दवर्धनाचार्य ने वैयाकरण को प्रथम कोटि का विद्वान् माना है--

प्रथमे हि विद्वांसो वैयाकरणाः।

आजकल बिना व्याकरण पढ़ाए व्यवहार के द्वारा भाषा सिखाने की बात भी की जाती है। व्यवहार को शब्दार्थज्ञान का एक साधन वैयाकरण भी मानते हैं जैसा कि निम्नलिखित श्लोक से प्रकट होता है –

शक्तिग्रहं व्याकरणोपमानकोशाप्तवाक्याद् व्यवहारतश्च।
वाक्यस्य शेषाद् विवृतेर्वदन्ति सान्निध्यतः सिद्धपदस्य वृद्धाः॥

व्यवहार के द्वारा बोल-चाल में व्यवहृत और समाज में प्रचलित भाषा के शब्दों का ही ज्ञान कराना सम्भव है, और वह भी एक सीमा तक ही। अनन्त विचारों और भावों को अभिव्यक्त करने के लिए जिस प्रकार की भाषाओं और जैसे-जैसे शब्दरूपों की आवश्यकता होगी, उन सबको पहले से जानना अन्य प्रकार से संभव नहीं है। इसलिए जब प्रचलित भाषा के भी भावानुसार भविष्य में प्रयुक्त होने वाले रूपों को नियमित करने तथा उन्हें बोधगम्य बनाए रखने के लिए व्याकरण की आवश्यकता है, तब संस्कृत जैसी भाषाओं के ज्ञान के लिए जिनका व्यवहार आज विचार विनिमय के लिए प्रायः नहीं होता, व्याकरण का

प्रधान साधन होना स्वाभाविक ही है। केवल व्यवहार द्वारा प्राप्त संस्कृत ज्ञान हमें शास्त्रों के रहस्य तक नहीं पहुँचा पाएगा । आज संस्कृत सीखने की आवश्यकता इसलिए है कि हम इस भाषा में लिखित साहित्य की अतुल ज्ञानराशि को समझ सकें, वेदों, ब्राह्मण-ग्रन्थों, उपनिषद्, रामायण, महाभारत और गीता जैसे ग्रन्थों के रहस्यों से अवगत हो सकें। इस प्रयोजन की सिद्धि के लिए संस्कृत के जिस ठोस ज्ञान की अपेक्षा है, वह व्याकरण के समुचित अध्ययन से ही हो सकता है।

संस्कृत के मनीषी इस बात के लिए सदैव सतर्क रहें हैं कि अशुद्ध पदों का प्रयोग न हो, क्योंकि वे इष्ट अर्थ को न कहकर अनिष्ट का कारण बन जाते हैं। प्रसिद्ध श्लोक भी है–

दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा,
मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति,
यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ॥

❑ पाणिनीयशिक्षा, 52

इसलिए अनेक संदिग्ध शब्दों की अपेक्षा यदि एक ही शब्द का सही ज्ञान प्राप्त हो जाए तो उससे भी इष्टसिद्धि हो सकती है–

एकः शब्दः सम्यग्ज्ञातः सुष्ठु प्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति।

शब्दों का असंदिग्ध ज्ञान व्याकरण से ही संभव है। अवैयाकरण को शब्द की शुद्धि और शब्दार्थनिर्णय में पदे-पदे जो सन्देह सताता है, उससे वैयाकरण सर्वथा मुक्त होता है । धनवान् शुद्ध है या धनमान्, बुद्धिमती शुद्ध है या बुद्धिवती इस प्रकार के उपस्थित सन्देह को मिटाने का कोई ठोस आधार अवैयाकरण के पास नहीं होता है। इसी तरह 'क्रेय' 'क्रय्य ' के बीच के अर्थभेद को अवैयाकरण नहीं समझ पाता है। भर्तृहरि ने वाक्यपदीय में लिखा है–

साधुत्वज्ञानविषया सैषा व्याकरणस्मृतिः।

अर्थात् व्याकरण भाषा के शुद्ध और अशुद्ध रूपों का ज्ञान कराता है। इसलिए किसी भाषा के सही ज्ञान के लिए व्याकरण का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। किसी ने ठीक ही कहा है –

यद्यपि बहु नाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम्
स्वजनः श्वजनो मा भूत् सकलं शकलं सकृच्छकृत्।।

संस्कृत व्याकरण की परम्परा

संस्कृत व्याकरण की परम्परा उतनी ही प्राचीन है, जितनी कि वैदिक संहिता । तैत्तिरीय संहिता में उल्लेख मिलता है कि अति प्राचीन काल में देवताओं के अनुरोध पर इन्द्र ने संस्कृत भाषा का सबसे पहला व्याकरण रचा--

वाग्वै पराच्यव्याकृतावदत्ते देवा इन्द्रमब्रुवन्निमां नो वाचं व्याकुर्विति तामिन्द्रो मध्यतोऽवक्रम्य व्याकरोत्तस्मादियं व्याकृता वागुद्यते।

❑ तै0 सं0 6. 4. 7

ऐन्द्र-व्याकरण बहुत विस्तृत था। महाभारत के टीकाकार ने इसे समुद्र तथा इसकी तुलना में पाणिनि-व्याकरण को 'गोष्पद' (गाय के खुर का चिह्न) कहा है--

यान्युज्जहार माहेन्द्राद् व्यासो व्याकरणार्णवात्।
पदरत्नानि किं तानि सन्ति पाणिनि - गोष्पदे।।

पतञ्जलि के **महाभाष्य** से संकेत मिलता है कि इन्द्र से पहले भी व्याकरण-शास्त्र का अस्तित्व था। पतञ्जलि ने महाभाष्य में लिखा है कि इन्द्र ने बृहस्पति से व्याकरण विद्या पढ़ी थी –

बृहस्पतिरिन्द्राय दिव्यं वर्षसहस्रं प्रतिपदोक्तानां शब्दानां शब्दपारायणं प्रोवाच नान्तं जगाम।

❑ महाभाष्य पस्पशाह्निक

ऐन्द्र-व्याकरण की अविच्छिन्न परम्परा का उल्लेख **ऋक्तंत्र** में इस प्रकार मिलता है –

ब्रह्मा बृहस्पतये प्रोवाच, बृहस्पतिरिन्द्राय, इन्द्रो भरद्वाजाय, भरद्वाज ऋषिभ्यः, ऋषयो ब्राह्मणेभ्यः।

❑ ऋक्तंत्र 1.4

इससे प्रतीत होता है कि **ऐन्द्र-सम्प्रदाय** व्याकरण का एक प्रसिद्ध सम्प्रदाय था। इसके समकक्ष व्याकरणशास्त्र का एक दूसरा **माहेश्वर-सम्प्रदाय** था जिसके प्रवर्तक महेश्वर थे। पाणिनि को अ इ उ ण् आदि चौदह प्रत्याहार सूत्र महेश्वर से ही प्राप्त हुए थे जिसकी सुदृढ़ आधारशिला पर उन्होंने व्याकरण का भव्य प्रासाद खड़ा किया।

प्राचीन व्याकरणों में आज पाणिनीय व्याकरण ही सुरक्षित और प्रचलित है। यह अपने पीछे एक सुदीर्घ परम्परा को प्रकट करता है। अष्टाध्यायी में आपिशलि आदि दस वैयाकरणों के नामों का उल्लेख भी है। पाणिनि उस परम्परा के अन्तिम लेखक थे, जिन्होंने अपने से पूर्ववर्ती सभी वैयाकरणों के ग्राह्य तत्त्वों को अपनाया। उनके विचारों और विवेचनों को क्रमिक, तार्किक, व्यवस्थित एवं सूत्र रूप देने में पाणिनि को अभूतपूर्व सफलता मिली। उनका व्याकरण इतना वैज्ञानिक, संक्षिप्त, व्यापक एवं लोकप्रिय बना कि पूर्ववर्ती व्याकरणों का अस्तित्व भी न रहा, सदियों के बाद आज भी इनकी बराबरी करने वाला कोई दूसरा व्याकरण किसी भी भाषा में नहीं बन सका है।

पाणिनि का समय ई0 पू0 सप्तम और ई0 पू0 पञ्चम शताब्दी के बीच माना जाता है। इस विषय में विभिन्न मत हैं । ये उत्तर पश्चिम भारत में स्थित शालातुर गाँव के निवासी थे। महाभाष्य के अनुसार इनकी माता का नाम दाक्षी था।[1] ये उपवर्ष या वर्ष आचार्य के शिष्य थे । किम्वदन्ती के अनुसार इनकी मृत्यु व्याघ्र या सिंह[2] के आक्रमण द्वारा त्रयोदशी तिथि को हुई थी।

कहा जाता है कि प्रारम्भ में पाणिनि मन्दबुद्धि थे, किन्तु उन्होंने तपस्या की जिससे प्रसन्न होकर महेश्वर ने उन्हें विलक्षण बुद्धि दी तथा चौदह माहेश्वर सूत्रों का उपदेश दिया।[3] इसके आधार पर प्रत्याहार आदि का आश्रयण कर पाणिनि ने अत्यंत संक्षिप्त शैली में विशाल संस्कृत भाषा को नियमित करने वाला सुदृढ़ व्याकरण लिखा जिससे वे सदा के लिए अमर

---

1. सर्वे सर्वपदादेशा दाक्षीपुत्रस्य पाणिनेः। ❑ **महाभाष्य**
2. सिंहो (व्याघ्रो) व्याकरणस्य कर्तुरहरत् प्राणान् प्रियान् पाणिनेः। ❑ **पञ्चतन्त्र**
3. नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपञ्चवारम्।
उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्।।

हो गए। इनका व्याकरण आठ अध्यायों में विभाजित है। इस कारण इसका नाम अष्टाध्यायी है। प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद हैं। सम्पूर्ण ग्रन्थ में लगभग चार हजार सूत्र हैं –

चतुस्सहस्त्री सूत्राणां पञ्चसूत्री विवर्जिता।
अष्टाध्यायी पाणिनीया सूत्रैर्माहेश्वरैः सह[1] ।।

सारे सूत्र अध्याय, पाद और सूत्राङ्कों में विभक्त हैं। पहले अध्याय में प्रायः व्याकरण संबंधी संज्ञाओं तथा परिभाषाओं का विवेचन है। दूसरे अध्याय में समास और कारक के नियम वर्णित हैं । तीसरे तथा आठवें अध्यायों में कृदन्त प्रकरण है। चौथे तथा पाँचवें अध्यायों में स्त्री-प्रत्यय और तद्धित का विवेचन है। छठे तथा सातवें अध्यायों में सन्धि, आदेश और स्वर- प्रक्रिया से संबंधित नियम हैं । पाणिनि के सूत्र अल्पाक्षर, किन्तु विस्तृत अर्थ वाले हैं। इनका एक वर्ण भी निरर्थक नहीं है ।

पाणिनि की परम्परा में दूसरे प्रसिद्ध वैयाकरण हैं कात्यायन जिन्हें वररुचि भी कहते हैं । इनका समय ई0 पू0 400 से ई0 पू0 300 के बीच माना जाता है। ये दाक्षिणात्य थे। पाणिनि के लगभग 1250 सूत्रों की इन्होंने आलोचनात्मक व्याख्या की है जो वार्तिक के नाम से प्रसिद्ध हैं । वार्तिकों की संख्या प्रायः चार हजार है। इनके द्वारा कहीं तो इन्होंने पाणिनि की कमी को पूरा करने की कोशिश की है, कहीं उनके सूत्रों में दोष दिखाया है और उनमें परिवर्तन एवं परिवर्धन सुझाए हैं। ऐसा करने में कई स्थलों पर उनसे पाणिनि को समझने में भूल भी हुई है जिनका परिमार्जन पतञ्जलि ने किया है।

पाणिनि के कीर्ति-स्तम्भ को सुदृढ़ बनाने वाले उस युग के महान् वैयाकरण पतञ्जलि हैं जिन्होंने अत्यंत प्राञ्जल और सशक्त भाषा में प्रश्नोत्तर-शैली में कात्यायन के वार्तिकों की समीक्षा करते हुए अष्टाध्यायी पर विशद भाष्य लिखा जो महाभाष्य के नाम से प्रसिद्ध है। पाणिनि का व्याकरण कात्यायन के वार्तिक और पतञ्जलि के महाभाष्य से पूर्ण परिनिष्ठित रूप को प्राप्त कर सका है । अतः अष्टाध्यायी, वार्तिक एवं महाभाष्य इन तीन ग्रन्थों को पाणिनीय व्याकरण का मूल प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है।

---

1. सिद्धान्तकौमुदी तत्त्वबोधिनी। ❑ पृ0 780

पतञ्जलि का समय ई0 पू0 दूसरी शताब्दी है। महाभाष्य के **पुष्यमित्रं याजयामः अरुणद् यवनः साकेतम् अरुणद् यवनो मध्यमिकाम्** इत्यादि उदाहरणों से प्रतीत होता है कि ये शुङ्गवंशीय राजा पुष्यमित्र के समय में, प्रायः उन्हीं के दरबार में विराजमान थे। उन्हीं के समय में मिलिन्द (मिनेण्डर) ने अयोध्या और मध्यमिका पर आक्रमण किया था। अनेक लौकिक और घरेलू दृष्टान्तों से परिपूर्ण होने के कारण पतञ्जलि का महाभाष्य अत्यंत सरल और रोचक है। इसकी प्रसादमयी शैली का प्रवाह समस्त संस्कृत साहित्य में अद्वितीय है। अष्टाध्यायी के अध्याय, पाद और सूत्रक्रम में ही पतञ्जलि ने अपने भाष्य का क्रम रखा है। इसका विभाजन आह्निकों[1] में है। प्रथम पस्पशाह्निक है जिसे व्याकरण शास्त्र की भूमिका कह सकते हैं। इसमें व्याकरण की आवश्यकता आदि विषयों पर गम्भीर विवेचन है। ग्रन्थ में वार्तिकों की समीक्षा के अतिरिक्त अन्य शङ्काओं का भी समाधान किया गया है। कात्यायन के उपयोगी वार्तिकों को उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया है तथा अनुपयुक्त आलोचनाओं का खण्डन किया है । विषय को सुगमता से प्रतिपादित करने के साथ-साथ पतञ्जलि ने तत्कालीन सामाजिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, भौगोलिक तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों का मनोरम परिचय भी अपने महाभाष्य में दिया है। व्याकरण का ज्ञान महाभाष्य के अध्ययन के बिना अधूरा रहता है। महाभाष्य पर कैयट की प्रदीप और नागेश की उद्योत टीकायें प्रसिद्ध हैं।

परवर्ती विद्वानों ने पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि को व्याकरण का त्रिमुनि (या मुनित्रय) संज्ञा से अभिहित कर तीनों के प्रति समान रूप से सम्मान प्रदर्शित किया है।

काशिका और न्यास

पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि ने जब मौलिक व्याकरण की विवेचना को चरम सीमा पर पहुँचा दिया और इससे आगे नियम-निर्माण की आवश्यकता नहीं रह गई, तब टीका-युग का प्रारम्भ हुआ। इन नियमों को बोधगम्य बनाने के लिए विविध टीका-ग्रन्थों का निर्माण चल पड़ा। इसी क्रम में सातवीं ई0 में जयादित्य और वामन ने अष्टाध्यायी पर एक टीका

1. एक दिन में जितना पढ़ाया जाता था या जितने का भाष्य होता था वह एक आह्निक होता था।

लिखी जो **काशिकावृत्ति** के नाम से प्रसिद्ध है। उदाहरण, प्रत्युदाहरण, गणपाठ आदि से पूर्ण यह वृत्ति अनेक प्राचीन वृत्तियों का सार है। काशिका पर जिनेन्द्रबुद्धि ने **न्यास** और हरदत्त ने **पदमञ्जरी** नामक उपटीकायें लिखीं।

प्रक्रिया ग्रन्थ

टीकाओं और उपटीकाओं के बाद पाणिनीय सूत्रों की नई व्यवस्था की ओर वैयाकरणों का ध्यान गया। इस दिशा में पहला प्रयास धर्मकीर्ति ने **रूपावतार** लिख कर किया जिसमें अष्टाध्यायी के सूत्रों को विभिन्न प्रकरणों में विभक्त कर सम्पादित किया गया है। इसके बाद सन् 1350 ई0 में विमल सरस्वती ने **रूपमाला** और 1400 ई0 में पं0 रामचन्द्र ने **प्रक्रियाकौमुदी** नामक ग्रन्थ की रचना की। संस्कृत व्याकरण को सरलता से पढ़ाया ज़ा सके, इस उद्देश्य से इसमें पाणिनि के सूत्रों को नए ढंग से व्यवस्थित किया गया है। 1630 ई0 के लगभग भट्टोजिदीक्षित ने **सिद्धान्तकौमुदी** की रचना की जो सर्वाधिक लोकप्रिय हुई। आज यह ग्रन्थ व्याकरण पढ़ने-पढ़ाने का मुख्य साधन है। सिद्धान्तकौमुदी पर स्वयं भट्टोजिदीक्षित ने **प्रौढ़मनोरमा** नाम की टीका लिखी जिस पर पण्डितराज जगन्नाथ ने **मनोरमाकुचमर्दिनी** नाम से व्याख्या प्रस्तुत की। नागेशभट्ट का **लघुशब्देन्दुशेखर** सिद्धान्त कौमुदी पर एक प्रौढ़ व्याख्या है। सिद्धान्तकौमुदी की दो अन्य प्रसिद्ध टीकायें हैं - **तत्त्वबोधिनी** और **बालमनोरमा** जो बहुत ही उपयोगी हैं। छात्रों के अध्ययन की दृष्टि से आचार्य वरदराज ने **सिद्धान्तकौमुदी** का संक्षेप करके **लघुसिद्धान्तकौमुदी** एवं **मध्यसिद्धान्तकौमुदी** की रचना की जो व्याकरण के प्रारम्भिक छात्रों के लिए परम उपयोगी ग्रन्थ हैं। व्याकरण के अध्ययन को सरल बनाने के नाम पर आधुनिक युग में भी अनेक रूपज्ञानोपयोगी ग्रन्थ लिखे गए हैं, किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि अष्टाध्यायी की अपेक्षा ये सारे प्रयास प्रायः अधिक कठिन हैं।

संस्कृत व्याकरण के दो पक्ष हैं — व्युत्पत्ति पक्ष और दार्शनिक पक्ष। उपर्युक्त सभी ग्रन्थ प्रायः व्युत्पत्ति पक्ष को लक्ष्य में रखकर लिखे गये हैं। व्याकरण के दार्शनिक पक्ष को लेकर लिखे ग्रन्थों में प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं — भर्तृहरि का **वाक्यपदीय**, कौण्डभट्ट का **वैयाकरणभूषण**

एवं **वैयाकरणभूषणसार** तथा नागेशभट्ट की **लघुमञ्जूषा**, **परमलघुमञ्जूषा** और **स्फोटवाद** ।

प्रस्तुत पुस्तक

प्रस्तुत पुस्तक सन् 1979 में प्रकाशित "**व्याकरणसौरभम्**" का संशोधित संस्करण है । इस पुस्तक में कुल दस अध्याय हैं जिनमें क्रमशः वर्णविचार, सन्धि, शब्दरूप, धातुरूप, प्रत्यय, अव्यय, कारक, समास, छन्द एवं अलङ्कारों का विवेचन हुआ है। प्रत्येक अध्याय या विषय की समाप्ति पर अभ्यास के लिए विषयनिष्ठ और वस्तुपरक दोनों प्रकार के प्रश्न दिये गये हैं। ये प्रश्न पठित विषय को समझने तथा स्मरण रखने में सहायक होंगे। वस्तुपरक प्रश्न सन्देह की स्थिति उत्पन्न करके बुद्धि को शीघ्र निर्णय करने की क्षमता प्रदान करते हैं। ऐसे प्रश्नों की अधिकाधिक विधाओं का निवेश पूरी पुस्तक में हुआ है। विषय-वस्तु का प्रतिपादन सरल रूप में करने का प्रयास किया गया है। प्रतिपादित नियमों के समर्थन में पाणिनि के सूत्रों एवं अन्य प्रामाणिक ग्रन्थों के वाक्यों को यथास्थान पादटिप्पणी में उद्धृत किया गया है जिससे बी0 ए0 आदि कक्षाओं में लघुसिद्धान्तकौमुदी या सिद्धान्तकौमुदी जैसे ग्रन्थ पढ़ने वाले छात्रों के लिए यह पुस्तक सोपान स्वरूप सिद्ध हो सके।

विषय-वस्तु को समझाते समय यथासंभव पारिभाषिक शब्दों से बचने का प्रयास हुआ है ताकि सरलता बनी रहे। तथापि सन्दर्भसूत्रों में एवं अप्रत्यक्ष रूप से पुस्तक में भी कतिपय ऐसे शब्द आ गये हैं जो व्याख्या की अपेक्षा रखते हैं। अतः प्रमुख पारिभाषिक शब्दों के अर्थ परिशिष्ट III में दिये गये हैं।

संशोधित संस्करण की विशेषताएँ–

- प्रस्तुत संस्करण में परिषद् द्वारा सन् 2001 में विकसित संस्कृत के नवीन पाठ्यक्रम (कक्षा 11-12) में निर्धारित व्याकरण, छन्द एवम् अलङ्कार के अंशों का समुचित समावेश किया गया है ।
- पाठ्यक्रम में किए गए परिवर्तन के अनुसार पाठ्यपुस्तक में यथास्थान परिवर्तन एवं संशोधन किए गये हैं, जैसे – सन्धि-प्रकरण में णत्वविधान एवं षत्वविधान जोड़े गये हैं ।

- शब्दरूप एवं धातुरूप के अध्यायों में नवीन पाठ्यक्रम में निर्धारित सभी शब्दों एवं धातुओं के रूप दिए गये हैं जिससे छात्रों को पाठ्यक्रम के अनुसार इन अंशों को हृदयङ्गम करने में सुविधा हो सके ।
- अव्यय-प्रकरण में पाठ्यक्रम में निर्धारित नए अव्यय-शब्दों का समावेश कर उनके अर्थ एवं वाक्यप्रयोग दिये गये हैं ।
- छन्द-प्रकरण में नए पाठ्यक्रम में निर्धारित मन्दाक्रान्ता छन्द (लक्षण एवम् उदाहरण सहित) जोड़ दिया गया है ।
- अलङ्कार-प्रकरण में नवीन पाठ्यक्रम में जोड़े गये तीन अलङ्कारों – अतिशयोक्ति, व्याजस्तुति एवम् अप्रस्तुतप्रशंसा का समावेश किया गया है ।
- पुस्तक में प्रयुक्त सङ्केताक्षरों की सूची अकारादिक्रम से (विवरण सहित) बनाकर पुस्तक के प्रारम्भ में जोड़ दी गयी है जिससे छात्रों को सङ्केताक्षरों को समझने में सुविधा हो सके ।

यद्यपि पुस्तक में व्याकरण, छन्द एवं अलङ्कार–तीनों का विवेचन हुआ है, किन्तु इनमें प्रमुख विवेच्य विषय व्याकरण ही है जिसका वर्णन आठ अध्यायों में हुआ है । शेष दो अध्यायों में प्रमुख छन्द एवं अलङ्कारों का संक्षिप्त परिचय छात्रों की सुविधा के लिए दिया गया है । अतएव *प्राधान्येन व्यपदेशाः भवन्ति* के आधार पर ग्रन्थ का नाम **व्याकरणसौरभम्** रखा गया है। आद्योपान्त यह लक्ष्य रहा है कि पुस्तक छात्रोपयोगी हो। अपने उद्देश्य में यह कहाँ तक सफल हुई है इसका निर्णय विज्ञ अध्यापक, विद्वान् और कोमल मति वाले छात्र ही करेंगे।

सञ्चाय्य शाब्दिकोद्यानात् प्रस्तुतोऽयं सुगुच्छकः।
सौरभाकृष्टबालानां भवतात् सुमनोहरः ॥

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं । जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा । क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा ? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा ? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है ?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है ।

मो॰ क॰ गांधी

प्रथम अध्याय

वर्ण-विचार

संस्कृत वर्णमाला (Sanskrit Alphabets)

भाषा की सबसे छोटी ध्वन्यात्मक इकाई जिसका खण्ड न हो सके वर्ण कहलाती है। संस्कृत भाषा में निम्नलिखित वर्ण[1] हैं –

अ, इ, उ, ऋ, लृ आ, ई, ऊ, ॠ ए, ऐ, ओ, औ	स्वर (Vowels)

---

[1] पाणिनि ने सम्पूर्ण अक्षर-समाम्नाय (वर्ण-समुदाय) को निम्नलिखित क्रम में सूत्रबद्ध किया है –

अ, इ, उ, (ण्) । ऋ, लृ (क्)। ए, ओ, (ङ्) । ऐ, औ (च्) ।	अच्
ह, य, व, र (ट्) । ल (ण्) । ञ, म, ङ, ण, न (म्) । झ, भ (ञ्) । घ, ढ, ध, (ष्) । ज, ब, ग, ड, द (श्) । ख, फ, छ, ठ, थ, च, ट, त, (व्) । क, प (य्) । श, ष, स (र्) । ह (ल्) ।	हल्

क्, ख्, ग्, घ्, ङ् (कवर्ग) च्, छ्, ज्, झ्, ञ् (चवर्ग) ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण् (टवर्ग) त्, थ्, द्, ध्, न् (तवर्ग) प्, फ्, ब्, भ्, म् (पवर्ग) य्, र्, ल्, व् (अन्तःस्थ) श्, ष्, स्, ह् (ऊष्म)	व्यञ्जन (Consonants)

वर्णों के भेद

वर्ण मुख्यतया दो प्रकार के होते हैं- स्वर (Vowel) एवं व्यञ्जन (Consonant) । जिनका उच्चारण बिना किसी अन्य वर्ण की सहायता के होता है, वे स्वर कहलाते हैं[1],जैसे – अ, आ, इ, ई, इत्यादि ।

जो वर्ण किसी स्वर की सहायता से ही बोले जाते हैं वे व्यञ्जन कहलाते हैं, जैसे – क्, ख्, ग् आदि। इनका उच्चारण वर्णमाला में 'अ' की सहायता से किया जाता है। इनके स्वतन्त्र उच्चारण प्रायः संभव नहीं होते।

स्वर भेद

स्वर के तीन भेद हैं – ह्रस्व, दीर्घ एवं प्लुत।[2]

1. **ह्रस्व स्वर** – जिसके उच्चारण में एक मात्रा का समय लगे वह ह्रस्व स्वर (Short Vowel) कहलाता है। ये पाँच हैं –
   अ, इ, उ, ऋ, लृ।
   इन्हें **मूल स्वर** भी कहते हैं।
2. **दीर्घ स्वर** – जिस स्वर के उच्चारण में दो मात्राओं का समय लगे वह दीर्घ स्वर (Long Vowel) कहलाता है। ये आठ हैं –
   आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ।
   इनमें अन्तिम चार सन्ध्यक्षर या संयुक्त स्वर कहलाते हैं, क्योंकि ये दो स्वर वर्णों की सन्धि से बने हैं।

---

1. "स्वयं राजन्त इति स्वरा अन्वग्भवति व्यञ्जनम्"। ❑ **महाभाष्य 1.2.29**
2. "एकमात्रो भवेद्ध्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते ।
   त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चार्धमात्रकम् ॥"

3. **प्लुत स्वर** – जिस स्वर के उच्चारण में तीन मात्राओं का समय लगे, वह प्लुत कहलाता है। कभी-कभी दूर से किसी व्यक्ति को पुकारते समय किसी स्वर की ध्वनि देर तक होती है, जैसे – एहि शारदे । इस प्रकार उच्चारण करने पर 'ए' **प्लुत स्वर** कहलाएगा। ऐसी स्थिति में कोई भी स्वर प्लुत हो सकता है।

उपर्युक्त प्रत्येक स्वर के **उदात्त, अनुदात्त** और **स्वरित** – ये तीन भेद हो सकते हैं। अपने निर्धारित स्थान के ऊपरी भाग से उच्चरित होने पर कोई स्वर उदात्त, निचले भाग से उच्चरित होने पर अनुदात्त और दोनों भागों से सम्मिलित होकर उच्चरित होने पर स्वरित होते हैं।[1] उदाहरण के लिए 'अ' का उच्चारण स्थान कण्ठ है। इसके ऊपरी भाग से उच्चरित होने पर यह उदात्त, निचले भाग से उच्चरित होने पर अनुदात्त तथा दोनों भागों से उच्चरित होने पर स्वरित होगा।

उदात्त, अनुदात्त और स्वरित का प्रयोग केवल वैदिक संस्कृत में मिलता है जहाँ इनका संकेत निम्नलिखित चिह्नों द्वारा किया जाता है-

उदात्त – कोई चिह्न नहीं, जैसे – अ, इ आदि।

अनुदात्त – नीचे पड़ी रेखा, जैसे – अ, इ आदि।

स्वरित – ऊपर खड़ी रेखा, जैसे – अ, इ आदि।

उदाहरण –

सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्विना-
वधीतमस्तु मा विद्विषावहै। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

इन सभी प्रकार के स्वरों के पुनः दो भेद हो सकते हैं –

अनुनासिक – जिसके उच्चारण में नासिका की सहायता ली जाए, जैसे – अँ, एँ।

अननुनासिक- जिसके उच्चारण में नासिका की सहायता न ली जाए, जैसे – अ, ए आदि।

इन्हें क्रमशः **सानुनासिक** तथा **निरनुनासिक** स्वर भी कहते हैं।

---

[1] उच्चैरुदात्तः। नीचैरनुदात्तः। समाहारः स्वरितः। ❑ **पा. 1.2. 29, 30, 31**

व्यञ्जन भेद

व्यञ्जन वर्णों के निम्नलिखित भेद हैं–

1. **स्पर्श** (Plosive) – उपरिनिर्दिष्ट क् से लेकर म् तक के पच्चीस वर्ण **स्पर्श** कहलाते हैं[1], क्योंकि इनके उच्चारण के समय जिह्वा मुख के विभिन्न स्थानों का स्पर्श करती है।
2. **अन्तःस्थ** (Semi-Vowel) – य्, र्, ल्, व् – इन चार वर्णों को **अन्तःस्थ** कहा जाता है।[2] इन्हें **अर्द्धस्वर** (Semi-Vowel) भी कहते हैं। उच्चारण तथा प्रयोग की दृष्टि से ये स्वर एवं व्यञ्जन के मध्य के हैं।
3. **ऊष्म** (Fricative) – श्, ष्, स्, ह् **ऊष्म** कहलाते हैं।[3] इनके उच्चारण के समय मुख में जिह्वा के घर्षण से ऊष्मा उत्पन्न होती है।
4. **अयोगवाह** – इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे व्यञ्जन हैं जो स्वर के अनन्तर ही उच्चरित होते हैं। वे **अयोगवाह**[4] कहलाते हैं। वे हैं – **अनुस्वार**[5] (ं), और **विसर्ग** अथवा **विसर्जनीय** (ः), **जिह्वामूलीय** (≍) और **उपध्मानीय** (≍)।
   1. जिह्वामूलीय (≍) केवल क्, ख् से पहले उच्चरित होता है, जैसे – सुरेश (≍) करोति । शिशु (≍) खादति ।
   2. उपध्मानीय (≍) जो केवल प्, फ् से पहले उच्चरित होता है, जैसे – पाचक (≍) पचति । वृक्ष (≍) फलति । अयोगवाह मूलभूत वर्ण नहीं हैं।

   जिह्वामूलीय तथा उपध्मानीय का लेखन अर्द्धविसर्ग के समान होता है।[6]

---

1. कादयो मावसानाः स्पर्शाः ।
2. यणोऽन्तःस्थाः ।
3. शल ऊष्माणः ।
4. अयोगाश्च ते वाहाश्च अयोगवाहाः
5. अनुस्वार को स्वर भी माना जाता है ।
   अनुस्वारो व्यञ्जनं वा स्वरो वा । ❑ **ऋ. प्रा. 24.22**
6. ≍ 'क' ≍ ख इति कखाभ्यां प्रागर्धविसर्गसदृशो जिह्वामूलीयः
   ≍ 'प' ≍ फ इति पफाभ्यां प्रागर्धविसर्गसदृश उपध्मानीयः

   ❑ ल. सि. कौ. सू. 10 वृत्ति

संयुक्त व्यञ्जन

संयुक्त स्वर के समान **संयुक्त व्यञ्जन** भी होते हैं। हिंदी वर्णमाला में तीन **संयुक्त व्यञ्जन** प्रचलित हैं–

क्ष् (क् + ष्) । त्र् (त् + र्) । ज्ञ् (ज् + ञ्) ।

वस्तुतः ये दो व्यञ्जन वर्णों के संयोगमात्र हैं, कोई स्वतन्त्र व्यञ्जन वर्ण नहीं ।

उच्चारण-स्थान (Points of Articulation)

मनुष्य के फेफड़े से निःश्वास रूप में छोड़ी गई हवा जब प्रयत्न-विशेष से जिह्वा, तालु आदि मुख के स्थानों से सम्पर्क करती हुई निःसृत होती है, तब वर्ण (या ध्वनि) विशेष का उच्चारण होता है। प्रत्येक वर्ण का उच्चारण-स्थान और प्रयत्न निश्चित हैं। उपरिनिर्दिष्ट संस्कृत वर्णों के उच्चारण-स्थान[1] इस प्रकार हैं –

वर्ण	उच्चारण-स्थान	वर्ण का नाम
अ, आ, कवर्ग, ह्, विसर्ग (:)	कण्ठ	कण्ठ्य
इ, ई, चवर्ग, य्, श्	तालु	तालव्य,
ऋ, ॠ, टवर्ग, र्, ष्	मूर्धा	मूर्धन्य
ऌ, तवर्ग, ल्, स्	दन्त	दन्त्य
उ, ऊ, पवर्ग, उपध्मानीय (≍)	ओष्ठ	ओष्ठ्य
ङ्, ञ्, ण्, न्, म्	नासिका एवं कण्ठादि	अनुनासिक
ए, ऐ	कण्ठ और तालु	कण्ठतालव्य
ओ, औ	कण्ठ और ओष्ठ	कण्ठोष्ठ्य
व्	दन्त और ओष्ठ	दन्तोष्ठ्य
जिह्वामूलीय (≍)	जिह्वामूल	जिह्वामूलीय
अनुस्वार (ं)	नासिका	नासिक्य

1. अ-कु-ह-विसर्जनीयानां कण्ठः । इ-चु-य-शानां तालु । ऋ-टु-र-षाणां मूर्धा । ऌ-तु-ल-सानां दन्ताः । उपूपध्मानीयानामोष्ठौ । ञ-म-ङ-ण-नानां नासिका च । एदैतोः कण्ठतालु। ओदौतोः कण्ठोष्ठम् । वकारस्य दन्तोष्ठम् । जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम्। नासिकाऽनुस्वारस्य।
❑ ल.सि.कौ. सू. 10 वृत्ति

प्रयत्न (Manner of Articulation)

मनुष्य जब कुछ कहने की इच्छा करता है तो अपने फेफड़े से निःश्वास रूप में छोड़ी गई हवा को अपने संकल्प के अनुसार प्रेरित करता है जिससे वह (हवा) काकलक (Larynx) तथा उससे आगे मुख विवर (Oral Cavity) एवं नासिका विवर (Nasal Cavity) से विविध रूपों में गुजरती हुई स्थान-विशेष के सम्पर्क से वर्ण-विशेष का उच्चारण करती है। इस समस्त क्रिया का नाम **यत्न** (प्रयत्न) है।

इसके दो[1] भेद हैं – आभ्यन्तर और बाह्य ।

आभ्यन्तर प्रयत्न

आभ्यन्तर प्रयत्न वह प्रयत्न है जिसका कार्य मुख के भीतर (ओष्ठ से लेकर काकलक से पहले) होता है । इसके पाँच भेद हैं[2] –

स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट, ईषद्विवृत, विवृत और संवृत। वर्णोत्पत्ति से पूर्व जब जिह्वा के अग्र (Tip of the tongue) (आदि) भाग तालु आदि स्थानों का पूर्णतया स्पर्श करते हैं, तब वह प्रयत्न **स्पृष्ट** कहलाता है और जब पास पहुँच कर अल्प स्पर्श करते हैं, तब वह **ईषत्स्पृष्ट** कहलाता है । किसी वर्ण विशेष के उच्चारण में जिह्वा जब कम ऊपर उठती है तो मुख विवर खुला रहता है। जब यह थोड़ा खुला रहता है, तब **ईषद्विवृत** और जब पूरा खुला रहता है, तब **विवृत** प्रयत्न होता है। जब जिह्वा की स्थिति ऊपर उठी होती है तब मुखविवर बहुत पतला हो जाता है। यह **संवृत** प्रयत्न कहलाता है। विभिन्न वर्णों के आभ्यन्तर[3] प्रयत्न इस प्रकार हैं –

---

1. यत्नो द्विधा – आभ्यन्तरो बाह्यश्च। ❑ **ल0 सि0 कौ0 सू0 10 वृत्ति**
2. आद्यः पञ्चधा–स्पृष्टेषत्स्पृष्टेषद्विवृतविवृतसंवृतभेदात्। तत्र स्पृष्टं प्रयत्नं स्पर्शानाम् ईषत्स्पृष्टमन्तःस्थानाम्। ईषद्विवृतमूष्मणाम्। विवृतं स्वराणाम् ह्रस्वस्यावर्णस्य प्रयोगे संवृतम्। प्रक्रियादशायां तु विवृतमेव। ❑ **ल0 सि0 कौ0 सू0 10 वृत्ति**
3. कुछ लोग ऊष्म वर्ण और स्वर वर्ण दोनों को विवृत कहकर आभ्यन्तर प्रयत्न के कुल चार ही भेद मानते हैं।

स्पृष्ट	**ईषत्स्पृष्ट**	**ईषद्विवृत**	**विवृत**	**संवृत**
स्पर्श वर्ण	अन्तःस्थ वर्ण	ऊष्म वर्ण	स्वर वर्ण	अ[1]
(क् से लेकर म्				(प्रयोग दशा में)
तक के वर्ण)	(य्, र्, ल्, व्)	(श्, ष्, स्, ह्)		

बाह्य प्रयत्न

वर्णोच्चारण का वह यत्न जिसका कार्य मुख (ओष्ठ से लेकर काकलक) के बाहर होता है, बाह्य प्रयत्न कहलाता है। इसके ग्यारह भेद[2] बताए गए हैं –

विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित[3] ।

काकलक (Larynx) के मुँह दो स्वरतन्त्रियाँ (Vocal/chords) हैं जो रबर की तरह फैलने और सिकुड़ने वाले दो परदे हैं इनका विवार (खुलना) और संवार (सटना, बन्द होना) फेफड़े से निकले हुए वायु को पृथक्-पृथक् रूप देता है। **संवार** की अवस्था में वायु स्वरतन्त्रियों के कम्पन के कारण नादवान् होकर और **विवार** की अवस्था में श्वास रूप में मुखविवर में पहुँचती है। काकलक से आए नादवान् वायु से उच्चरित वर्ण **घोष** कहलाते हैं और केवल श्वास रूप में आए वायु से उच्चरित वर्ण **अघोष** कहलाते हैं।

जिन वर्णों की उत्पत्ति में प्राणवायु (फेफड़े से निःसृत वायु) अल्प मात्रा में होती है, वे **अल्पप्राण** कहलाते हैं। जिन वर्णों की उत्पत्ति में प्राणवायु अधिक मात्रा में होती है, वे **महाप्राण** कहलाते हैं ।

---

1. व्याकरण में (प्रक्रिया हेतु) अ को विवृत माना गया है, किन्तु व्यवहार में अ संवृत है।
2. बाह्यप्रयत्नस्त्वेकादशधा-विवारः संवारः श्वासो नादो घोषोऽघोषोऽल्पप्राणो महाप्राण उदात्तोऽनुदात्तःस्वरितश्चेति। ❑ **ल० सि० कौ० सू० 10 वृत्ति।**
3. महाभाष्यकार के मतानुसार बाह्य प्रयत्न आठ ही हैं (उदात्तादि तीन नहीं)।

विभिन्न वर्णों के बाह्य प्रयत्न[1] इस प्रकार हैं –

विवार, श्वास, अघोष	*संवार, नाद, घोष*	*अल्पप्राण*	*महाप्राण*	*उदात्त, अनुदात्त, स्वरित*
वर्गों के प्रथम, द्वितीय वर्ण एवं श्, ष्, स्	वर्गों के तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम वर्ण, अन्तःस्थ एवं ह्	वर्गों के प्रथम, तृतीय, पञ्चम वर्ण एवं अन्तःस्थ	वर्गों के द्वितीय, चतुर्थ वर्ण एवं ऊष्म	सभी स्वर वर्ण

अभ्यास

1. **स्वर एवं व्यञ्जन वर्णों में क्या अन्तर है ?**
2. **मूल स्वर कितने हैं,उनके नाम लिखें।**
3. **निम्नलिखित स्वर वर्णों में कौन ह्रस्व हैं और कौन दीर्घ हैं ?**
   आ, इ, ऊ, ऋ, लृ, ए, ऐ, ओ।
4. **संयुक्त स्वर कौन-कौन हैं, उनके नाम लिखें।**
5. **निम्नलिखित शीर्षक के अन्तर्गत कौन-कौन वर्ण आते हैं –**
   स्पर्श, अन्तःस्थ, ऊष्म।
6. **अयोगवाह किसे कहते हैं ?**
7. **निम्नलिखित संयुक्त-वर्ण किन-किन वर्णों के संयोग से बने हैं –**
   क्ष्, त्र्, ज्ञ् ।
8. **निम्नलिखित वर्णों के सामने उनका उच्चारण स्थान लिखें –**
   इ............................ ह्............................
   ण्............................ ऊ............................
   ब्............................ श्............................

1. खरो विवाराः श्वासा अघोषाश्च। हशः संवाराः नादाः घोषाश्च। वर्गाणां प्रथम-तृतीयपञ्चमा यणश्चाल्पप्राणाः वर्गाणां द्वितीय-चतुर्थौ शलश्च महाप्राणाः।

❑ ल0 सि0 कौ0 सू0 10 वृत्ति

ओ	व् ....
ष्	ऋ ....
द्	स् ....
लृ	च् ....
(.) (अनुस्वार)	ऐ ....
घ्	(:) (विसर्ग) ....

9. निम्नलिखित वर्णों में से जिस आभ्यन्तर प्रयत्न से जो वर्ण उच्चरित होते हैं उसके सामने उन वर्णों को लिखें –

अ, ई, त्, म्, य्, र्, ल्, व्, श्, ष्, स्, ह् ।

स्पृष्ट–

ईषत्स्पृष्ट–

ईषद्विवृत–

विवृत–

संवृत–

10. नीचे लिखे वर्णों को उपयुक्त प्रयत्नों के सामने लिखें –

(अ) ख्, ज्, ठ्, ण्, त्, प्, फ्, व्, ल्, श्, ह् ।

घोष –

अघोष –

(आ) क्, ध्, च्, ज्, झ्, ठ्, ण्, थ्, द्, घ्, प्, भ्, म्, ल्, व्, स्, ह्।

अल्पप्राण –

महाप्राण –

11. स्पर्श, अन्तःस्थ और ऊष्म - ये नाम क्यों रखे गये हैं ?

12. 'शुद्ध' शब्द का वर्णक्रम श् + उ + द् + ध् + अ है ; इसी प्रकार निम्नलिखित शब्दों के सामने उनका वर्णक्रम लिखिए –

(i) रिक्त

(ii) क्षत्रिय

(iii) आर्द्र

(iv) दुःख

(v) ज्ञान

13. निम्नलिखित युग्मों में से शुद्ध शब्दों को इस चिह्न (✓) से चिह्नित कीजिए –

आशीर्वाद/आर्शिवाद

विव्दान् /विद्वान्

ब्रह्म/ब्रम्ह

शब्द/शद्ब

यन्त/यत्न

द्वितीय अध्याय

परिचय

दो वर्णों की अत्यन्त समीपता (अर्थात् अव्यवहित उच्चारण) के कारण उनमें जो विकार (परिवर्तन) होता है, उसे **सन्धि** कहते हैं, जैसे – सुर + ईशः = सुरेशः । यहाँ अ + ई मिलकर ए हो गए हैं। यह परिवर्तन तीन प्रकार का होता है –

1. आदेश 2. लोप 3. आगम ।

1. **आदेश** – कभी दो वर्णों या एक वर्ण के स्थान में एक नया वर्ण (आदेश) आ जाता है, जैसे – सुर + ईशः = सुरेशः में अ + ई के स्थान पर 'ए' का आदेश। तथा यदि + अपि = यद्यपि में 'इ' के स्थान पर य् का आदेश ।
2. **लोप** – कभी दो वर्णों में से एक वर्ण का लोप हो जाता है, जैसे – बालकाः + हसन्ति = बालका हसन्ति में विसर्ग का लोप ।
3. **आगम** – कभी दो वर्णों के बीच एक तीसरा वर्ण (आगम) आ जाता है, जैसे – वृक्ष + छाया = वृक्षच्छाया में च् का आगम।

   सन्धि तोड़ने की क्रिया **सन्धि-विच्छेद** कहलाती है, जैसे – जगदीशः का विच्छेद होगा – जगत् + ईशः ।

सन्धि का क्षेत्र

एक पद में, उपसर्ग और धातु के बीच तथा समास में सन्धि करना अनिवार्य है । किन्तु वाक्य में सन्धि करना या न करना वक्ता की इच्छा पर निर्भर है। इस विषय में यह कारिका प्रसिद्ध है –

[1]संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः ।
नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते ॥

उदाहरण–

क. अनिवार्य – 1. पदगत सन्धि – बालकेन (बालक + इन)।
2. उपसर्ग और धातु (क्रिया) के बीच सन्धि – उपैति (उप + एति)।
3. समासगत सन्धि – सूर्योदयः (सूर्यस्य उदयः, सूर्य + उदयः)

ख. वैकल्पिक – वाक्य में पदों के बीच सन्धि –
सुरेशो ग्रामादागच्छति ।
अथवा, सुरेशः ग्रामात् आगच्छति ।

---

1. संहिता – परः सन्निकर्षः संहिता । ❑ **पा0 1.4.109**
वर्णों के व्यवधानरहित उच्चारण को संहिता कहते हैं, जैसे – र् + आ + म् + अ + : –ये वर्ण जब बिना किसी व्यवधान के उच्चरित होते हैं अर्थात् संहिता में होते हैं तब इनका स्वरूप रामः पद के रूप में प्रकट होता है । किसी पद के अन्दर, समास में तथा धातु और उपसर्ग के योग में संहिता अनिवार्य होती है । जब वक्ता को अभीष्ट होता है तब वाक्य में दो पदों के बीच आने वाले वर्णों (प्रथम पद के अन्तिम वर्ण और दूसरे पद के प्रथम वर्ण) में भी संहिता हो सकती है। संहिता होने पर ही सन्धि के नियम लागू होते हैं। स् + उ + र् + अ + ई + श् + अ + : (विसर्ग) इन वर्णों में संहिता के कारण अ + ई की सन्धि होकर सुरेशः पद उच्चरित होता है।

सन्धि के भेद

सन्धि मुख्यतः तीन प्रकार की होती है –

1. **स्वर सन्धि**–या अच् सन्धि अर्थात् स्वर + स्वर –
   जहाँ किसी स्वर वर्ण की दूसरे स्वर वर्ण के साथ सन्धि हो।
   जैसे– रमा + ईशः = रमेशः (आ = ई = ए)।
   यदि + अपि = यद्यपि (इ + अ + य)।
2. **व्यञ्जन सन्धि**–या हल् सन्धि – व्यञ्जन + व्यञ्जन या स्वर –
   जहाँ किसी व्यञ्जन वर्ण की किसी व्यञ्जन अथवा स्वर वर्ण के साथ सन्धि हो ।
   जैसे–सत् + जनः = सज्जनः (त् + ज् = ज्ज) ।
   वाक् + ईशः = वागीशः (क् + ई = गी)
3. **विसर्ग सन्धि**–विसर्ग + व्यञ्जन अथवा स्वर –
   जब विसर्ग की किसी व्यञ्जन अथवा स्वर के साथ सन्धि हो।
   जैसे – नमः + ते = नमस्ते (: + ते = स्ते) ।
   रामः + इच्छति = राम इच्छति (: + इ = इ)

I. स्वर सन्धि

स्वर सन्धि के प्रमुख भेद निम्नलिखित हैं –

1. दीर्घ सन्धि (आ, ई, ऊ, ॠ)

नियम ह्रस्व या दीर्घ अ, इ,उ, ऋ के बाद यदि क्रमशः ह्रस्व या दीर्घ अ, इ, उ, ऋ आए तो दोनों मिलकर दीर्घ (क्रमेण आ, ई, ऊ, ॠ) हो जाते हैं।[1]

उदाहरण–

(i) अ/आ + अ/आ = आ
परम + अर्थः = परमार्थः (अ + अ = आ)
देव + आलयः = देवालयः (अ + आ = आ)
विद्या + अभ्यासः = विद्याभ्यासः (आ + अ = आ)
विद्या + आलयः = विद्यालयः (आ + आ = आ)

---

1. अकः सवर्णे दीर्घः । ❑ पा0 6.1.101

(ii) इ /ई + इ /ई = ई
कवि + इन्द्रः = कवीन्द्रः (इ + इ = ई)
कवि + ईश्वरः = कवीश्वरः (इ + ई = ई)
मही + इन्द्रः = महीन्द्रः (ई + इ = ई)
लक्ष्मी + ईश्वरः = लक्ष्मीश्वरः (ई + ई = ई)

(iii) उ/ऊ + उ/ऊ = ऊ
सु + उक्तिः + सूक्तिः (उ + उ = ऊ)

(iv) ऋ + ऋ = ॠ
पितृ + ऋणम् = पितॄणम् (ऋ + ऋ = ॠ)

2. गुण सन्धि – (ए, ओ, अर्, अल्)

नियम – यदि अ/ आ के बाद इ/ई हो तो दोनों मिलकर ए, उ/ऊ हो तो दोनों मिलकर ओ, ऋ हो तो दोनों मिलकर अर् और ऌ हो तो अल् हो जाते हैं।[1]

उदाहरण–

(i) अ/आ + इ/ ई = ए
देव + इन्द्रः = देवेन्द्र (अ + इ = ए)
गण + ईशः = गणेशः (अ + ई = ए)
महा + इन्द्रः = महेन्द्रः (आ + इ = ए)
महा + ईशः = महेशः (आ + ई = ए)

(ii) अ/आ + उ/ऊ = ओ
सूर्य + उदयः = सूर्योदयः (अ + उ = ओ)
महा + उत्सवः = महोत्सवः (आ + उ = ओ)
एक + ऊनविंशतिः = एकोनविंशतिः (अ + ऊ = ओ)
महा + ऊर्मिः = महोर्मिः (आ + ऊ = ओ)

(iii) अ/आ + ऋ/ॠ = अर्
सप्त + ऋषयः = सप्तर्षयः (अ + ऋ = अर्)
महा + ऋषिः = महर्षिः (आ + ऋ = अर्)

---

1. आद् गुणः । ❑ पा० 6.1.87

(iv) अ/आ + लृ = अल्
तव + लृकारः = तवल्कारः (अ + लृ = अल्)

अपवाद – स्वैरम् (स्व + ईरम्), अक्षौहिणी (अक्ष + ऊहिनी), प्रौढः (प्र + ऊढः), दुःखार्तः (दुःख + ऋतः), प्रार्णम् (प्र + ऋणम्), दशार्णः (दश + ऋणः) आदि उदाहरण इस नियम के अपवाद हैं। इनमें वृद्धि (ऐ, औ, आर्) होती है।

3. वृद्धि सन्धि – (ऐ, औ, आर्)

नियम – अ/आ के बाद यदि ए/ऐ आए तो दोनों मिलकर 'ऐ', ओ/औ आए तो दोनों मिलकर 'औ' हो जाते हैं।[1]

उदाहरण–

(i) अ/आ + ए/ऐ = ऐ
एक + एकम् = एकैकम् (अ + ए = ऐ)
मत + ऐक्यम् = मतैक्यम् (अ + ऐ = ऐ)
सदा + एव = सदैव (आ + ए = ऐ)
महा + ऐश्वर्यम् = महैश्वर्यम् (आ + ऐ = ऐ)

(ii) अ/आ + ओ/औ = औ
परम + ओषधिः = परमौषधिः (अ + ओ = औ)
गङ्गा + ओघः = गङ्गौघः (आ + ओ = औ)
दिव्य + औषधम् = दिव्यौषधम् (अ + औ = औ)
महा + औत्सुक्यम् = महौत्सुक्यम् (आ + औ = औ)

टिप्पणी – समास में प्रयुक्त होने पर अ/आ के बाद यदि 'ओष्ठ' शब्द आए तो विकल्प से उपर्युक्त नियम लगता है। पक्ष में, अ + ओ = ओ होता है, जैसे –

	वृद्धिसहित	वृद्धिरहित
बिम्ब + ओष्ठः	= बिम्बौष्ठः	(बिम्बोष्ठः)।
अधर + ओष्ठः	= अधरौष्ठः	(अधरोष्ठः)।
दन्त + ओष्ठम्	= दन्तौष्ठम्	(दन्तोष्ठम्)।

1. वृद्धिरेचि। ❑ पा0 6.1.88

4. यण् सन्धि – (य्, व्, र्, ल्)

नियम – ह्रस्व या दीर्घ इ, उ, ऋ, लृ के बाद किसी असवर्ण (असमान) स्वर के आने पर इ का य्, उ का व्, ऋ का र् तथा लृ का ल् हो जाता है।[1]

(i) इ/ई + असमान स्वर = य् (स्वर)
यदि + अपि = यद्यपि (इ + अ = य)
इति + आदिः = इत्यादिः (इ + आ = या)
प्रति + उपकारः = प्रत्युपकारः (इ + उ = यु)
नि + ऊनः = न्यूनः (इ + ऊ = यू)
प्रति + एकम् = प्रत्येकम् (इ + ए = ये)
देवी + अनुग्रहः = देव्यनुग्रहः (ई + अ = य)
नदी + एव = नद्येव (ई + ए = ये)
यादृशी + उक्तिः = यादृश्युक्तिः (ई + उ = यु)

(ii) उ/ऊ + असमान स्वर = व् (+ स्वर)
अनु + अयः = अन्वयः (उ + अ = व)
सु + आगतम् = स्वागतम् (उ + अ = व)
अनु + एषणम् = अन्वेषणम् (उ + अ = वे)
वधू + आगमनम् = वध्वागमनम् (ऊ + आ = वा)

(iii) ऋ + असमान स्वर = र् (+ स्वर)
पितृ + इच्छा = पित्रिच्छा (ऋ + इ = रि)
मातृ + आज्ञा = मात्राज्ञा (ऋ + आ = रा)

(iv) लृ + असमान स्वर = ल् (+ स्वर)
लृ + आकृतिः = लाकृतिः (लृ + आ = ला)

5. अयादि सन्धि – (अय्, आय्, अव्, आव्)

नियम – यदि ऐ, ऐ, ओ अथवा औ के बाद कोई स्वर हो तो ए का अय्, ऐ का आय्, ओ का अव् और औ का आव् हो जाता है।[2]

---

1. इको यणचि। ❑ पा० 6.1.77

2. एचोऽयवायावः। ❑ पा० 6.1.78

उदाहरण–

(i) ए + स्वर = अय् (+ स्वर)
ने + अनम् = नयनम् (ए + अ = अय)
मुने + ए = मुनये (ए + ए = अये)

(ii) ऐ + स्वर = आय् (+ स्वर)
नै + अकः = नायकः (ऐ + अ = आय)
परिचै + अकः = परिचायकः (ऐ + अ = आय)

(iii) ओ + स्वर = अव् (+ स्वर)
भो + अनम् = भवनम् (ओ + अ = अव)
भानो + ए = भानवे (ओ + ए = अवे)

(iv) औ + स्वर = आव् (+ स्वर)
पौ + अकः = पावकः (औ + अ = आव)
नौ + इकः = नाविकः (औ + इ = आवि)
भौ + उकः = भावुकः (औ + उ = आवु)
बालकौ + आगतौ = बालकावागतौ (औ + आ = आवा)

विशेष–

ओ या औ के बाद यदि यकार आदि वाला कोई प्रत्यय हो तो भी ओ के स्थान पर अव् और औ के स्थान पर आव् हो जाता है[1]। जैसे –

गो + यम् = गव्यम् (ओ + य = अव्य)
नौ + यम् = नाव्यम् (औ + य = आव्य)

टिप्पणी – पदान्त ए/ओ के बाद अ रहने पर यह नियम लागू नहीं होता । अपितु अगला (पूर्वरूप) नियम लागू होता है ।

6. पूर्वरूप सन्धि

नियम – पदान्त ए/ओ के बाद यदि अ हो तो दोनों मिलकर पूर्वरूप अर्थात् ए/ओ हो जाते हैं । यह सन्धि अवग्रह (ऽ) द्वारा सूचित होती है।[2]

---

1. वान्तो यि प्रत्यये । ❑ पा0 **6.1.79**
2. एङः पदान्तादति। ❑ पा0 **6.1.109**

उदाहरण–

वृक्षे + अपि = वृक्षेऽपि (ए + अ = एऽ)

ते + अपि = तेऽपि (ए + अ = एऽ)

विष्णो + अत्र = विष्णोऽत्र (ओ + अ = ओ ऽ)

7. पररूप सन्धि

नियम – अकारान्त उपसर्ग के बाद यदि ए/ओ से प्रारम्भ होने वाली धातु हो तो दोनों मिलकर पररूप अर्थात् ए/ओ हो जाते हैं।[1]

उदाहरण–

प्र + एजते = प्रेजते (अ + ए = ए)

उप + ओषति = उपोषति (अ + ओ = ओ)

अपवाद–

अव + एति = अवैति

उप + एधते = उपैधते

प्रकृतिभाव[2]

प्लुत[3] एवं प्रगृह्यसंज्ञक[4] स्वर के बाद यदि कोई स्वर आता है तो उपर्युक्त नियमों के अनुसार सन्धि के प्राप्त रहने पर भी सन्धि नहीं होती। इसे **प्रकृतिभाव** कहते हैं, जैसे –

(1) **प्लुत** – आगच्छ रमेश 3, अत्र क्रीडावः।

यहाँ रमेश 3 + अत्र में प्लुत के कारण दीर्घ सन्धि नहीं हुई।

---

1. एङि, पररूपम्। ❑ **पा0 6.1.94**
2. प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम्। ❑ **पा0 6.2.125**
3. जब किसी को दूर से पुकारा जाता है तो उस पद में अन्तिम स्वर प्लुत हो जाता है– दूराद्धूते च। ❑ **पा0 8.2.84**
4. प्रगृह्यसंज्ञक –
   (i) ईकारान्त, ऊकारान्त और एकारान्त द्विवचन को **प्रगृह्य** कहते हैं।
   (ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्। ❑ **पा0 1.1.11**)
   (ii) अदस् (= यह) शब्द के मकार से युक्त ईकारान्त और ऊकारान्त रूप ही प्रगृह्य है। (अदसो मात्। ❑ **1.1.12**)
   (iii) ओकारान्त अव्यय भी प्रगृह्य है। (ओत्। ❑ **पा० 1.1.15**)

(2) **प्रगृह्य–**

(i) कवी आगतौ – यहाँ यण् सन्धि नहीं हुई ।
साधू ईशं स्मरतः – यहाँ यण् सन्धि नहीं हुई ।
बालिके आगच्छतः – यहाँ अयादि सन्धि नहीं हुई।

(ii) अमी अजाः – यहाँ यण् सन्धि नहीं हुई।
अमू अश्वौ – यहाँ यण् सन्धि नहीं हुई।

(iii) अहो ईशाः – यहाँ अयादि सन्धि नहीं हुई ।
अहो अनर्थः – यहाँ पूर्वरूप सन्धि नहीं हुई ।

अभ्यास

1. **सन्धि कहाँ-कहाँ अनिवार्य है?**
2. **स्वर-सन्धि किसे कहते हैं?**
   यण्-सन्धि और वृद्धि-सन्धि के दो-दो उदाहरण लिखिए ।
3. **सन्धि-विच्छेद कीजिए -**
   इत्युक्त्वा, हिमालयः, वार्तालापः, विद्यार्थी, गिरीशः, गुरूपदेशः, नरेशः, परोपकारः, राजर्षिः, अत्याचारः, मात्राज्ञा, सुखार्तः, वनेऽपि, कवी एतौ, हितोपदेशः, रात्रावागतः, चयनम्, तथैव, वनौषधिः ।
4. **निम्नलिखित में सन्धि कीजिए –**

अभि	+ उदयः	=		देव	+	ऋषिः	=
शिक्षा	+ अर्थी	=		ग्रीष्म	+	ऋतुः	=
महा	+ आशयः	=		वर्षा	+	ऋतुः	=
अभि	+ इष्टः	=		अधुना	+	एव	=
रजनी	+ ईशः	=		सदा	+	एव	=
मातृ	+ ऋणम्	=		हरे	+	ए	=
रमा	+ ईशः	=		जे	+	अति	=
महा	+ उदयः	=		गौ	+	औ	=
चन्द्र	+ उदयः	=		ने	+	अति	=
साधो	+ ए	=		पितृ	+	अर्थम्	=
प्र	+ ऊढः	=					

II. व्यञ्जन सन्धि

व्यञ्जन के साथ स्वर या व्यञ्जन की सन्धि **व्यञ्जन सन्धि** कहलाती है। इसके प्रमुख नियम निम्नलिखित हैं –

1. **श्चुत्व** (स→ श, तवर्ग→ चवर्ग)

नियम – सकार या तवर्ग का शकार या चवर्ग के साथ योग होने (आगे या पीछे) पर स्–श् में और तवर्ग–चवर्ग में परिवर्तित हो जाता है।[1]

उदाहरण–

(i) स् → श्

मनस् + चलति = मनश्चलति (स् + च् =श्च्)

रामस् + शेते = रामश्शेते (स् + श् = श्श्)

(ii) तवर्ग→ चवर्ग

सत् + चरित्रम् = सच्चरित्रम् (त् + च् = च्च्)

शरत् + चन्द्रः = शरच्चन्द्रः (त् + च् = च्च्)

उत् + चारणम् = उच्चारणम् (त् + च् = च्च्)

याच् + ना = याच्ञा (च् + न् = च्ञ्)

यज् + नः = यज्ञः (ज् + न् = ज्ञ्)

राज् + नः = राज्ञः (ज् + न् = ज्ञ्)

सद् + जनः = सज्जनः (द् + ज् = ज्ज्)

अपवाद – शकार के बाद तवर्ग के आने पर तवर्ग का चवर्ग नहीं होता।[2]
जैसे – प्रश् + नः = प्रश्नः।

---

1. स्तोः श्चुना श्चुः। ☐ पा० 8.4.40

2. शात्। ☐ पा० 8.4.44

2. ष्टुत्व (स् →ष्, तवर्ग→ टवर्ग)

नियम – सकार या तवर्ग का यदि षकार या टवर्ग के साथ (आगे या पीछे) योग हो तो स् के स्थान में ष् और तवर्ग के स्थान में टवर्ग हो जाता है।[1]

उदाहरण–

(i) स् → ष्

हरिस् + टीकते = हरिष्टीकते (स् + ट् = ष्ट्)

(ii) तवर्ग→ टवर्ग

तत् + टीका = तट्टीका (त् + ट् = ट्ट्)

आकृष् + तः = आकृष्टः (ष् + त् = ष्ट्)

इष् + तः = इष्टः (ष् + त् = ष्ट्)

पुष् + तिः = पुष्टिः (ष् + त् = ष्ट्)

षष् + थः = षष्ठः (ष् + थ् = ष्ठ्)

अपवाद–

(क) पदान्त टवर्ग के बाद सकार या तवर्ग हो तो उसका षकार या टवर्ग नहीं होता,[2] जैसे – षट् + सन्तः = षट्सन्तः ।

परन्तु पदान्त टवर्ग के बाद नाम्, नवति और नगरी शब्दों के रहने पर भी न् का ण् हो जाता है, जैसे–

षट् + नाम् = षण्णाम्। (ट् + न् = ण्ण्)

इसी प्रकार षण्णवति, षण्णगर्यः ।

(ख) तवर्ग के बाद षकार हो तो तवर्ग का टवर्ग नहीं होता,[3] जैसे – सन् + षष्ठः = सन्षष्ठः ।

3. जश्त्व

(1) वर्ग का प्रथम वर्ण→ तृतीय वर्ण

(2) चतुर्थ वर्ण →तृतीय वर्ण

---

1. ष्टुना ष्टुः। ☐ पा0 8.4.41

2. न पदान्ताट्टोरनाम्।। ☐ पा0 8.4.42

3. तोः षि। ☐ पा0 8.4.43

नियम (i) पदान्त क्, च्, ट्, त्, प् के बाद यदि कोई स्वर वर्ण हो अथवा कोई घोष व्यञ्जन (वर्गों के तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम वर्ण तथा य्, र्, ल्, व्, ह्) हो तो क्, च्, ट्, त्, प् क्रमशः ग्, ज्, ड्, द्, ब् में बदल जाते हैं।[1]

उदाहरण–

(i) प्रथम वर्ण + स्वर = तृतीय वर्ण + स्वर
वाक् + ईशः = वागीशः (क् + ई = गी)
अच् + आदिः = अजादिः (च् + आ = जा)
षट् + आननः = षडाननः (ट् + आ = डा)
जगत् + ईशः = जगदीशः (त् + ई = दी)
सुप् + अन्तम् = सुबन्तम् (प् + अ = ब)

(ii) प्रथमवर्ण + घोष व्यञ्जन = तृतीय वर्ण
दिक् + गजः = दिग्गजः (क् + ग् = ग्ग्)
षट् + रिपवः = षड्रिपवः (ट् + र् = ड्र्)
सत् + धर्मः = सद्धर्मः (त् + ध् = द्ध्)
भगवत् + भक्तिः = भगवद्भक्ति (त् + भ् = द्भ)
अप् + जम् = अब्जम् (प् + ज् = ब्ज्)

टिप्पणी–

(अ) वर्ग के प्रथम वर्ण के बाद यदि कोई अनुनासिक वर्ण (ङ्, ञ्, ण्, न्, म्) हो तो उपर्युक्त नियम विकल्प से लगता है। पक्ष में पञ्चम वर्ण हो जाता है।[2] जैसे –
दिक् + मुखम् = दिङ्मुखम् (दिग्मुखम्)।
जगत् + नाथः = जगन्नाथः (जगद्नाथः)
षट् + मासाः = षण्मासाः (षड्मासाः)

(आ) बाद में आने वाला अनुनासिक वर्ण यदि प्रत्यय का हो तो प्रथम वर्णका पञ्चम वर्ण ही होता है।[3] जैसे–
वाक् + मयम् = वाङ्मयम्,
तत् + मात्रम् = तन्मात्रम्,
अप् + मयम् = अम्मयम्।

---

1. झलां जशोऽन्ते । ❑ पा0 8.2.39
2. यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा । ❑ पा0 8.4.45
3. प्रत्यये भाषायां नित्यम् । ❑ पा0 8.4.45

नियम (ii) चतुर्थ वर्ण → तृतीय वर्ण ।

किसी पद में यदि वर्ग के चतुर्थ वर्ण के बाद पुनः किसी वर्ग का चतुर्थ वर्ण आ जाए तो पहले आनेवाला चतुर्थ वर्ण अपने ही वर्ग का तृतीय वर्ण हो जाता है[1], जैसे –

क्रुध् + धः = क्रुद्धः (ध् + ध् = द्ध)
दध् + धः = दग्धः (ध् + ध् = ग्ध्)
दुध् + धम् = दुग्धम् (ध् + ध् = ग्ध्)
बुध् + धिः = बुद्धिः (ध् + धि = द्धि)
वृध् + धिः = वृद्धिः (ध् + धि = द्धि)
सिध् + धिः = सिद्धिः (ध् + धि = द्धि)
लभ् + धः = लब्धः (भ् + ष् = ब्ध्)
क्षुभ् + धः = क्षुब्धः (भ् + ध् = ब्ध्)
आरभ् + धम् = आरब्धम् (भ् + ध् = ब्ध्)

4. चर्त्व (ग्, ज्, ड्, द्, ब्, → क्, च्, ट्, त्, प्)

नियम – वर्गों के तृतीय वर्ण के बाद यदि कोई अघोष वर्ण (वर्ग का प्रथम, द्वितीय वर्ण एवं श्, ष्, स्) हो तो तृतीय वर्ण अपने वर्ग का प्रथम वर्ण हो जाता है।[2]

उदाहरण–

दिग् + पालः = दिक्पालः (ग् + प् = क्प्)
विपद् + कालः = विपत्कालः (द् + क् = त्क्)
सद् + कारः = सत्कारः (द् + क् = त्क्)

5. अनुस्वार – (म्/न् → ं)

नियम – (i) म् के बाद यदि कोई व्यञ्जन वर्ण आए तो म् के स्थान में अनुसार (ं) हो जाता है।[3]

---

1. झलां जश् झशि। ❑ पा0 8.4.53
2. खरि च। ❑ पा0 8.4.55
3. मोऽनुस्वारः। ❑ पा0 8.3.23

उदाहरण–

सम् + हारः = संहारः।

सम् + योगः = संयोगः।

हरिम् + वन्दे = हरिं वन्दे।

किम् + वा = किं वा।

अपवाद – अपदान्त म् के उपरान्त यदि अन्तःस्थ या अनुनासिक व्यञ्जन वर्ण आए तो यह नियम लागू नहीं होता, जैसे – गम्यते,नम्यते,शाम्यते ।

नियम – (ii) (न्→ ं)

अपदान्त न् के बाद यदि अन्तःस्थ तथा अनुनासिक को छोड़कर कोई अन्य व्यञ्जन वर्ण आता है तो न् के स्थान में अनुस्वार हो जाता।[1]

उदाहरण-

यशान् + सि = यशांसि।

मन् + स्यते = मंस्यते।

6. परसवर्ण – (अनुस्वार→पञ्चम वर्ण)

नियम – अनुस्वार (ं) के बाद यदि कोई स्पर्श वर्ण हो तो अनुस्वार के स्थान में उसके आगे वाले वर्ण के वर्ग का पञ्चम वर्ण हो जाता है।[2] जैसे–

सं + कल्पः = सङ्कल्पः (ं + क् = ङ्क्)

सं + तोषः = सन्तोषः (ं + त् = न्त्)

सं + पूर्णम् = सम्पूर्णम् (ं + प् = म्प्)

अं + कितः = अङ्कितः (ं + क् = ङ्क्)

कुं + ठितः = कुण्ठितः (ं + ठ् = ण्ठ्)

गुं + फितः = गुम्फितः (ं + फ् = म्फ्)

शां + तः = शान्तः (ं + त् = न्त्)

अं + चितः = अञ्चितः (ं + च् = ञ्च्)

टिप्पणी–

पदान्त अनुस्वार (ं) के बाद यह नियम विकल्प से लगता है।[3] जैसे–

ग्रामं + गच्छति = ग्रामङ्गच्छति या ग्रामं गच्छति ।

---

1. नश्चापदान्तस्य झलि। ❑ पा० 8.3.24
2. अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः। ❑ पा० 8.4.58
3. वा पदान्तस्य। ❑ पा० 8.4.59

किं + चित् = किञ्चित् या किंचित् ।

अलं + कारः = अलङ्कारः या अलंकारः ।

7. लत्व – (तवर्ग→ल्)

नियम – तवर्ग के बाद ल् आए तो तवर्ग का ल् हो जाता है । किन्तु न् के बाद ल् के आने पर सानुनासिक लकार (लँ्) होता है[1], जैसे–

तत् + लीनः = तल्लीनः (त् +ल् = ल्ल्)

उत् + लङ्घनम् = उल्लङ्घनम् (त् + ल् = ल्ल्)

महान् + लाभः = महाँल्लाभः (न् + ल् = ल्ल्)

8. छत्व (श→छ)

नियम – श् के पहले यदि पदान्त में स्थित किसी वर्ग का प्रथम, द्वितीय तृतीय अथवा चतुर्थ वर्ण हो और बाद में कोई स्वर, अन्तःस्थ वर्ण (य्, र्, ल्, व्) या ह् हो तो श् के स्थान पर छ् आ जाता है।[2]

उदाहरण–

एतत् + शोभनम् = एतच्छोभनम् (त् + श् = च् + श् = च्छ्)

सत् + शास्त्रम् = सच्छास्त्रम् (त् + श् = च् + श् = च्छ्)

तत् + श्रुत्वा = तच्छ्रुत्वा (त् + श् = च् + श् = च्छ्)

9. च् का आगम

नियम – ह्रस्व के बाद यदि छ् आए तो छ् के पहले एक त् का आगम होकर उसे श्चुत्व (च्) होता है।[3] किन्तु पदान्त दीर्घ स्वर के बाद छ् के आने पर विकल्प से त् (च्) का आगम होता है।[4]

उदाहरण–

तरु + छाया = तरुच्छाया

परि + छेदः = परिच्छेदः

अनु + छेदः = अनुच्छेदः

किन्तु

लक्ष्मी + छाया = लक्ष्मीच्छाया या लक्ष्मीछाया।

---

1. तोर्लि । ❑ पा0 8.4.60
2. शश्छोऽटि। ❑ पा0 8.4.63, छत्वममीतिवाच्यम् । 8.4.63 वा0
3. छे च । ❑ पा0 6.1.73
4. पदान्ताद्वा । ❑ पा0 6.1.76

10. अनुनासिक वर्णों का आगम

नियम – जब पदान्त ङ्, ण्, न् के पूर्व कोई ह्रस्व स्वर हो और बाद में कोई भी स्वर आ जाय तो इन अनुनासिक वर्णों को क्रमशः ङ्, ण्, न् का आगम हो जाता है।[1]

उदाहरण –

तस्मिन् + एव = तस्मिन्नेव (इन् + ए = इन्ने)
खादन् + इव = खादन्निव (अन् + इ = अन्नि)
प्रत्यङ् + आत्मा = प्रत्यङ्ङात्मा (अङ् + आ = अङ्ङा)
सुगण् + ईशः = सुगण्णीशः (अण् + ई = अण्णी)

11. र् का लोप और पूर्व स्वर का दीर्घत्व

नियम – र् के बाद यदि र् हो तो पहले र् का लोप हो जाता है और उसके पूर्ववर्ती स्वर का दीर्घ हो जाता है।[2]

उदाहरण–

स्वर् + राज्यम् = स्वाराज्यम्
निर् + रसः = नीरसः
गुरुर् + रमते = गुरूरमते

12. ह् → चतुर्थ वर्ण

नियम – वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ वर्ण के उपरान्त यदि ह् आए तो वह विकल्प से अपने पूर्ववर्ती वर्ण के वर्ग का चतुर्थ वर्ण हो जाता है।[3]

उदाहरण–

वाग् + हरिः = वाग्घरिः या वाग्हरिः
उद् + हारः = उद्धारः या उद्हारः
तद् + हितम् = तद्धितम् या तद्हितम्

---

1. ङमो ह्रस्वादचि ङमुण्नित्यम्। ❑ पा० 8.3.32
2. रो रि । ❑ पा० 8.3.14
   ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः। ❑ पा० 6.3.111
3. झयो होऽन्यतरस्याम् । ❑ पा० 8.4.62

13. षत्व-विधान–

नियम – इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ तथा कवर्ग के बाद आदेश एवं प्रत्यय के स् को ष् हो जाता है।[1]

उदाहरण–

रामे + सुप् (सु) = रामेषु
हरि + सुप् (सु) = हरिषु
कर्तृ + सुप् (सु) = कर्तृषु
वाक् + सुप् (सु) = वाक्षु
साधु + सुप् (सु) = साधुषु
गो + सुप् (सु) = गोषु
नौ + सुप् (सु) = नौषु

14. णत्व-विधान

नियम--र् और ष् के बाद न् को ण् हो जाता है।[2] यदि "र या ष्" तथा "न्" के बीच में स्वर, ह्, य्, व्, र्, कवर्ग तथा पवर्ग, में से कोई एक या एक से अधिक वर्ण भी हों तो भी न् को ण् हो जाता है।[3]

उदाहरण–

रामे + न = रामेण
पुरुषा + नाम् = पुरुषाणाम्
कर् + नः = कर्णः
यूष् + नः = यूष्णः

---

1. आदेशप्रत्यययोः। ❑ पा0 8.3.59
2. रषाभ्यां नो णः समानपदे। ❑ पा0 8.4.1
3. अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि। ❑ पा0 8.4.2

अभ्यास

1. **निम्नलिखित में सन्धि कीजिए –**

सत् + जनः =	उद् + गमः =	मधु + सु =
इष् + तः =	तत् + लीनः =	दातृ + सु =
विष् + नुः =	सत् + आनन्दः =	हरी + नाम् =
कृष् + नः =	सत्यम् + वद =	
षट् + आननः =	तत् + श्रुत्वा =	
तस्मिन् + एव =	मुनि + सु =	

2. **निम्नलिखित में सन्धि-विच्छेद कीजिए –**

उच्चारणम् =	वागीशः =
जगदीशः =	सच्चिदानन्दः =
दुष्टः =	वृक्षच्छाया =
वाङ्मयम् =	उद्धारः =
दिक्पालः =	उल्लेखः =
महाँल्लाभः =	नीरसः =
नदीषु =	हरिणा =
साधुषु =	वर्णः =

III. विसर्ग सन्धि

विसर्ग के साथ स्वर या व्यञ्जन की सन्धि **विसर्ग सन्धि** कहलाती है। इसके निम्नलिखित प्रमुख प्रकार हैं–

1. सत्व (: → श्, ष्, स्)

नियम – (i) विसर्ग (:) के बाद यदि च् या छ् हो तो विसर्ग का श्; ट् या ठ् हो तो ष् तथा त् या थ् हो तो स् हो जाता है।[1]

उदाहरण–

निः + चलः = निश्चलः (: + च् = श्च्)
शिरः + छेदः = शिरश्छेदः (:+ छ् = श्छ्)
धनुः + टङ्कारः = धनुष्टङ्कारः (:+ ट् = ष्ट्)
नमः + ते = नमस्ते (:+ त् = स्त्)
मनः + तापः = मनस्तापः = (:+ त् = स्त्)
इतः + ततः = इतस्ततः (:+ त् = स्त्)

(ii) विसर्ग के बाद यदि श्, ष् या स् आए तो विसर्ग का क्रमशः श्, ष् या स् हो जाता है या विसर्ग ही रह जाता है।[2] जैसे–

हरिः + शेते = हरिश्शेते (: श् + श्श्) या हरिः शेते
दुः + शासनः = दुश्शासनः या दुःशासनः
निःसन्देहः = निःसन्देहः या निस्सन्देहः

(iii) विसर्ग के पहले यदि इ या उ हो और बाद में क्, ख् या प्, फ् में से कोई वर्ण हो तो विसर्ग के स्थान में ष् हो जाता है।[3] जैसे-

निः + कपटः = निष्कपटः
दुः + कर्म = दुष्कर्म
चतुः + पात् = चतुष्पात्
निः + फलः = निष्फलः

अपवाद– दुः + खम् = दुःखम्

---

1. विसर्जनीयस्य सः। ❑ पा0 **8.3.34**
2. वा शरि । ❑ **पा0 8.3.36**
3. इदुदुपधस्य चाप्रत्ययः । ❑ **पा0 8.3.41**

(iv) गति-संज्ञक नमः और पुरः के बाद यदि क्, ख् या प्, फ् आए तो विसर्ग का स् हो जाता है।[1] जैसे–

नमः + कारः = नमस्कारः (: + क् = स्क्).
पुरः + कारः = पुरस्कारः (: + क् = स्क्)
इसी प्रकार नमस्करोति, पुरस्करोति ।

2. उत्व (:→ उ)

(i) अः + अ = अ + उ (ओ) + अ

नियम - विसर्ग के पहले यदि अ हो और विसर्ग के बाद भी अ हो तो विसर्ग के स्थान में उ होता है।[2] इसके बाद गुण तथा पूर्वरूप हो जाता है ।

उदाहरण–

सः + अपि = सोऽपि (अः + अ = अ + उ + अ = ओ + अ = ओऽ)
प्रथमः + अध्यायः = प्रथमोऽध्यायः (")
नृपः + अवदत् = नृपोऽवदत् (")

(ii) अः + घोष व्यञ्जन = अउ (ओ)+ घोष व्यञ्जन

विसर्ग के पहले यदि अ हो और बाद में कोई घोष व्यञ्जन (वर्गों के तृतीय, चतुर्थ एवं पञ्चम वर्ण, य्, र्, ल्, व्, ह्) हो तो विसर्ग के स्थान में उ हो जाता है।[3]

उदाहरण–

तपः + वनम् = तपोवनम् (अः + व् = अ + उ + व् = ओव्)
मनः + रथः = मनोरथः (अः + र् = अ + उ + र् = ओर्)
बालः + गच्छति = बालो गच्छति (अः+ ग् = अ + उ + ग् = ओग्)
नमः + वयम् = नमो वयम् (अः + व् = अ + उ = ओव्)

---

1. नमस्पुरसोर्गत्योः । ☐ पा0 8.3.40
कृ धातु के साथ समास में आने पर नमः शब्द (अव्यय) गतिसंज्ञक होता है ।
साक्षात्प्रभृतीनि च ।☐ पा0 1.4 . 74 । पुरः शब्द (अव्यय) नित्य गतिसंज्ञक है ।
(पुरोऽव्ययम् ।) ☐ पा0 1 . 4 . 67
2. अतो रोरप्लुतादप्लुते । ☐ पा0 6.1.113
3. हशि च । ☐ पा0 6.1. 114

3. रुत्व (:→ र्)

नियम - यदि विसर्ग से पहले अ, आ को छोड़ कोई अन्य स्वर हो तथा बाद में कोई स्वर या घोष व्यञ्जन हो तो विसर्ग के स्थान में र् हो जाता है ।

उदाहरण–

मुनिः + अयम् = मुनिरयम् (इः + अ = इर् + अ)
हरिः + आगच्छति = हरिरागच्छति (इः + आ = इर् + आ)
पितुः + इच्छा = पितुरिच्छा (उः + इ = उर् + इ)
गुरुः + जयति = गुरुर्जयति (उः + ज् = उर् + ज्)

4. लोप (: → लोप)

नियम – (i) यदि विसर्ग के पहले अ हो और बाद में अ को छोड़ कोई अन्य स्वर हो तो विसर्ग का लोप हो जाता है । (और पुनः वहाँ कोई सन्धि नहीं होती)।

उदाहरण–

अतः + एव = अत एव (अः + ए = अ + ए)
नरः + इव = नर इव
सूर्यः + उदेति = सूर्य उदेति
कुतः + आगतः = कुत आगतः

विशेष - सः और एषः के बाद अ को छोड़ कोई भी वर्ण हो (स्वर या व्यञ्जन) तो इनके विसर्ग का लोप हो जाता है। जैसे-

सः + पठति = स पठति
सः + करोति = स करोति
एषः + हरिः = एष हरिः
एषः + इच्छति = एष इच्छति
सः + उवाच = स उवाच

(ii) यदि विसर्ग के पहले आ हो और विसर्ग के बाद घोष व्यञ्जन या कोई स्वर हो तो विसर्ग का लोप हो जाता है ।

उदाहरण–

छात्राः + आगच्छन्ति = छात्रा आगच्छन्ति
अध्यापकाः + वदन्ति = अध्यापका वदन्ति

अश्वाः + धावन्ति = अश्वा धावन्ति
देवाः + रक्षन्तु = देवा रक्षन्तु

अभ्यास

1. निम्नलिखित में सन्धि कीजिए—

निः	+	छलः	=
निः	+	सन्देहः	=
मेघः	+	गर्जति	=
तेजः	+	राशिः	=
सः	+	पठति	=
पयः	+	दः	=
मनः	+	रथः	=
कविः	+	अयम्	=
प्रथमः	+	सर्गः	=

2. निम्नलिखित में सन्धि-विच्छेद कीजिए—

नमस्ते	=
पुरस्कारः	=
बालकोऽयम्	=
मनोयोगः	=
वयोवृद्धः	=
मनोजः	=
मनोहरम्	=
अधोगतिः	=
निष्फलः	=
प्रथमोऽध्यायः	=

3. सन्धिभेद का कारण बताइए—

क. देवो गच्छति – देव आगच्छति

ख. नीरसः – निर्धनः

ग. रामोऽयम् – पुनरयम्

घ. गजो याति – गजश्चलति

ङ. कः पचति – कोऽपचत्

4. "मालेशः" पद के शुद्ध सन्धि-विच्छेद को (√) इस चिह्न से चिह्नित कीजिये –

क. माल + ईशः　　ख. माला + इशः

ग. माल + एशः　　घ. माला + ईशः

ङ. माले + शः ।

5. जिस पद में व्यञ्जन सन्धि है, उसपर (√) यह चिह्न लगाइये ।

क. नदीशः　　ख. जगदीशः

ग. कपीशः　　घ. कपिरीशः

ङ. क्षितीशः

6. रिक्त स्थानों को उचित पदों से भरिए—

क. नमः + ———— = नमस्तस्यै

ख. तत्र + अगच्छत् = ————

ग. ———— + लासः = उल्लासः

7. अशुद्ध-सन्धि पद को (×) इस चिह्न से चिह्नित कीजिए—

क. अत्यावश्यकम्　　ख. अत्यानन्दः

ग. अत्यादरः　　घ. अत्यानिवार्यम् ।

8. इन्हें शुद्ध कीजिए और कारण भी बताइए—

क. गंगोघः　　ख. प्रत्यैकम्

ग. मनोकामना　　घ. कव्यागच्छतः

ङ. राजछत्रम् ।

9. 'क' भाग की सन्धि 'ख' भाग में ढूँढिए और रिक्त स्थान में ठीक संख्या लगाइए–

	'क'	'ख'	
(i)	द्वौ + अपि	चतुष्टयम्	—
(ii)	अतः + एव	तच्छ्रुत्वा	—
(iii)	हन् + सः	मनीषा	—
(iv)	चतुः + तयम्	नीरोगः	—
(v)	तत् + हितम्	द्वावपि	—
(vi)	लते + एते	अत एव	—
(vii)	तत् + श्रुत्वा	तद्धितम्	—
(viii)	निर् + रोगः	हंसः	—
(ix)	मनस् + ईषा	लते एते	—

10. निम्नलिखित वाक्यों में जहाँ-जहाँ सन्धियाँ हैं, उनका विच्छेद दिखाइए–

क. एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः ।

ख. अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।
उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

ग. इति चिन्तयन्नेव तेनासौ व्याघ्रेण व्यापादितः खादितश्च ।

तृतीय अध्याय

परिचय

संस्कृत में सार्थक शब्द भी तभी वाक्य में प्रयुक्त हो सकता है जब वह पद बन जाए। संज्ञा (विशेषण सहित), सर्वनाम आदि शब्द कारक विभक्तियों को ग्रहण कर पद बन जाते हैं और क्रियार्थक शब्द (धातु) लट्, लोट् आदि लकारों के प्रत्ययों से युक्त होकर क्रियापद बन जाते हैं। संज्ञा आदि शब्दों में जुड़ने वाली विभक्तियाँ और उनके प्रत्यय निम्नांकित हैं जो सुप् कहलाते हैं-

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सु (स् = :)	औ	जस् (अस्)
द्वितीया	अम्	औट् (औ)	शस् (अस्)
तृतीया	टा (आ)	भ्याम्	भिस् (भिः)
चतुर्थी	ङे (ए)	भ्याम्	भ्यस् (भ्यः)
पञ्चमी	ङसि (अस्)	भ्याम्	भ्यस् (भ्यः)
षष्ठी	ङस् (अस्)	ओस् (ओः)	आम्
सप्तमी	ङि (इ)	ओस् (ओः)	सुप् (सु)

विभिन्न लिंगों के शब्दों में जब ये विभक्ति-प्रत्यय जुड़ते हैं तो नियमानुसार विभिन्न रूपों में परिवर्तित हो जाते हैं। ये प्रथमा आदि विभक्तियाँ विभिन्न कारकों के अर्थ को द्योतित करने के लिए प्रयुक्त होती हैं। सामान्यतः कर्ता के लिए प्रथमा, कर्म के लिए द्वितीया, करण के लिए तृतीया, सम्प्रदान के लिए चतुर्थी, अपादान के लिए पञ्चमी, सम्बन्ध के लिए षष्ठी एवं अधिकरण के लिए सप्तमी विभक्ति का प्रयोग होता है। सम्बोधन के लिए प्रथमा विभक्ति ही प्रयुक्त होती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न शब्दों के योग के कारण भी विभिन्न विभक्तियाँ प्रयुक्त होती हैं, जो **उपपद विभक्ति** कहलाती हैं। इनका विशद विचार कारक एवं विभक्ति-प्रकरण (सप्तम अध्याय) में प्रतिपादित है।

रूप-भेद की दृष्टि से संज्ञादि शब्दों को निम्नलिखित तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है-

(क) संज्ञाशब्द (विशेषण सहित)

(ख) सर्वनामशब्द

(ग) संख्यावाचकशब्द

संज्ञा शब्दों को पुनः दो उपवर्गों में रखा जा सकता है– (1) स्वरान्त (अजन्त), जैसे – बालक, कवि, नदी आदि। (2) व्यञ्जनान्त (हलन्त), जैसे – राजन्, दिश्, पयस् आदि।

इन सभी प्रकार के शब्दों के विभिन्न विभक्तियों में रूप यहां प्रस्तुत हैं।

I. संज्ञा शब्द

1. स्वरान्त

(i) अकारान्त

(अ) पुंलिङ्ग

बालक

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	बालकः	बालकौ	बालकाः
सम्बोधन[1]	हे बालक	हे बालकौ	हे बालकाः
द्वितीया	बालकम्	बालकौ	बालकान्
तृतीया	बालकेन	बालकाभ्याम्	बालकैः
चतुर्थी	बालकाय	"	बालकेभ्यः
पञ्चमी	बालकात्	"	"
षष्ठी	बालकस्य	बालकयोः	बालकानाम्
सप्तमी	बालके	"	बालकेषु

सभी अकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप इसी तरह होंगे, जैसे– वृक्ष, अध्यापक, छात्र, विद्यालय, नर, देव, बाल, काक इत्यादि ।

(आ) नपुंसकलिङ्ग

फल

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा एवं द्वितीया	फलम्	फले	फलानि
सम्बोधन	फल	"	

शेष तृतीया से सप्तमी तक के रूप **बालक** के समान होते हैं।

सभी अकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप इसी तरह होंगे, जैसे – उद्यानम्, नगरम्, कुसुमम्, पुस्तकम्, मित्रम्, अरविन्दम् आदि ।

---

1. सभी प्रकार के शब्दों के रूप सम्बोधन में प्रथमा के समान ही होते हैं । केवल एकवचन का रूप कुछ भिन्न होता है। सभी वचनों में शब्द के प्रारंभ में सम्बोधन सूचक अव्यय 'हे' का प्रयोग प्रायः होता है ।

(ii) आकारान्त स्त्रीलिङ्ग

लता

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	लता	लते	लताः
सम्बोधन	लते	लते	लताः
द्वितीया	लताम्	लते	लताः
तृतीया	लतया	लताभ्याम्	लताभिः
चतुर्थी	लतायै	लताभ्याम्	लताभ्यः
पञ्चमी	लतायाः	लताभ्याम्	लताभ्यः
षष्ठी	लतायाः	लतयोः	लतानाम्
सप्तमी	लतायाम्	लतयोः	लतासु

इसी प्रकार बाला, कन्या, बालिका, छात्रा, गङ्गा, रमा, बाला आदि आकारान्त स्त्रीलिंङ्ग शब्दों के रूप होंगे।

जरा (बुढ़ापा)

जरा शब्द का कुछ विभक्तियों में (अजादि) विकल्प से जरस् आदेश हो जाता है।[1] परिणामतः इसके निम्नलिखित वैकल्पिक रूप भी बनते हैं–

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	जरा	जरसौ	जरसः
सम्बोधन	जरे	”	”
द्वितीया	जरसम्	”	”
तृतीया	जरसा	जराभ्याम्	जराभिः
चतुर्थी	जरसे	”	जराभ्यः
पञ्चमी	जरसः	”	”
षष्ठी	”	जरसोः	जरसाम्
सप्तमी	जरसि	”	जरासु

1. जरायाः जरसन्यतरस्याम्। ❑ पा0 7. 2.101

(iii) इकारान्त (अ) पुंलिङ्ग

मुनि

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मुनिः	मुनी	मुनयः
सम्बोधन	मुने	”	”
द्वितीया	मुनिम्	”	मुनीन्
तृतीया	मुनिना	मुनिभ्याम्	मुनिभिः
चतुर्थी	मुनये	”	मुनिभ्यः
पञ्चमी	मुनेः	”	”
षष्ठी	मुनेः	मुन्योः	मुनीनाम्
सप्तमी	मुनौ	”	मुनिषु

कवि, ऋषि, हरि, रवि आदि सभी इकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों (**अपवाद**– सखि, पति आदि) के रूप **मुनि** के समान होते हैं ।

पति

पति शब्द जब किसी समास के अन्त में आता है, जैसे – श्रीपति, भूपति, नरपति आदि तब उसके रूप मुनि के समान ही होते हैं, किन्तु जब केवल पति शब्द होगा, तब तृतीया से सप्तमी तक के एकवचन में रूप भिन्न होंगे–

तृ0	च0	पं0	ष0	स0
पत्या	पत्ये	पत्युः	पत्युः	पत्यौ

शेष रूप मुनि के समान ही होंगे ।

सखि (मित्र)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	सखा	सखायौ	सखायः
सं0	सखे	”	”
द्वि0	सखायम्	”	सखीन्

तृतीया से सप्तमी तक के एकवचन के रूप पति के समान होंगे तथा द्विवचन और बहुवचन के रूप मुनि के समान होंगे ।

(आ) **नपुंसकलिङ्ग**

वारि (जल)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	वारि	वारिणी	वारीणि*
सं0	वारे, वारि	"	"
द्वि0	वारि	"	"
तृ0	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
च0	वारिणे	"	वारिभ्यः
पं0	वारिणः	"	"
ष0	"	वारिणोः	वारीणाम्
स0	वारिणि	"	वारिषु

इकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप वारि के समान होते हैं।

अपवाद – अस्थि (= हड्डी), सक्थि (= जाँघ), दधि (= दही) एवं अक्षि (= आँख) के रूप तृतीया से सप्तमी तक निम्नलिखित रूप में भिन्न होते हैं–

अक्षि (आँख)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
तृ0	अक्ष्णा		
च0	अक्ष्णे		
पं0	अक्ष्णः		
ष0	"	अक्ष्णोः	अक्ष्णाम्
स0	अक्ष्णि, अक्षणि	"	

शेष रूप वारि के समान ही होते हैं।

* र् के बाद आने के कारण यहाँ ण हुआ है। अन्यथा न ही होता। इसी प्रकार अक्षि शब्द में ष के बाद (क् + ष = क्ष) आने के कारण ण होगा। अन्य शब्दों के साथ न ही होगा।

(इ) इकारान्त स्त्रीलिङ्ग

मति (बुद्धि)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	मतिः	मती	मतयः
सं0	मते	”	”
द्वि0	मतिम्	”	मतीः
तृ0	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
च0	मत्यै	”	मतिभ्यः
पं0	मत्याः	”	”
ष0	”	मत्योः	मतीनाम्
स0	मत्याम्	”	मतिषु

स्तुति, शक्ति, बुद्धि, नीति, बिभूति आदि इकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप मति के समान होते हैं।

(iv) ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग

नदी

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	नदी	नद्यौ	नद्यः
सं0	नदि	”	”
द्वि0	नदीम्	”	नदीः
तृ0	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
च0	नद्यै	”	नदीभ्यः
पं0	नद्याः	”	”
ष0	”	नद्योः	नदीनाम्
स0	नद्याम्	”	नदीषु

इसी प्रकार जननी, नगरी, पुत्री, युवती, अटवी (जंगल), नारी, राज्ञी आदि ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप नदी के समान होते हैं।

अपवाद – लक्ष्मी, तरी (नौका), तन्त्री (वीणा), अवी (भेड़), श्री (लक्ष्मी), धी (बुद्धि), ह्री (लज्जा); भी (भय) आदि शब्दों के प्रथमा एकवचन में विसर्ग

होता है[1] जैसे – लक्ष्मीः, श्रीः, धीः आदि । श्री आदि के रूप कुछ भिन्न भी होते हैं।

श्री

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	श्रीः	श्रियौ	श्रियः
सं0	"	"	"
द्वि0	श्रियम्	"	"
तृ0	श्रिया	श्रीभ्याम्	श्रीभिः
च0	श्रियै, श्रिये	"	श्रीभ्यः
पं0	श्रियाः, श्रियः	"	"
ष0	" "	श्रियोः	श्रीणाम्, श्रियाम्
स0	श्रियि, श्रियाम्	"	श्रीषु

इसी प्रकार ह्री, धी, भी इत्यादि के रूप होते हैं ।

स्त्री

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
सं0	स्त्रि	"	"
द्वि0	स्त्रीम्, स्त्रियम्	"	स्त्रीः
तृ0	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः
च0	स्त्रियै	"	स्त्रीभ्यः
पं0	स्त्रियाः	"	"
ष0	"	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
स0	स्त्रियाम्	"	स्त्रीषु

1. अवी–तन्त्री–तरी–लक्ष्मी–घी–ह्री–श्रीणामुणादिषु ।
सप्तस्त्रीलिङ्गशब्दानां न सुलोपः कदाचन ।।
(मध्यसि0 कौमुदी पृ067 सं0पं0 विश्वनाथशास्त्री मोतीलाल बनारसीदास, 1975)

(४) उकारान्त (अ) पुंलिङ्ग

भानु (सूर्य)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	भानुः	भानू	भानवः
सं0	भानो	”	”
द्वि0	भानुम्	”	भानून्
तृ0	भानुना	भानुभ्याम्	भानुभिः
च0	भानवे	”	भानुभ्यः
पं0	भानोः	”	”
ष0	”	भान्वोः	भानूनाम्
स0	भानौ	”	भानुषु

शिशु, साधु, गुरु, विष्णु, रिपु आदि उकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं।

(आ) नपुंसकलिङ्ग

मधु (शहद)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	मधु	मधुनी	मधूनि
सं0	मधो, मधु	”	”
द्वि0	मधु	”	”
तृ0	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
च0	मधुने	”	मधुभ्यः
पं0	मधुनः	”	”
ष0	”	मधुनोः	मधूनाम्
स0	मधुनि	”	मधुषु

अश्रु (आँसू), अम्बु (जल), वस्तु, वसु (धन) आदि उकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप मधु के समान होते हैं।

(इ) स्त्रीलिङ्ग

धेनु (गाय)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	धेनुः	धेनू	धेनवः
सं0	धेनो	”	”
द्वि0	धेनुम्	”	धेनूः
तृ0	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
च0	धेनवे	”	धेनुभ्यः
पं0	धेनोः	”	”
ष0	”	धेन्वोः	धेनूनाम्
स0	धेनौ	”	धेनुषु

तनु (शरीर), रज्जु (रस्सी), चञ्चु (चोंच) आदि उकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप धेनु के समान होते हैं ।

एकवचन में च0 से स0 तक इसके वैकल्पिक रूप भी होते हैं–

च0 – धेन्वै, पं0 एवं ष0 – धेन्वाः, स0 – धेन्वाम्।

तनु (शरीर), रज्जु (रस्सी),चञ्चु (चोंच) आदि उकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं ।

(vi) ऊकारान्त – स्त्रीलिङ्ग

वधू

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	वधूः	वध्वौ	वध्वः
सं0	वधु	”	”
द्वि0	वधूम्	”	वधूः
तृ0	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
च0	वध्वै	”	वधूभ्यः
पं0	वध्वाः	”	”
ष0	”	वध्वोः	वधूनाम्
स0	वध्वाम्	”	वधूषु

चमू (सेना), श्वश्रू (सास), चम्पू (गद्य–पद्यमय काव्य) आदि ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप वधू के समान होते हैं।

(vii) ऋकारान्त (अ) पुंलिङ्ग

पितृ (पिता)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	पिता	पितरौ	पितरः
सं0	पितः	"	"
द्वि0	पितरम्	"	पितॄन्
तृ0	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
च0	पित्रे	"	पितृभ्यः
पं0	पितुः	"	"
ष0	"	पित्रोः	पितॄणाम्
स0	पितरि	"	पितृषु

जामातृ, भ्रातृ, देवृ, (देवर), नृ आदि के रूप पितृ के समान होते हैं।

दातृ (देने वाला)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	दाता	दातारौ	दातारः
सं0	दातः	"	"
द्वि0	दातारम्	"	दातॄन्
तृ0	दात्रा	दातृभ्याम्	दातृभिः
च0	दात्रे	"	दातृभ्यः
पं0	दातुः	"	"
ष0	"	दात्रोः	दातॄणाम्
स0	दातरि	"	दातृषु

कर्तृ, धातृ (ब्रह्मा), वक्तृ (बोलने वाला), नेतृ (ले जाने वाला), श्रोतृ (सुनने वाला), सवितृ (सूर्य), भर्तृ (स्वामी), द्रष्टृ (देखने वाला) आदि ऋकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं।

नृ के षष्ठी बहुवचन में दो रूप होते हैं –

नृणाम् (दीर्घ रहित) और नॄणाम् (दीर्घ सहित)
नृ के पूरे रूप इस प्रकार हैं–

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	ना	नरौ	नरः
सं0	नः	"	"
द्वि0	नरम्	"	नॄन्
तृ0	न्रा	नृभ्याम्	नृभिः
च0	न्रे	"	नृभ्यः
पं0	नुः	"	"
ष0	"	न्रोः	नृणाम्, नॄणाम्
स0	नरि	"	नृषु

(आ) नपुंसकलिङ्ग

धातृ, कर्तृ, नेतृ, रक्षितृ आदि शब्द विशेषण हैं। अतएव इनके प्रयोग तीनों लिङ्गों में हो सकते हैं। पुंलिङ्ग में इनके रूप दातृ के समान होते हैं। नपुंसकलिङ्ग के रूप इस प्रकार होते हैं–

धातृ (धारण करने वाला)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	धातृ	धातृणी	धातॄणि
सं0	धातः, धातृ	"	"
द्वि0	धातृ	"	"
तृ0	धात्रा, धातृणा	धातृभ्याम्	धातृभिः
च0	धात्रे, धातृणे	"	धातृभ्यः
पं0	धातुः, धातृणः	"	"
ष0	" "	धात्रोः, धातृणोः	धातॄणाम्
स0	धातरि, धातृणि	" "	धातृषु

कर्तृ, नेतृ आदि नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं।

(इ) स्त्रीलिङ्ग

1. स्वसृ (बहन) के रूप पुं. दातृ के समान होते हैं। केवल द्वितीया बहुवचन में भिन्न रूप होता है– स्वसॄः।

2. मातृ, दुहितृ (कन्या), यातृ (जेठानी या देवरानी) ननान्दृ (ननद) के रूप पितृवत् होते हैं। केवल द्वितीया बहुवचन में भिन्न रूप होता है, जैसे– मातृः, दुहितृः, यातृः ननान्दृः। इनके पूरे रूप इस प्रकार होते हैं–

मातृ

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	माता	मातरौ	मातरः
सं0	मातः	"	"
द्वि0	मातरम्	"	मातृः
तृ0	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
च0	मात्रे	"	मातृभ्यः
पं0	मातुः	"	"
ष0	"	मात्रो	मातृणाम्
स0	मातरि	"	मातृषु

(viii) ओकारान्त - पुंलिङ्ग

गो (गाय या बैल)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	गौः	गावौ	गावः
सं0	"	"	"
द्वि0	गाम्	"	गाः
तृ0	गवा	गोभ्याम्	गोभिः
च0	गवे	"	गोभ्यः
पं0	गोः	"	"
ष0	"	गवोः	गवाम्
स0	गवि	"	गोषु

सभी ओकारान्त शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं, जैसे – स्त्रीलिङ्ग द्यो शब्द के रूप होते हैं – द्यौः, द्यावौ, द्यावः इत्यादि।

(ix) औकारान्त - स्त्रीलिङ्ग

नौ (नाव)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	नौः	नावौ	नावः
सं0	"	"	"
द्वि0	नावम्	"	"
तृ0	नावा	नौभ्याम्	नौभिः
च0	नावे	"	नौभ्यः
पं0	नावः	"	"
ष0	"	नावोः	नावाम्
स0	नावि	"	नौषु

सभी औकारान्त शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं, जैसे - पुंलिङ्ग ग्लौ (चन्द्रमा) के रूप - ग्लौः, ग्लावौ, ग्लावः - इत्यादि ।

अभ्यास

1. **निम्नलिखित शब्दों के रूप निर्दिष्ट विभक्तियों एवं वचनों में लिखिए—**

विद्यालय (स0 एकवचन)।	भूपति (स0 एकवचन)।
छात्र (द्वि0 बहुवचन)।	सखि (प्र0 एकवचन)।
वृक्ष (स0 बहुवचन)।	गति (स0 एकवचन)।
पत्र (प्र0 बहुवचन)।	अक्षि (ष0 एकवचन)।
फल (प्र0 एकवचन)।	नगरी (प्र0 बहुवचन)।
गङ्गा (ष0 एकवचन)।	भी (प्र0 बहुवचन)।
पति (तृ0 एकवचन)।	मातृ (द्वि0 बहुवचन)।

2. निम्नलिखित पदों के शब्द, लिङ्ग, विभक्ति और वचन यथास्थान भरिए–

पद	शब्द	लिङ्ग	विभक्ति	वचन
जरसि	———	———	———	———
गवे	———	———	———	———
गाः	———	———	———	———
नावे	———	———	———	———
नावः	———	———	———	———
गवाम्	———	———	———	———

3. इन पद्यों को उसी विभक्ति के एकवचनान्त पदों में बदलिए–

क) गुरुभिः ख) जननीषु ग) वारीणाम्
घ) मातृः ङ) सखायः।

2. व्यञ्जनान्त

प्रायः सभी व्यञ्जनान्त शब्दों के रूपों में लिङ्ग भेद के कारण विशेष अन्तर नहीं पड़ता है । कुछ प्रमुख व्यञ्जनान्त संज्ञा (विशेषण सहित) शब्दों के रूप यहाँ प्रस्तुत हैं।

(i) चकारान्त

वाच् (वाणी) स्त्री0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	वाक्, वाग्	वाचौ	वाचः
सं0	”	”	”
द्वि0	वाचम्	”	”
तृ0	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भिः
च0	वाचे	”	वाग्भ्यः
पं0	वाचः	”	”
ष0	”	वाचोः	वाचाम्
स0	वाचि	”	वाक्षु

त्वच् (स्त्री0, चमड़ा, पेड़ की छाल), शुच् (स्त्री0, सोच), ऋच् (स्त्री0, ऋग्वेद के मन्त्र - ऋचा), जलमुच् (पुं0, बादल) आदि चकारान्त शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं ।

(ii) तकारान्त

श्रीमत् (भाग्यवान्) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	श्रीमान्	श्रीमन्तौ	श्रीमन्तः
सं0	श्रीमन्	"	"
द्वि0	श्रीमन्तम्	"	श्रीमतः
तृ0	श्रीमता	श्रीमद्भ्याम्	श्रीमद्भिः
च0	श्रीमते	"	श्रीमद्भ्यः
पं0	श्रीमतः	"	"
ष0	"	श्रीमतोः	श्रीमताम्
स0	श्रीमति	"	श्रीमत्सु

धीमत् (बुद्धिमान्), बुद्धिमत्, विद्यावत् (विद्यावान्), भवत् (आप), भगवत् (भगवान्), एतावत्, कियत् आदि शब्दों के रूप श्रीमत् के समान ही होते हैं।

कुर्वत्, धावत्, पठत् आदि शतृ प्रत्ययान्त शब्दों के रूप भी इसके समान होते हैं । केवल प्रथमा एकवचन में न् के पूर्व ह्रस्व होगा, जैसे – कुर्वन्, धावन्, पठन् आदि ।

महत् (बड़ा) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	महान्	महान्तौ	महान्तः
सं0	महन्	"	"
द्वि0	महान्तम्	"	महतः

शेष रूप श्रीमत् के समान होते हैं ।

भूभृत् (राजा या पहाड़) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	भूभृत्	भूभृतौ	भूभृतः
सं0	”	”	”
द्वि0	भूभृतम्	”	”

शेष रूप श्रीमत् के समान होते हैं ।

महीभृत् (राजा या पहाड़), मरुत् (वायु), शशभृत् (चन्द्रमा), दिनकृत् (सूर्य) आदि पुंलिङ्ग शब्दों तथा सरित् (नदी), तडित्, विद्युत्, योषित् आदि तकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप भूभृत् के समान होते हैं,

जैसे –			
प्र0	सरित्	सरितौ	सरितः
द्वि0	सरितम्	सरितौ	सरितः इत्यादि ।

जगत् (संसार) नपुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0 एवं द्वि0	जगत्, जगद्	जगती	जगन्ति

शेष रूप श्रीमत् के समान होते हैं ।

इसी प्रकार सभी नपुंसकलिङ्ग तकारान्त शब्दों के रूप होते हैं ।

नपुंसकलिङ्ग बहुवचन में महत् शब्द का प्रथमा एवं द्वितीया में रूप महान्ति होता है ।

(iii) नकारान्त

(क) अन् से अन्त होने वाले नकारान्त शब्द –

आत्मन् (आत्मा) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः
सं0	आत्मन्	”	”
द्वि0	आत्मानम्	”	आत्मनः
तृ0	आत्मना	आत्मभ्याम्	आत्मभिः
च0	आत्मने	”	आत्मभ्यः
पं0	आत्मनः	”	”
ष0	”	आत्मनोः	आत्मनाम्
स0	आत्मनि	”	आत्मसु

ब्रह्मन् (ब्रह्मा), अश्मन् (पत्थर), अध्वन् (मार्ग) आदि शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं ।

पुंलिङ्ग – राजन् (राजा)

निम्नलिखित रूपों के अतिरिक्त इसके शेष रूप आत्मन् की तरह होते हैं ।

द्वि० बहुव० – राज्ञः, तृ एकव०– राज्ञा, च० एकव० – राज्ञे, पं० एवं ष० एकव० – राज्ञः, सप्तमी एकव० – राज्ञि (विकल्प से), षष्ठी और सप्तमी द्विव० – राज्ञोः तथा ष० बहुव० – राज्ञाम् ।

युवन् (जवान) पुं०

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र०	युवा	युवानौ	युवानः
सं०	युवन्	"	"
द्वि०	युवानम्	"	यूनः
तृ०	यूना	युवभ्याम्	युवभिः
च०	यूने	"	युवभ्यः
पं०	यूनः	"	"
ष०	"	यूनोः	यूनाम्
स०	यूनि	"	युवसु

श्वन् (कुत्ता) पुं०

निम्नलिखित रूपों के अतिरिक्त इसके शेष रूप युवन् की तरह होते हैं । द्वि० बहुव० – शुनः, तृ० एकव० – शुना, च० एकव० – शुने, पं० एवं ष० एकवचन –शुनः, स० एकव० – शुनि, ष० एवं स० द्वि०व० – शुनोः, ष० बहुवचन– शुनाम् ।

नामन् (नाम) नपुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	नाम	नाम्नी, नामनी	नामानि
सं0	नाम, नामन्	” ”	”
द्वि0	”	” ”	”
तृ0	नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः
च0	नाम्ने	”	नामभ्यः
पं0	नाम्नः	”	”
ष0	”	नाम्नोः	नाम्नाम्
स0	नाम्नि, नामनि	”	नामसु

व्योमन् (आकाश), धामन् (घर), सामन् (सामवेद का मन्त्र), प्रेमन् (प्यार), दामन् (रस्सी) आदि नकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं।

उपर्युक्त नपुंसकलिङ्ग के नकारान्त शब्दों से अहन् शब्द के रूप भिन्न होते हैं–

अहन् (दिन) नपुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	अहः	अह्नी, अहनी	अहानि
सं0	”	” ”	”
द्वि0	”	” ”	”
तृ0	अह्ना	अहोभ्याम्	अहोभिः
च0	अह्ने	”	अहोभ्यः
पं0	अह्नः	”	”
ष0	”	अह्नोः	अह्नाम्
स0	अह्नि, अहनि	”	अहस्सु, अहःसु

ख) इन् से अन्त होने वाले (नकारान्त) शब्द –

दण्डिन् (दण्ड धारण करने वाला) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	दण्डी	दण्डिनौ	दण्डिनः
सं0	दण्डिन्	"	"
द्वि0	दण्डिनम्	"	"
तृ0	दण्डिना	दण्डिभ्याम्	दण्डिभिः
च0	दण्डिने	"	दण्डिभ्यः
पं0	दण्डिनः	"	"
ष0	"	दण्डिनोः	दण्डिनाम्
स0	दण्डिनि	दण्डिनोः	दण्डिषु

गुणिन् (गुणी), करिन् (हाथी), धनिन् (धनी), तपस्विन् (तपस्वी), मन्त्रिन् (मन्त्री), पक्षिन् (पक्षी), शशिन् (चन्द्रमा), सुखिन् (सुखी), सत्यवादिन् (सत्य बोलने वाला) आदि इन् से अन्त होने वाले शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं।

पथिन् (रास्ता) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
सं0	"	"	"
द्वि0	पन्थानम्	"	पथः
तृ0	पथा	पथिभ्याम्	पथिभिः
च0	पथे	"	पथिभ्यः
पं0	पथः	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
ष0	"	पथोः	पथाम्
स0	पथि	"	पथिषु

(iv) **पकारान्त**

अप् (जल) स्त्री0

इसके रूप केवल बहुवचन में होते हैं –

प्र0	आपः
सं0	”
द्वि0	अपः
तृ0	अद्भिः
च0	अद्भ्यः
पं0	”
ष0	अपाम्
स0	अप्सु

(v) **रकारान्त**

गिर् (वाणी) स्त्री0

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0	गीः	गिरौ	गिरः
सं0	”	”	”
द्वि0	गिरम्	”	”
तृ0	गिरा	गीर्भ्याम्	गीर्भि
च0	गिरे	”	गीर्भ्यः
पं0	गिरः	”	”
ष0	”	गिरोः	गिराम्
स0	गिरि	”	गीर्षु

इसी प्रकार पुर् (नगर), धुर् (धुरी) शब्दों के रूप होते हैं ।

(vi) शकारान्त

तादृश् (उसके समान) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	तादृक्	तादृशौ	तादृशः
सं0	”	”	”
द्वि0	तादृशम्	”	”
तृ0	तादृशा	तादृग्भ्याम्	तादृग्भिः
च0	तादृशे	”	तादृग्भ्यः
पं0	तादृशः	”	”
ष0	”	तादृशोः	तादृशाम्
स0	तादृशि	”	तादृक्षु

इसी प्रकार भवादृश् (आपके समान), मादृश् (मेरे समान), त्वादृश् (तुम्हारे समान), एतादृश् (इसके समान) इत्यादि शब्दों के रूप होते हैं। तादृश् आदिशब्द (समानार्थ) अकारान्त भी हैं,जिसके रूप बालक के समान होते हैं।

दिश् (दिशा) स्त्री0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	दिक्, दिग्	दिशौ	दिशः
सं0	” ”	”	”
द्वि0	दिशम्	”	”
तृ0	दिशा	दिग्भ्याम्	दिग्भिः
च0	दिशे	”	दिग्भ्यः
पं0	दिशः	”	”
ष0	”	दिशोः	दिशाम्
स0	दिशि	”	दिक्षु

(vii) सकारान्त

पुंस् (पुरुष) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	पुमान्	पुमांसौ	पुमांसः
सं0	पुमन्	,,	,,
द्वि0	पुमांसम्	,,	पुंसः
तृ0	पुंसा	पुम्भ्याम्	पुम्भिः
च0	पुंसे	,,	पुम्भ्यः
पं0	पुंसः	,,	,,
ष0	,,	पुंसोः	पुंसाम्
स0	पुंसि	,,	पुंसु

विद्वस् (विद्वान्) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
सं0	विद्वन्	,,	,,
द्वि0	विद्वांसम्	,,	विदुषः
तृ0	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
च0	विदुषे	,,	विद्वद्भ्यः
पं0	विदुषः	,,	,,
ष0	,,	विदुषोः	विदुषाम्
स0	विदुषि	,,	विद्वत्सु

गरीयस् (अधिक बड़ा) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	गरीयान्	गरीयांसौ	गरीयांसः
सं0	गरीयः	,,	,,
द्वि0	गरीयांसम्	,,	गरीयसः
तृ0	गरीयसा	गरीयोभ्याम्	गरीयोभिः
च0	गरीयसे	,,	गरीयोभ्यः
पं0	गरीयसः	,,	,,
ष0	,,	गरीयसोः	गरीयसाम्
स0	गरीयसि	,,	गरीयःसु, गरीयस्सु

इसी प्रकार लघीयस् (उससे छोटा), द्रढीयस् (अधिक मजबूत), श्रेयस् (अधिक कल्याणकारी) आदि शब्दों के रूप होते हैं ।

चन्द्रमस् (चन्द्रमा) पुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	चन्द्रमाः	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
सं0	चन्द्रमः	,,	,,
द्वि0	चन्द्रमसम्	,,	,,

शेष रूप गरीयस् के समान ।

दिवौकस् (देवता), सुमनस् (अच्छे मन वाला), महायशस् (बड़े यश वाला), वेधस् (ब्रह्मा), दुर्वासस् (बुरे कपड़ों वाला), वनौकस् (वनवासी), विशालवक्षस् (बड़ी छाती वाला), महातेजस् (बड़ा तेजस्वी), महौजस् (बड़ा ओजस्वी) आदि सकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप इसी प्रकार होते हैं ।

पयस् (दूध या पानी) नपुं0

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	पयः	पयसी	पयांसि
सं0	,,	,,	,,
द्वि0	,,	,,	,,
तृ0	पयसा	पयोभ्याम्	पयोभिः
च0	पयसे	,,	पयोभ्यः
पं0	पयसः	,,	,,
ष0	,,	पयसोः	पयसाम्
स0	पयसि	,,	पयःसु, पयस्सु

इसी प्रकार मनस् (मन), अम्भस् (जल), नभस् (आकाश), सरस् (तालाब), तमस् (अन्धकार), वयस् (उम्र), वक्षस् (छाती), उरस् (छाती), यशस् (यश), वचस् (वचन), शिरस् (शिर), तपस् (तप), रजस् (धूल), अयस् (लोहा), चेतस् (चित्त), छन्दस् (छन्द), वासस् (वस्त्र), एनस् (पाप), ओकस् (गृह) इत्यादि नपुंसकलिङ्ग सकारान्त शब्दों के रूप होते हैं ।

अभ्यास

1. **निर्दिष्ट विभक्तियों एवं वचनों में निम्नलिखित शब्दों के रूप लिखिए–**

वाच्	(च० एकव०)।	दण्डिन्	(ष० एकव०)।
वाच्	(स० एकव०)।	पथिन्	(द्वि० बहुव०)।
ऋच्	(प्र० एकव०)।	पथिन्	(स० एकव०)।
भवत्	(स० एकव०)।	महत्	(प्र० बहुव०)।
बुद्धिमत्	(प्र० एकव०)।	गिर्	(प्र० बहुव०)।
आत्मन्	(द्वि० बहुव०)।	दिश्	(द्वि० बहुव०)।
राजन्	(प्र० बहुव०)।	पुंस्	(प्र० बहुव०)।
युवन्	(द्वि० बहुव०)।	पुंस्	(द्वि० बहुव०)।
युवन्	(ष० बहुव०)।	विद्वस्	(द्वि० बहुव०)।
विद्वस्	(तृ० द्विव०)।	पयस्	(प्र० एकव०)।
अहन्	(प्र० बहुव०)।	पयस्	(स० बहु०)।

2. **निम्नलिखित पदों के शब्द, लिङ्ग, विभक्ति तथा वचन भरिए–**

पद	शब्द	लिङ्ग	विभक्ति	वचन
वाक्	——	——	——	——
श्रीमताम्	——	——	——	——
यूनः	——	——	——	——
दण्डी	——	——	——	——
पथा	——	——	——	——
महान्	——	——	——	——
राज्ञि	——	——	——	——
गिरे	——	——	——	——
दिक्षु	——	——	——	——
पुंसे	——	——	——	——

II. सर्वनाम शब्द (Pronouns)

वह शब्द जो किसी संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होता है, **सर्वनाम** कहलाता है । संस्कृत में 'सर्व' आदि लगभग 35 शब्द सर्वनाम हैं।[1] कुछ प्रमुख सर्वनाम के रूप यहाँ दिए जा रहे हैं । सर्वनाम शब्दों के संबोधन नहीं होते। अस्मद् (मैं) तथा युष्मद् (तुम) के रूप तीनों लिङ्गों में एक समान होते हैं । शेष सर्वनाम शब्दों के तीनों लिङ्गों में भिन्न रूप होते हैं ।

1. स्वरान्त

सर्व (सब)

सर्व, पूर्व, अन्य आदि अकारान्त सर्वनाम शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में बालक के समान होते हैं, किन्तु इनके निम्नलिखित रूप भिन्न होते हैं–
प्र0 बहुव0 – सर्वे । च0 एकव0 – सर्वस्मै । पं0 एकव0 – सर्वस्मात्।
स0 – सर्वेषाम् स0 एकव0 – सर्वस्मिन् ।

इनके पूरे रूप इस प्रकार हैं ।

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वि0	सर्वम्	,,	सर्वान्
तृ0	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
च0	सर्वस्मै	,,	सर्वेभ्यः
पं0	सर्वस्मात्	,,	,,
ष0	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
स0	सर्वस्मिन्	,,	सर्वेषु

1. सर्वादीनि सर्वनामानि । ❑ पा0 1.1. 27

सर्वादि – 1. सर्व, 2. विश्व, 3. उभय, 4. उभ, 5. डतर जोड़कर बनाए हुए शब्द, जैसे– कतर, यतर आदि 6. डतम जोड़कर बनाये हुए शब्द जैसे – कतम, यतम आदि, 7. अन्य, 8. अन्यतर, 9. इतर, 10. त्वत्, 11. त्व, 12. नेम, 13. सम (सर्वार्थक), 14. सिम, 15. पूर्व, 16. पर, 17.अवर, 18. दक्षिण, 19. उत्तर, 20. अपर, 21. अधर, 22. स्व, 23. अन्तर, 24. त्यद्, 25. तद्, 26. यद्, 27. एतद्, 28. इदम्, 29. अदस्, 30. एक, 31. द्वि 32. युष्मद्, 33. अस्मद्, 34. भवत्, 35. किम् ।

स्त्रीलिङ्ग

इसके रूप आकारान्त 'बाला' के समान होते हैं । केवल चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी एवं सप्तमी के एकवचन में तथा षष्ठी बहुवचन में रूप भिन्न होते हैं । पूरे रूप इस प्रकार हैं–

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वि0	सर्वाम्	,,	सर्वाः
तृ0	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
च0	सर्वस्यै	,,	सर्वाभ्यः
पं0	सर्वस्याः	,,	,,
ष0	,,	सर्वयोः	सर्वासाम्
स0	सर्वस्याम्	,,	सर्वासु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वि0	,,	,,	,,

शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं ।

अन्य (दूसरा)

इसके रूप पुंलिङ्ग तथा स्त्रीलिङ्ग में सर्व के समान ही होते हैं, किन्तु नपुंसकलिङ्ग में थोड़ा भिन्न होता है, जैसे–

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0 और द्वि0	अन्यत्	अन्ये	अन्यानि
तृ0	अन्येन	अन्याभ्याम्	अन्यैः

शेष सर्व के समान होते हैं ।

पूर्व (पहला)

तीनों लिङ्गों में इसके रूप सर्व के समान होते हैं, किन्तु पुंलिङ्ग में प्रथमा बहुवचन, पञ्चमी एकवचन एवं सप्तमी एकवचन में इसके वैकल्पिक रूप भी होते हैं – क्रमशः पूर्वाः, पूर्वात्, पूर्वे । इसके पूरे रूप इस प्रकार हैं –

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	पूर्वः	पूर्वौ	पूर्वे, पूर्वाः
द्वि0	पूर्वम्	,,	पूर्वान्
तृ0	पूर्वेण	पूर्वाभ्याम्	पूर्वैः
च0	पूर्वस्मै	,,	पूर्वेभ्यः
पं0	पूर्वस्मात्, पूर्वात्	,,	,,
ष0	पूर्वस्य	पूर्वयोः	पूर्वेषाम्
स0	पूर्वस्मिन, पूर्वे	,,	पूर्वेषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0 एवं द्वि0	पूर्वम्	पूर्वे	पूर्वाणि

शेष पुंलिङ्ग के समान होते हैं ।

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	पूर्वा	पूर्वे	पूर्वाः
द्वि0	पूर्वाम्	,,	,,
तृ0	पूर्वया	पूर्वाभ्याम्	पूर्वाभिः
च0	पूर्वस्यै	,,	पूर्वाभ्यः
पं0	पूर्वस्याः	,,	,,
ष0	,,	पूर्वयोः	पूर्वासाम्
स0	पूर्वस्याम्	पूर्वयोः	पूर्वासु

अवर, दक्षिण, उत्तर, पर (दूसरा), अपर (दूसरा), अधर (नीचे वाला) आदि शब्दों के रूप पूर्व के समान होते हैं ।

उभ (दोनों)

विशेषण के समान तीनों लिङ्गों में तथा सभी विभक्तियों में केवल द्विवचन में इसका प्रयोग होता है । सभी विभक्तियों को मिलाकर इसके कुल चार रूप होते हैं–

पुं0 प्रथमा, द्वितीया – उभौ । नपुं0 तथा स्त्री0 प्र0, द्वि0 – उभे ।
सभी लिङ्गों में तृ0, च0 एवं पं0 – उभाभ्याम् । ष0, स0 – उभयोः ।

2. व्यञ्जनान्त

भवत् (आप) पुं0

इसके रूप पुंलिङ्ग में श्रीमत् के समान तथा नपुंसकलिङ्ग में जगत् के समान होते हैं । स्त्रीलिङ्ग में ई जोड़कर भवती शब्द होता है, जिसके रूप नदी के समान होते हैं ।

अस्मद् (मैं)

इसके रूप सभी लिङ्गों में समान होते हैं ।

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वि0	माम्, मा	", नौ	अस्मान्, नः
तृ0	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
च0	मह्यम्, मे	", नौ	अस्मभ्यम्, नः
पं0	मत्	"	अस्मत्
ष0	मम, मे	आवयोः, नौ	अस्माकम्, नः
स0	मयि	आवयोः	अस्मासु

युष्मद् (तुम)

इसके रूप भी तीनों लिङ्गों में समान होते हैं ।

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वि0	त्वाम्, त्वा	", वाम्	युष्मान्, वः
तृ0	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
च0	तुभ्यम्, ते	", वाम्	युष्मभ्यम्, वः
पं0	त्वत्	"	युष्मत्
ष0	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकम्, वः
स0	त्वयि	"	युष्मासु

तद् (वह)

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	सः	तौ	ते
द्वि0	तम्	”	तान्
तृ0	तेन	ताभ्याम्	तैः
च0	तस्मै	”	तेभ्यः
पं0	तस्मात्	”	”
ष0	तस्य	तयोः	तेषाम्
स0	तस्मिन्	”	तेषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० एवं द्वि०	तत्	ते	तानि

शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं ।

तद् (वह)

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	सा	ते	ताः
द्वि0	ताम्	”	”
तृ0	तया	ताभ्याम्	ताभिः
च0	तस्यै	”	ताभ्यः
पं0	तस्याः	”	”
ष0	”	तयोः	तासाम्
स0	तस्याम्	”	तासु

यद् (जो)

पुंलिङ्ग

इसके रूप भी **तद्** के समान होते हैं ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	यः	यौ	ये
द्वि0	यम्	"	यान्
तृ0	येन	याभ्याम्	यैः
च0	यस्मै	"	येभ्यः
पं0	यस्मात्	"	"
ष0	यस्य	ययोः	येषाम्
स0	यस्मिन्	"	येषु

नपुंसकलिङ्ग

प्र0 एवं द्वि0	यत्	ये	यानि

शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं ।

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	या	ये	याः
द्वि0	याम्	"	"
तृ0	यया	याभ्याम्	याभिः
च0	यस्यै	"	याभ्यः
पं0	यस्याः	"	"
ष0	"	ययोः	यासाम्
स0	यस्याम्	"	यासु

किम् (कौन)

तद्, यद् के समान ही **किम्** के भी रूप होते हैं । लेकिन पुं0 तथा स्त्री0 में किम् के स्थान पर 'क' होता है ।

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	कः	कौ	के
द्वि0	कम्	”	कान्
तृ0	केन	काभ्याम्	कैः
च0	कस्मै	”	केभ्यः
पं0	कस्मात्	”	”
ष0	कस्य	कयोः	केषाम्
स0	कस्मिन्	”	केषु

नपुंसकलिङ्ग

प्र0 एवं द्वि0 में **किम् के कानि** होता है और शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं।

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	का	के	काः
द्वि0	काम्	”	”
तृ0	कया	काभ्याम्	काभिः
च0	कस्यै	”	काभ्यः
पं0	कस्याः	”	”
ष0	”	कयोः	कासाम्
स0	कस्याम्	कयोः	कासु

इदम् (यह)

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	अयम्	इमौ	इमे
द्वि0	इमम्, एनम्	इमौ, एनौ	इमान्, एनान्
तृ0	अनेन, एनेन	आभ्याम्	एभिः
च0	अस्मै	”	एभ्यः
पं0	अस्मात्	”	”

ष0	अस्य	अनयोः, एनयोः	एषाम्
स0	अस्मिन्	” ”	एषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0	इदम्	इमे	इमानि
द्वि0	इदम्, एनत्	इमे, एने	इमानि, एनानि

शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं।

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0	इयम्	इमे	इमाः
द्वि0	इमाम्, एनाम्	इमे, एने	इमाः, एनाः
तृ0	अनया, एनया	आभ्याम्	आभिः
च0	अस्यै	”	आभ्यः
पं0	अस्याः	”	”
ष0	”	अनयोः, एनयोः	आसाम्
स0	अस्याम्	”, ”	आसु

एतद् (यह)

पुंलिङ्ग

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्र0	एषः	एतौ	एते
द्वि0	एतम्, एनम्	एतौ,एनौ	एतान्, एनान्
तृ0	एतेन, एनेन	एताभ्याम्	एतैः
च0	एतस्मै	”	एतेभ्यः
पं0	एतस्मात्	”	”
ष0	एतस्य	एतयोः, एनयोः	एतेषाम्
स0	एतस्मिन्	”, ”	एतेषु

नपुंसकलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	एतत्	एते	एतानि
द्वि0	एतत्, एनत्	एते, एने	एतानि, एनानि

शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं।

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	एषा	एते	एताः
द्वि0	एताम्, एनाम्	एते, एने	एताः, एनाः
तृ0	एतया, एनया	एताभ्याम्	एताभिः
च0	एतस्यै	"	एताभ्यः
पं0	एतस्याः	"	"
ष0	"	एतयोः, एनयोः	एतासाम्
स0	एतस्याम्	", "	एतासु

अदस् (वह)

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	असौ	अमू	अमी
द्वि0	अमुम्	"	अमून्
तृ0	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
च0	अमुष्मै	"	अमीभ्यः
पं0	अमुष्मात्	"	"
ष0	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
स0	अमुष्मिन्	"	अमीषु

नपुंसकलिङ्ग

प्र0 एवं द्वि0 अदः अमू अमूनि

शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं।

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र0	असौ	अमू	अमूः
द्वि0	अमूम्	”	”
तृ0	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
च0	अमुष्यै	”	अमूभ्यः
पं0	अमुष्याः	”	”
ष0	”	अमुयोः	अमूषाम्
स0	अमुष्याम्	”	अमूषु

अभ्यास

1. **निम्निलिखित सर्वनामों के रूप निर्दिष्ट लिङ्ग, विभक्ति एवं वचन में लिखिए–**

सर्वनाम (लिङ्ग, विभक्ति, वचन)	रूप
सर्व (पुं0 च0 एकवचन)	——
अन्य (पुं0 ष0 बहुवचन)	——
पूर्व (स्त्री0 ष0 एकवचन)	——
अस्मद् (द्वि0 बहुव0)	——
तद् (पुं0 प्र0 बहुव0)	——
एतद् (पुं0 प्र0 द्विव0)	——
अदस् (पुं0 प्र0 द्विव0)	——
इदम् (पुं0 च0 एकवचन)	——

2. **निम्नलिखित पदों के लिङ्ग, विभक्ति और वचन यथास्थान लिखिए–**

पद	शब्द	लिङ्ग	विभक्ति	वचन
सर्वेण	——	——	——	——
सर्वस्यै	——	——	——	——
सर्वस्याम्	——	——	——	——

पूर्वस्मात्	——	——	——	——
मह्यम्	——	——	——	——
तस्यै	——	——	——	——
कस्याम्	——	——	——	——
युष्माकम्	——	——	——	——
अमी	——	——	——	——
अमुष्य	——	——	——	——

3. निम्नलिखित वाक्यों में प्रयुक्त अशुद्ध सर्वनाम रूपों को शुद्ध कीजिए–

क. सुखं सर्वाणां प्रियं भवति ।

ख. इदं जलं गङ्गाजलात् अन्यम् अस्ति ।

ग. भीरुः बालकः सर्वाद् बिभेति ।

घ. भवानस्य किं नाम ?

ङ. पाणिनेः इतरा वैयाकरणा अपि प्रशस्याः ।

4. 'क' भाग में प्रयुक्त सर्वनाम पद को 'ख' भाग के नामपदों के साथ जोड़िए–

	(क)	(ख)
1.	तस्यां	नदीषु
2.	तस्मिन्	नगरात्
3.	अनया	कवितायाम्
4.	अमुष्य	ग्रामे
5.	एतस्याः	नगर्याः
6.	कस्मात्	कवितया
7.	केषाम्	नराणाम्
8.	कासाम्	नरस्य
9.	केषु	नारीणाम्
10.	कासु	ग्रन्थेषु

III. संख्यावाचक शब्द (Numerals)

1. **संख्या** – एक, द्वि (दो), त्रि (तीन) तथा चतुर् (चार्) शब्दों के रूप तीनों लिङ्गों में भिन्न होते हैं । शेष संख्यावाची शब्दों के रूप सभी लिङ्गों में समान होते हैं ।

(अ) एक

एक शब्द संख्यावाची होने पर एकवचन होता है।[1] अतः इसके रूप एकवचन में ही होते हैं । तीनों लिङ्गों में इसके रूप सर्व शब्द के समान होते हैं । पूरे रूप इस प्रकार हैं–

	पुंलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
प्र0	एकः	एकम्	एका
द्वि0	एकम्	,,	एकाम्
तृ0	एकेन	(शेष रूप पुंलिङ्ग	एकया
च0	एकस्मै	के समान)	एकस्यै
पं0	एकस्मात्		एकस्याः
ष0	एकस्य		,,
स0	एकस्मिन्		एकस्याम्

द्वि (दो)

यह शब्द नित्य द्विवचनान्त है । इसके रूप निम्नलिखित हैं–
प्र0, द्वि0, – द्वौ (पुं) । द्वे (नपुं0, स्त्री0) । तृ0, च0, पं0 – द्वाभ्याम् । ष0, स0 – द्वयोः । तृतीया से सप्तमी तक के रूप तीनों लिङ्गों में समान हैं।

[1] एक शब्द – 'कुछ', 'कोई–कोई' – इस अर्थ में बहुवचन भी होता है । जैसे – एके जनाः। एकानि फलानि । एक शब्द के अर्थ नाना प्रकार के हो सकते हैं, जैसे–

एकोऽल्पार्थे प्रधाने च प्रथमे केवले तथा ।
साधारणे समानेऽपि संख्यायां च प्रयुज्यते ।।

त्रि (तीन)

यह नित्य बहुवचनान्त है । इसके रूप इस प्रकार हैं–

	पुं0	स्त्री0
प्र0	त्रयः	तिस्रः
द्वि0	त्रीन्	”
तृ0	त्रिभिः	तिसृभिः
च0	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः
पं0	”	”
ष0	त्रयाणाम्	तिसृणाम्
स0	त्रिषु	तिसृषु

नपुंसकलिङ्ग में प्र0 एवं द्वि0 में रूप होता है – त्रीणि । शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं ।

चतुर् (चार)

यह नित्य बहुवचनान्त है । नपुंसकलिङ्ग में प्रथमा एवं द्वितीया का रूप है – चत्वारि । शेष रूप पुंलिङ्ग के समान होते हैं ।

	प्र0	द्वि0	तृ0	च0	पं0	ष0	स0
पुं0	चत्वारः	चतुरः	चतुर्भिः	चतुर्भ्यः	चतुर्भ्यः	चतुर्णाम्	चतुर्षु
स्त्री0	चतस्रः	चतस्रः	चतसृभिः	चतसृभ्यः	चतसृभ्यः	चतसृणाम्	चतसृषु

(आ) पञ्चन् (पाँच)

पञ्चन, सप्तन्, अष्टन्[1], नवन्, दशन्, एकादशन् आदि नकारान्त शब्दों के रूप एक से होते हैं तथा सभी लिङ्गों में समान होते हैं ।

प्र0	द्वि0	तृ0	च0	पं0	ष0	स0
पञ्च	पञ्च	पञ्चभिः	पञ्चभ्यः	पञ्चभ्यः	पञ्चानाम्	पञ्चसु

---

1. अष्टन् के कुछ वैकल्पिक रूप भी होते हैं, जो हैं - अष्टौ (प्र0), अष्टाभिः (तृ0), अष्टाभ्यः (च0,पं0), अष्टासु (स0) ।

(इ) षष् (छः)

प्र०	द्वि०	तृ०	च०	पं०	ष०	स०
षट्	षट्	षड्भिः	षड्भ्यः	षड्भ्यः	षण्णाम्	षट्सु

सप्तन् से अष्टादशन् तक की संख्या के रूप पञ्चन् के समान होते हैं ।

(ई) अन्य संख्यावाची शब्द

ऊनविंशतिः (19) से ऊपर के सभी संख्यावाची शब्द एकवचन हैं । नवनवतिः (99) तक के सभी शब्द स्त्रीलिङ्ग में हैं । विंशति से अन्त होने वाले शब्द जैसे – एकविंशति आदि तथा षष्टि (60), सप्तति (70), अशीति (80), नवति (90) इत्यादि इकारान्त शब्दों के रूप **मति** शब्द के समान होते हैं ।

त्रिंशत् (30) चत्वारिंशत् (40), पञ्चाशत् आदि शत् में अन्त होने वाले संख्यावाची शब्दों के रूप **भूभृत्** के समान होते हैं । शत, सहस्र के रूप **फल** के समान होते हैं ।

2. पूरणी संख्या

पहला, दूसरा, तीसरा आदि अर्थों में संस्कृत में एक, द्वि, त्रि आदि से पूरणी संख्या बनाते हैं – प्रथम, द्वितीय, तृतीय आदि । सभी पूरणी संख्या के तीनों लिङ्गों में रूप होते हैं। पुंलिङ्ग में वह अकारान्त होता है तथा **बालक** के समान उसके रूप होते हैं । नपुंसकलिङ्ग में भी वह अकारान्त होता है तथा उसके रूप **फल** के समान होते हैं । स्त्रीलिङ्ग में पूरणी संख्या एक से चार तक आकारान्त है और उसके रूप **बाला** के समान होते हैं, किन्तु चार से ऊपर की पूरणी संख्या ईकारान्त होती हैं और उसके रूप **नदी** के समान होते हैं । कुछ पूरणी संख्या के विभिन्न लिङ्गों के प्रथमा विभक्ति के रूप इस प्रकार हैं–

संख्या		पूरणी संख्या	
	पुं0	नपुं0	स्त्री0
एक	प्रथमः	प्रथमम्	प्रथमा
द्वि	द्वितीयः	द्वितीयम्	द्वितीया
त्रि	तृतीयः	तृतीयम्	तृतीया
चतुर्	तुरीयः	तुरीयम्	तुरीया
	तुर्यः	तुर्यम्	तुर्या
	चतुर्थः	चतुर्थम्	चतुर्थी
पञ्चन्	पञ्चमः	पञ्चमम्	पञ्चमी
षष्	षष्ठः	षष्ठम्	षष्ठी
सप्तन्	सप्तमः	सप्तमम्	सप्तमी

इसी प्रकार अष्टन् (8) से नवदशन् (19) तक के रूप होते हैं ।

एकोनविंशति	एकोनविंशः	एकोनविंशम्	एकोनविंशी
	एकोनविंशतितमः	एकोनविंशतितमम्	एकोनविंशतितमी

इसी प्रकार आगे की सभी संख्याओं के रूप होते हैं ।
संख्यावाची शब्दों की सूची परिशिष्ट–I में दी गई है ।

अभ्यास

1. निम्नलिखित शब्दों के रूप निर्दिष्ट विभक्ति में लिखिए–

पञ्चन् (प्र0) ——
षष् (पं0) ——
सप्तन् (द्वि0) ——
अष्टन् (च0) ——
नवन् (ष0) ——
दशन् (स0) ——

2. कोष्ठक में दिए शब्दों से उचित पद बनाकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

उदाहरण – (चतुर्) चत्वारः बालकाः ।

(एक) —— छात्रा ।
(द्वि) —— हस्तौ ।
(त्रि) —— मनुष्याः ।
(त्रि) —— फलानि ।
(चतुर्) —— पुस्तकानि ।
(चतुर्) —— नगरीणाम् ।

3. पूरणी संख्या बनाइए–

		पुं0	स्त्री0	नपुं0
उदाहरण–	एक	प्रथमः	प्रथमा	प्रथमम्
	द्वि	——	——	——
	त्रि	——	——	——
	चतुर्	——	——	——
	पञ्चन्	——	——	——
	षष्	——	——	——
	एकादशन्	——	——	——
	विंशतिः	——	——	——

4. निम्नलिखित अङ्कों के लिए संख्यावाचक शब्द संस्कृत में लिखिए–

3, 16, 19, 30, 48, 49, 70, 99, 100

चतुर्थ अध्याय

धातुरूप

(Conjugation of Verbs)

परिचय

भवति, पचति, शृणोति, गृह्णाति–इत्यादि क्रिया-पदों की प्रकृति या मूल है–भू, पच्, श्रु, ग्रह् आदि। इसी प्रकृति या मूल को **धातु** (root) कहते हैं। भ्वादि, अदादि इत्यादि दस गणों में पठित क्रिया-वाचक शब्द **धातु** कहलाते हैं।[1] इसके अतिरिक्त कुछ नाम-पद भी क्यच्, क्यङ्, क्विप्, णिच् आदि प्रत्यय लगने के कारण धातु बनते हैं और वे क्रिया-पदों की तरह प्रयुक्त होते हैं–जैसे पुत्रीयति, ओजायते आदि।

सन्, यङ् आदि प्रत्यय जुड़ने पर जो सन्नन्त और यङन्त आदि रूप बनते हैं उन्हें भी धातु मानते हैं–जैसे पिपठिषति का पिपठिष और पापच्यते का पापच्य धातु माना जाता है।[2] धातु से बने हुए तिङन्त रूपों पर विविध वाच्यों का प्रभाव पड़ता है।

---

1. भूवादयो धातवः। ❑ पा. 1.3.1

2. सनाद्यन्ता धातवः। ❑ पा. 3.1.32

वाच्य (Voice)

(अ) कर्तृवाच्य या कर्तरि प्रयोग (Active Voice)

कुछ वाक्य कर्तृप्रधान होते हैं और कुछ कर्म–प्रधान होते हैं तथा कुछ में क्रिया या भाव की प्रधानता होती है। जिस वाक्य में क्रिया के रूपों के वचन और पुरुष कर्ता के वचन और पुरुष के अनुसार चलते हैं उन्हें कर्तृ–प्रधान वाक्य माना जाता है। ऐसे वाक्यों के प्रयोग को कर्तरि प्रयोग या कर्तृवाच्य कहते हैं। जैसे–

रामः ग्रामं गच्छति।
सीतारामौ ग्रामं गच्छतः।
बालकाः ग्रामं गच्छन्ति।
त्वं ग्रामं गच्छसि।
युवां ग्रामं गच्छथः।
यूयं ग्रामं गच्छथ।
अहं ग्रामं गच्छामि।
आवां ग्रामं गच्छावः।
वयं ग्रामं गच्छामः।

इन वाक्यों के क्रियारूप कर्ता के वचन और पुरुषों से प्रभावित हैं। उनके वचन कर्ता के पुरुष और वचन के अनुसार बदलते हैं । अतः उन्हें कर्तरि प्रयोग या **कर्तृवाच्य** कहते हैं । कर्तरि प्रयोग में कर्ता से प्रथमा और कर्म से द्वितीया होती है।

(आ) कर्मवाच्य या कर्मणि प्रयोग (Passive Voice)

कर्मवाच्य या कर्मणि प्रयोग में क्रिया-पद कर्म से प्रभावित होते हैं । अर्थात् क्रिया-पदों के वचन और पुरुष कर्म के वचन और पुरुष के अनुरूप होते हैं। जैसे–

रामेण फलं भक्ष्यते।
बालकैः फलं भक्ष्यते।
मया, त्वया, तैः, ताभिश्च फलं भक्ष्यते।
बालकेन फलानि भक्ष्यन्ते।
मया द्वे कविते श्रूयेते।

त्वया अहं दृश्ये।
तेन वयं दृश्यामहे।
मया यूयं दृश्यध्वे।

इत्यादि वाक्यों में क्रिया-पद के रूप कर्म के वचन और पुरुष से प्रभावित हैं। कर्मवाच्य में कर्ता से तृतीया और कर्म से प्रथमा होती है। कर्मवाच्य में सकर्मक धातुओं का ही प्रयोग होता है।

(इ) भाववाच्य या भावे प्रयोग

भाववाच्य में क्रिया या भाव की प्रधानता होती है। उस पर कर्ता का प्रभाव नहीं होता है। कर्म तो वहाँ होता ही नहीं। अतः उसके प्रभाव पड़ने पर या न पड़ने की बात ही नहीं उठती। भाववाच्य में क्रिया-पद सदा एकवचन और प्रथम पुरुष में प्रयुक्त होता है, जैसे–

त्वया नृपेण भूयते।
मया नृपेण भूयते।
बालकैरत्र स्थीयते।
स्वकोटरे पक्षिभिः शय्यते।

भावे प्रयोग या भाववाच्य में उन्हीं धातुओं का प्रयोग हो सकता है जो धातुएँ अकर्मक होती हैं।

परस्मैपदी, आत्मनेपदी एवं उभयपदी धातुएँ

संस्कृत भाषा में क्रिया रूपों की विविधता की दृष्टि से धातुएं मुख्यतः दो प्रकार की होती हैं, क्योंकि उनसे जुड़ने वाले प्रत्यय दो भिन्न प्रकार के होते हैं।

ति, तस्, अन्ति आदि प्रत्ययों को **परस्मैपद-प्रत्यय** कहा जाता है। अतः जिन धातुओं से ये प्रत्यय आते हैं उन्हें **परस्मैपदी धातु** कहते हैं। **ते, इते, अन्ते** आदि प्रत्ययों को **आत्मनेपद-प्रत्यय** कहा जाता है। अतः जिनसे ये प्रत्यय आते हैं उन्हें **आत्मनेपदी धातु** कहा जाता है। संस्कृत में कुछ धातुएँ ऐसी भी हैं जिनसे ये दोनों प्रकार के प्रत्यय आते हैं, अतः उन्हें **उभयपदी धातु** कहा जाता है।

धातुओं का यह वर्गीकरण कर्तृवाच्य के प्रत्ययों को ध्यान में रखकर किया गया है किन्तु कर्मवाच्य या भाववाच्य में इस नियम का अपवाद

देखने को मिलता है। अतः परस्मैपदी धातु से भी आत्मनेपद-प्रत्यय कर्मवाच्य एवं भाववाच्य में होते हैं। इन वाच्यों में परस्मैपद का प्रयोग कभी भी नहीं होता।

इसके अतिरिक्त यह बात ध्यान देने योग्य है कि परस्मैपदी धातुएँ भी उपसर्ग विशेष के साथ प्रयुक्त होने पर आत्मनेपदी बन जाती हैं। इसी प्रकार उपसर्ग-विशेष के साथ आत्मनेपदी धातु का प्रयोग परस्मैपद में हो जाता है जैसे 'स्था' धातु का सामान्य रूप परस्मैपद में 'तिष्ठति' है किन्तु 'प्र' उपसर्ग के साथ आने पर 'प्रतिष्ठते' आदि आत्मनेपद में प्रयोग होता है। रम् धातु मूलतः आत्मनेपदी है, अतः 'रमते' रूप होता है। किन्तु 'वि' उपसर्ग आ जाने पर उसका 'विरमति' आदि परस्मैपद में रूप होता है।

दस गण एवं उनके विकरण

कर्तृवाच्य के रूपों में विकरणों का भेद भी पाया जाता है। वे विकरण दस हैं। इन्हीं विकरणों को ध्यान में रखते हुए धातुओं को दस गणों में बाँटा गया है। प्रकृति (धातु) और प्रत्यय (तिङ्) के बीच में आने वाले उप-प्रत्यय को विकरण कहा जाता है। कर्तृवाच्य के विकरणों की तालिका नीचे दी जाती है–

गण	विकरण	धातु	परस्मैपदी-रूप	आत्मनेपदी-रूप
1. भ्वादि	शप्	भू	भवति	——
	(अ)	वृत्		वर्तते
		अद्	अत्ति	——
2. अदादि	शप्–लुक्	हन्	हन्ति	——
	(0)	शीङ् (शी)	——	शेते
3. जुहोत्यादि	श्लु	हु	जुहोति	——
	(धातु द्वित्व)	भृ	बिभर्ति	बिभृते
		दा (डुदाञ्)	ददाति	दत्ते

4. दिवादि	श्यन्	दिव्	दीव्यति	—
	(य)	बुध्	—	बुध्यते
5. स्वादि	श्नु	सु	सुनोति	सुनुते
	(नु)	चि	चिनोति	चिनुते
6. तुदादि	श	तुद्	तुदति	तुदते
	(अ)	सिच्	सिञ्चति	सिञ्चते
7. रुधादि	श्नम्	रुध्	रुणद्धि	रुन्धे
	(न)	भुज्	—	भुङ्क्ते
8. तनादि	उ	तन्	तनोति,	तनुते
		कृ	करोति	कुरुते
9. क्रयादि	श्ना	क्री	क्रीणाति	क्रीणीते
	(ना)	ज्ञा	जानाति	जानीते
10. चुरादि	णिच् (अय्)	चुर्	चोरयति	चोरयते

कर्मवाच्य और भाववाच्य में लट्, लोट् आदि लकारों में यक् (य) ही विकरण होता है। इसलिए गणभेद के कारण विकरण भेद वहाँ नहीं होता है। और न गण-भेद के कारण क्रिया-पद के रूपों में ही भेद होता है।

भू, वृत् (भ्वादि), अद्, हन्, शी (अदादि) हु, भृ दा, (जुहोत्यादि), दिव्, बुध् (दिवादि), सु, चि (स्वादि), तुद्, सिच् (तुदादि), रुध्, भुज (रुधादि), तन्, कृ (तनादि), क्री, ज्ञा (क्रयादि), चुर्, गण (चुरादि) धातुओ में यक् विकरण और आत्मनेपद समान रूप से हो जाते हैं और उनके भूयते, वृत्यते, अद्यते, हन्यते, शय्यते, हूयते, भ्रियते, दीयते, दीव्यते, बुध्यते, सूयते, चीयते, तुद्यते, सिच्यते, रुच्यते, रुध्यते, भुज्यते, 'तन्यते, क्रियते, क्रीयते, ज्ञायते, चोर्यते, गण्यते आदि रूपों में प्रायः समानता पाई जाती है। इसलिए संस्कृत

भाषा में कर्तरि प्रयोग की अपेक्षा कर्मणि प्रयोग और भावे प्रयोगों को सरलतर माना जाता है। यदि सकर्मक और अकर्मक धातुओं को पहचान लिया जाए और सकर्मक का कर्मवाच्य में और अकर्मक का भाववाच्य में प्रयोग कर दिया जाए तो विकरण, परस्मैपद आदि के कारण आने वाली जटिलता दूर हो सकती है, परन्तु सब जगह ऐसा करना सम्भव नहीं है। लोग हमेशा कर्म पर ही जोर डाल कर नहीं बोलते हैं और न क्रिया को ही वाच्य बनाते हैं। इसलिए कर्तृवाच्य को छोड़ देने पर विवक्षित अभिव्यक्ति नहीं हो पाएगी और भाषा भावानुरूप न रहकर भाव से दूर हट जाएगी। इसलिए कर्तृवाच्य को हटाया नहीं जा सकता, भले ही उसे अपनाने से हमें कितनी ही कठिनाई क्यों न हो। कर्तृवाच्य का क्षेत्र विस्तृत है। धातु चाहे सकर्मक हों या अकर्मक उनका हम कर्तृवाच्य में प्रयोग कर सकते हैं। कर्मवाच्य में केवल सकर्मक धातु गृहीत होते हैं और भाववाच्य का क्षेत्र अकर्मक धातुओं तक ही सीमित है।

लकार

क्रिया-पदों से विभिन्न कालों और आज्ञा, विधि आदि अर्थों की सूचना मिलती है। इनके सूचक उपायों को **लकार** कहा गया है। ये लकार संख्या में दस हैं। इन लकारों के स्थान में जो तिङ्–प्रत्यय होते हैं, उनमें लकार विशेष के कारण विशेषता आ जाती है। मुख्य रूप से इन प्रत्ययों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है। भ्वादि, दिवादि तुदादि एवं चुरादि गण की धातुओं से आने वाले तिङ्-प्रत्यय प्रथम वर्ग में आते हैं और शेष गणों की धातुओं से आने वाले तिङ्-प्रत्यय द्वितीय वर्ग में आते हैं। प्रथम वर्ग के प्रत्ययों को नीचे की तालिका में स्पष्ट किया जाता है–

I. प्रथम वर्ग के तिङ् प्रत्यय

लकार	काल, अर्थ	पुरुष	परस्मैपदी प्रत्यय			आत्मनेपदी प्रत्यय		
			एकव.	द्विव.	बहुव.	एकव.	द्विव.	बहुव.
1. लट्	वर्तमान	प्रथम पुरुष	ति	तः	अन्ति	ते	इते	अन्ते
		मध्यम पुरुष	सि	थः	थ	से	इथे	ध्वे
		उत्तम पुरुष	मि	वः	मः	ए	वहे	महे
2. लङ्	अनद्यतन भूत	प्रथम पुरुष	त्	ताम्	अन्	त	इताम्	अन्त
		मध्यम पुरुष	:	तम्	त	थाः	इथाम्	ध्वम्
		उत्तम पुरुष	अम्	व	म	इ	वहि	महि
3 लोट्	आज्ञार्थ प्रवर्तना	प्रथम पुरुष	तु	ताम्	अन्तु	ताम्	इताम्	अन्ताम्
		मध्यम पुरुष	--	तम्	त	स्व	इथाम्	ध्वम्
		उत्तम पुरुष	आनि	आव	आम	ऐ	आवहै	आमहै
4. विधि-लिङ्	विध्यर्थ प्रवर्तना संभावना	प्रथम पुरुष	इत्	इताम्	इयुः	ईत	ईयाताम्	ईरन्
		मध्यम पुरुष	इः	इतम्	इत	ईथाः	ईयाथाम्	ईध्वम्
		उत्तम पुरुष	इयम्	इव	इम	ई	ईवहि	ईमहि
5.लृट्*	भविष्यत्	प्रथम पुरुष	स्यति	स्यतः	स्यन्ति	स्यते	स्येते	स्यन्ते
		मध्यम पुरुष	स्यसि	स्यथः	स्यथ	स्यसे	स्येथे	स्यध्वे
		उत्तम पुरुष	स्यामि	स्यावः	स्यामः	स्ये	स्यावहे	स्यामहे

विद्यालयों में पढ़ाये जाने वाले इन प्रमुख लकारों के अतिरिक्त पाँच लकार और हैं। संस्कृत भाषा में उनके प्रयोगों का प्राचुर्य है, परन्तु विद्यालयीय पाठ्यक्रमों में उनका निर्धारण नहीं है। अतः उनके यहाँ नाममात्र गिनाए जा रहे हैं–

* लृट् लकार के तिङ्-प्रत्यय लट् की तरह होते हैं। यहाँ स्पष्टता के लिए 'स्य' (लृट् का विकरण) के साथ जोड़कर उन्हें दिखाया गया है। लृट् के प्रत्यय सभी गणों में एक से रहते हैं।

लकार	काल अर्थ	धातु	परस्मैपद-रूप	आत्मनेपद-रूप
6. लिट्	परोक्ष भूत	भू	बभूव	—
		कम्	—	चकमे
7. लुट्	अनद्यतन	भू	भविता	—
		एध्	—	एधिता
8. लुङ्	सामान्य भूत	भू	अभूत्	—
		क्षि	अक्षैषीत्	—
		वद्	अवादीत्	—
		एध्	—	ऐधिष्ट
9. लृङ्	हेतुहेतुमद्भाव	भू	अभविष्यत्	—
		एध्	—	ऐधिष्यत
10. लेट्	केवल वेद में प्रयुक्त होने वाला लिङ् का समानार्थक लकार	भू	भवाति	—
		तॄ	—	तारिषत्

सेट्, अनिट् और वेट् धातुएँ

धातु का शुद्ध रूप लृट् लकार में दिखाई पड़ता है। जैसे—पा, गम्, दृश् आदि धातु लट् में पिब, गच्छ, पश्य आदि रूपों में परिवर्तित हो जाते हैं, किन्तु लृट् में पास्यति, गमिष्यति और द्रक्ष्यति आदि रूपों में वे अविकृत रहते हैं। कुछ धातुओं के लुट् लृट् आदि लकारों के रूप में इकार (इट्) का आगम हुआ दिखाई पड़ता है और कुछ में नहीं। जिन धातुओं के लुट् लकार के रूपों में इकार होता है उन्हें **सेट्** और जिनमें इकार नहीं आता, उन्हें **अनिट्** कहते हैं। कुछ धातुएँ ऐसी भी हैं जिनके लुट् के रूपों में इकार विकल्प से आता है, उन्हें **वेट्** धातुएँ कहा जाता है। स्था, पा, हन्, गम् इत्यादि धातुओं के लुट् लकार में या तृच् प्रत्ययान्त रूपों—स्थाता, पाता, हन्ता, गन्ता— में 'इ' नहीं आता, इसलिए ये अनिट धातु हैं। भू, एध्—इन धातुओं के लुट् और तृच् प्रत्यय वाले रूपों—भविता और एधिता—में 'इ' भी समाया हुआ है। अतः ये धातु सेट् माने जाते हैं। प्रमुख धातुओं की एक सूची इस पुस्तक के **परिशिष्ट II** में दी गई है, जिसमें सेट् एवं अनिट् का भी

निर्देश हुआ है। इसकी सहायता से कहाँ इकार लगाना चाहिए कहाँ नहीं—इसका ज्ञान आसान हो जाता है। वेट् धातुएँ बहुत ही कम है, अतः उनका अधिक विवेचन आवश्यक नहीं है।

भ्वादि गण (प्रथम गण)

भ्वादि का विकरण शप् (अ) है। इस विकरण शप् का 'अ' धातु में गुण आदि विकारों का कारण होता है।

नीचे इस गण की कुछ प्रमुख धातुएँ दी जाती हैं। उनके साथ पूर्वोक्त प्रत्ययों के जोड़ने पर क्रिया-पद सरलता से बन जाते हैं।

भ्वादिगण की प्रमुख धातुएँ

परस्मैपदी

1. भू (भव्)	=	होना	सेट्	भवति
2. अर्च्	=	पूजा करना	सेट्	अर्चति
3. व्रज्	=	जाना	सेट्	व्रजति
4. क्षि (क्षय्)	=	नष्ट होना	अनिट्	क्षयति
5. स्मृ (स्मर्)	=	याद करना	अनिट्	स्मरति
6. पा (पिब)	=	पीना	अनिट्	पिबति
7. स्था (तिष्ठ)	=	ठहरना	अनिट्	तिष्ठति
8. दा (यच्छ्)	=	देना	अनिट्	यच्छति
9. गम् (गच्छ्)	=	जाना	अनिट्	गच्छति
10. दृश् (पश्य्)	=	देखना	अनिट्	पश्यति
11. घ्रा (जिघ्र्)	=	सूँघना	अनिट्	जिघ्रति
12. नम्	=	नमस्कार करना	अनिट्	नमति
13. श्रु (शृ[1])	=	सुनना	अनिट्	शृणोति

आत्मनेपदी

14. सेव्	=	सेवा करना	सेट्	सेवते
15. मुद्	=	प्रसन्न होना	सेट्	मोदते
16. रुच्	=	अच्छा लगना	सेट्	रोचते

1. इस धातु के रूप स्वादिगण की धातु के समान होते हैं, अतः विशेष विवरण स्वादि गण निरूपण में दिया गया है।

17. वृत् (वर्त्)	=	होना, विद्यमान होना	सेट्	वर्तते
18. लभ्	=	प्राप्त करना	अनिट्	लभते

उभयपदी

19. याच्	=	माँगना	सेट्	याचति, याचते
20. श्रि (श्रय्)	=	सेवा करना, अपनाना	सेट्	श्रयति, श्रयते
21. नी (नय्)	=	ले जाना	अनिट्	नयति, नयते
22. हृ (हर्)	=	चुराना, हरण करना	अनिट्	हरति, हरते
23. वह्	=	बहना, ढोना	अनिट्	वहति, वहते
24. यज्	=	यज्ञ करना	अनिट्	यजति, यजते
25. भज्	=	सेवा करना	अनिट्	भजति, भजते
26. भृ (भर्)	=	भरण–पोषण करना	अनिट्	भरति, भरते
27. ह्वे (ह्वय्)	=	पुकारना	अनिट्	ह्वयति, ह्वयते

परस्मैपदी धातुरूप

1. भू धातु, सेट्, (होना)

लट् लकार- (वर्तमान काल)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवति	भवतः	भवन्ति
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथः	भवथ
उत्तम पुरुष	भवामि	भवावः	भवामः

लोट् लकार (आज्ञार्थ)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवतु, भवतात्	भवताम्	भवन्तु
मध्यम पुरुष	भव, भवतात्	भवतम्	भवत
उत्तम पुरुष	भवानि	भवाव	भवाम

लङ् लकार (भूतकाल)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अभवत्	अभवताम्	अभवन्
मध्यम पुरुष	अभवः	अभवतम्	अभवत
उत्तम पुरुष	अभवम्	अभवाव	अभवाम

विधिलिङ् लकार (विधि, प्रवर्तनार्थ)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवेत्	भवेताम्	भवेयुः
मध्यम पुरुष	भवेः	भवेतम्	भवेत
उत्तम पुरुष	भवेयम्	भवेव	भवेम

लृट् लकार (भविष्यत् काल)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

2. पठ् (पढ़ना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पठति	पठतः	पठन्ति
मध्यम पुरुष	पठसि	पठथः	पठथ
उत्तम पुरुष	पठामि	पठावः	पठामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
ष	पठतु / पठतात्	पठताम्	पठन्तु
ष	पठ / पठतात्	पठतम्	पठत
ष	पठानि	पठाव	पठाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
]	अपठत्	अपठताम्	अपठन्
ष	अपठः	अपठतम्	अपठत
ष	अपठम्	अपठाव	अपठाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
]	पठेत्	पठेताम्	पठेयुः
ष	पठेः	पठेतम्	पठेत
ष	पठेयम्	पठेव	पठेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
]	पठिष्यति	पठिष्यतः	पठिष्यन्ति
ष	पठिष्यसि	पठिष्यथः	पठिष्यथ
ष	पठिष्यामि	पठिष्यावः	पठिष्यामः

· लङ्लकार में धातु से पूर्व अट् (अ) या आट् (आ) जुड़ जाता है। व्यञ्जन अगर धातु के आदि में हो तो अट् (अ) जुड़ता है। स्वर यदि आदि में रहे तो आट् (आ) जुड़ता है ।

3. अर्च् (पूजा करना) (प०) धातु के रूप **पठ्** धातु की तरह होते हैं, जैसे–

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अर्चति	अर्चतः	अर्चन्ति
मध्यम पुरुष	अर्चसि	अर्चथः	अर्चथ
उत्तम पुरुष	अर्चामि	अर्चावः	अर्चामः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अर्चतु	अर्चताम्	अर्चन्तु
मध्यम पुरुष	अर्च	अर्चतम्	अर्चत
उत्तम पुरुष	अर्चानि	अर्चाव	अर्चाम

लङ् लकार में इस धातु के आदि में 'आ' जुड़ता है, क्योंकि इस धातु के आदि में स्वर है, व्यञ्जन नहीं। इसलिए रूप इस तरह होगा–

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	आर्चत्	आर्चताम्	आर्चन्
मध्यम पुरुष	आर्चः	आर्चतम्	आर्चत
उत्तम पुरुष	आर्चम्	आर्चाव	आर्चाम

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अर्चेत्	अर्चेताम्	अर्चेयुः
मध्यम पुरुष	अर्चेः	अर्चेतम्	अर्चेत
उत्तम पुरुष	अर्चेयम्	अर्चेव	अर्चेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अर्चिष्यति	अर्चिष्यतः	अर्चिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	अर्चिष्यसि	अर्चिष्यथः	अर्चिष्यथ
उत्तम पुरुष	अर्चिष्यामि	अर्चिष्यावः	अर्चिष्यामः

पा, घ्रा, स्था, दाण्, दृश्, गम् आदि धातु लट्, लङ्, लोट्, विधिलिङ्– इन 4 लकारों में **पिब, जिघ्र, तिष्ठ, यच्छ, पश्य, गच्छ** आदि में बदल जाते हैं, इसका संकेत किया जा चुका है, परन्तु भविष्यत् काल में वे अपने मूल रूप में प्रयुक्त होते हैं। इसलिए लृट् लकार (भविष्यत् काल) में इनके रूप होंगे– पास्यति, घ्रास्यति, स्थास्यति, दास्यति, द्रक्ष्यति और गमिष्यति। यद्यपि गम्, भू, हृ आदि धातु अनिट् हैं। इसलिए लुट् में इनका रूप गन्ता, भविता और हर्ता होते हैं परन्तु लृट् में विशेष नियम के कारण इट् होता है।[1]

4. श्रि (श्रय्) (सेवा करना) उभयपदी, सेट् धातु–

परस्मैपद में इसके रूप 'भू' धातु के समान होते हैं, जैसे–

लट्–श्रयति, लङ्–अश्रयत्, लोट्–श्रयतु, विधिलिङ्–श्रयेत्, लृट्–श्रयिष्यति आदि।

आत्मनेपदी धातुरूप

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयते	श्रयेते	श्रयन्ते
मध्यम पुरुष	श्रयसे	श्रयेथे	श्रयध्वे
उत्तम पुरुष	श्रये	श्रयावहे	श्रयामहे

---

1. ऋद्धनोः स्ये। ❑ पा. **7.2.70**

गमेरिट् परस्मैपदेषु। ❑ पा. **7.2.58**

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयताम्	श्रयेताम्	श्रयन्ताम्
मध्यम पुरुष	श्रयस्व	श्रयेथाम्	श्रयध्वम्
उत्तम पुरुष	श्रयै	श्रयावहै	श्रयामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अश्रयत	अश्रयेताम्	अश्रयन्त
मध्यम पुरुष	अश्रयथाः	अश्रयेथाम्	अश्रयध्वम्
उत्तम पुरुष	अश्रये	अश्रयावहि	अश्रयामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयेत	श्रयेयाताम्	श्रयेरन्
मध्यम पुरुष	श्रयेथाः	श्रयेयाथाम्	श्रयेध्वम्
उत्तम पुरुष	श्रयेय	श्रयेवहि	श्रयेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयिष्यते	श्रयिष्येते	श्रयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	श्रयिष्यसे	श्रयिष्येथे	श्रयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	श्रयिष्ये	श्रयिष्यावहे	श्रयिष्यामहे

सेव् (सेवा करना) आदि केवल आत्मनेपद धतुओं के रूप भी इसी प्रकार होते हैं। जैसे– लट्–सेवते, लङ्–असेवत, लोट्–सेवताम्, विधिलिङ्–सेवेत, लृट्–सेविष्यते आदि।

5. गम् (गच्छ्) = जाना, परस्मैपदी, अनिट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति
मध्यम पुरुष	गच्छसि	गच्छथः	गच्छथ
उत्तम पुरुष	गच्छामि	गच्छावः	गच्छामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गच्छतु	गच्छताम्	गच्छन्तु
मध्यम पुरुष	गच्छ	गच्छतम्	गच्छत
उत्तम पुरुष	गच्छानि	गच्छाव	गच्छाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अगच्छत्	अगच्छताम्	अगच्छन्
मध्यम पुरुष	अगच्छः	अगच्छतम्	अगच्छत
उत्तम पुरुष	अगच्छम्	अगच्छाव	अगच्छाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गच्छेत्	गच्छेताम्	गच्छेयुः
मध्यम पुरुष	गच्छेः	गच्छेतम्	गच्छेत
उत्तम पुरुष	गच्छेयम्	गच्छेव	गच्छेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गमिष्यति	गमिष्यतः	गमिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	गमिष्यसि	गमिष्यथः	गमिष्यथ
उत्तम पुरुष	गमिष्यामि	गमिष्यावः	गमिष्यामः

6. क्षि (क्षय्) = नष्ट होना, परस्मैपदी, अनिट्

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्षयति	क्षयतः	क्षयन्ति
मध्यम पुरुष	क्षयसि	क्षयथः	क्षयथ
उत्तम पुरुष	क्षयामि	क्षयावः	क्षयामः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्षयतु	क्षयताम्	क्षयन्तु
मध्यम पुरुष	क्षय	क्षयतम्	क्षयत
उत्तम पुरुष	क्षयाणि	क्षयाव	क्षयाम

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अक्षयत्	अक्षयताम्	अक्षयन्
मध्यम पुरुष	अक्षयः	अक्षयतम्	अक्षयत
उत्तम पुरुष	अक्षयम्	अक्षयाव	अक्षयाम

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्षयेत्	क्षयेताम्	क्षयेयुः
मध्यम पुरुष	क्षयेः	क्षयेतम्	क्षयेत
उत्तम पुरुष	क्षयेयम्	क्षयेव	क्षयेम

लृट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्षेष्यति	क्षेष्यतः	क्षेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	क्षेष्यसि	क्षेष्यथः	क्षेष्यथ
उत्तम पुरुष	क्षेष्यामि	क्षेष्यावः	क्षेष्यामः

7. पा (पिब) = पीना, परस्मैपदी, अनिट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पिबति	पिबतः	पिबन्ति
मध्यम पुरुष	पिबसि	पिबथः	पिबथ
उत्तम पुरुष	पिबामि	पिबावः	पिबामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पिबतु	पिबताम्	पिबन्तु
मध्यम पुरुष	पिब	पिबतम्	पिबत
उत्तम पुरुष	पिबानि	पिबाव	पिबाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपिबत्	अपिबताम्	अपिबन्
मध्यम पुरुष	अपिबः	अपिबतम्	अपिबत
उत्तम पुरुष	अपिबम्	अपिबाव	अपिबाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पिबेत्	पिबेताम्	पिबेयुः
मध्यम पुरुष	पिबेः	पिबेतम्	पिबेत
उत्तम पुरुष	पिबेयम्	पिबेव	पिबेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति
मध्यम पुरुष	पास्यसि	पास्यथः	पास्यथ
उत्तम पुरुष	पास्यामि	पास्यावः	पास्यामः

8. व्रज् = जाना, परस्मैपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	व्रजति	व्रजतः	व्रजन्ति
मध्यम पुरुष	व्रजसि	व्रजथः	व्रजथ
उत्तम पुरुष	व्रजामि	व्रजावः	व्रजामः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	व्रजतु	व्रजताम्	व्रजन्तु
मध्यम पुरुष	व्रज	व्रजतम्	व्रजत
उत्तम पुरुष	व्रजानि	व्रजाव	व्रजाम

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अव्रजत्	अव्रजताम्	अव्रजन्
मध्यम पुरुष	अव्रजः	अव्रजलम्	अव्रजत
उत्तम पुरुष	अव्रजम्	अव्रजाव	अव्रजाम

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	व्रजेत्	व्रजेताम्	व्रजेयुः
मध्यम पुरुष	व्रजेः	व्रजेतम्	व्रजेत
उत्तम पुरुष	व्रजेयम्	व्रजेव	व्रजेम

लृट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	व्रजिष्यति	व्रजिष्यतः	व्रजिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	व्रजिष्यसि	व्रजिष्यथः	व्रजिष्यथ
उत्तम पुरुष	व्रजिष्यामि	व्रजिष्यावः	व्रजिष्यामः

9. खाद् (खाना), प0, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	खादति	खादतः	खादन्ति
मध्यम पुरुष	खादसि	खादथः	खादथ
उत्तम पुरुष	खादामि	खादावः	खादामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	खादतु	खादताम्	खादन्तु
मध्यम पुरुष	खाद	खादतम्	खादत
उत्तम पुरुष	खादानि	खादाव	खादाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अखादत्	अखादताम्	अखादन्
मध्यम पुरुष	अखादः	अखादतम्	अखादत
उत्तम पुरुष	अखादम्	अखादाव	अखादाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	खादेत्	खादेताम्	खादेयुः
मध्यम पुरुष	खादेः	खादेतम्	खादेत
उत्तम पुरुष	खादेयम्	खादेव	खादेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	खादिष्यति	खादिष्यतः	खादिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	खादिष्यसि	खादिष्यथः	खादिष्यथ
उत्तम पुरुष	खादिष्यामि	खादिष्यावः	खादिष्यामः

10. स्मृ (स्मरण करना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्मरति	स्मरतः	स्मरन्ति
मध्यम पुरुष	स्मरसि	स्मरथः	स्मरथ
उत्तम पुरुष	स्मरामि	स्मरावः	स्मरामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्मरतु	स्मरताम्	स्मरन्तु
मध्यम पुरुष	स्मर	स्मरतम्	स्मरत
उत्तम पुरुष	स्मराणि	स्मराव	स्मराम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अस्मरत्	अस्मरताम्	अस्मरन्
मध्यम पुरुष	अस्मरः	अस्मरतम्	अस्मरत
उत्तम पुरुष	अस्मरम्	अस्मराव	अस्मराम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्मरेत्	स्मरेताम्	स्मरेयुः
मध्यम पुरुष	स्मरेः	स्मरेतम्	स्मरेत
उत्तम पुरुष	स्मरेयम्	स्मरेव	स्मरेम

लृट्लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्मरिष्यति	स्मरिष्यतः	स्मरिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	स्मरिष्यसि	स्मरिष्यथः	स्मरिष्यथ
उत्तम पुरुष	स्मरिष्यामि	स्मरिष्यावः	स्मरिष्यामः

11. पच्[1] (पकाना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पचति	पचतः	पचन्ति
मध्यम पुरुष	पचसि	पचथः	पचथ
उत्तम पुरुष	पचामि	पचावः	पचामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पचतु	पचताम्	पचन्तु
मध्यम पुरुष	पच	पचतम्	पचत
उत्तम पुरुष	पचानि	पचाव	पचाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपचत्	अपचताम्	अपचन्
मध्यम पुरुष	अपचः	अपचतम्	अपचत
उत्तम पुरुष	अपचम्	अपचाव	अपचाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पचेत्	पचेताम्	पचेयुः
मध्यम पुरुष	पचेः	पचेतम्	पचेत
उत्तम पुरुष	पचेयम्	पचेव	पचेम

1. यह उभयपदी है । इसके आत्मनेपदी रूप वह् के समान होते हैं ।

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पक्ष्यति	पक्ष्यतः	पक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	पक्ष्यसि	पक्ष्यथः	पक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	पक्ष्यामि	पक्ष्यावः	पक्ष्यामः

12. पत् (गिरना), प0, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पतति	पततः	पतन्ति
मध्यम पुरुष	पतसि	पतथः	पतथ
उत्तम पुरुष	पतामि	पतावः	पतामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पततु	पतताम्	पतन्तु
मध्यम पुरुष	पत	पततम्	पतत
उत्तम पुरुष	पतानि	पताव	पताम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपतत्	अपतताम्	अपतन्
मध्यम पुरुष	अपतः	अपततम्	अपतत
उत्तम पुरुष	अपतम्	अपताव	अपताम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पतेत्	पतेताम्	पतेयुः
मध्यम पुरुष	पतेः	पतेतम्	पतेत
उत्तम पुरुष	पतेयम्	पतेव	पतेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पतिष्यति	पतिष्यतः	पतिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	पतिष्यसि	पतिष्यथः	पतिष्यथ
उत्तम पुरुष	पतिष्यामि	पतिष्यावः	पतिष्यामः

13. सेव् (सेवा करना) आत्मनेपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेवते	सेवेते	सेवन्ते
मध्यम पुरुष	सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे
उत्तम पुरुष	सेवे	सेवावहे	सेवामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेवताम्	सेवेताम्	सेवन्ताम्
मध्यम पुरुष	सेवस्व	सेवेथाम्	सेवध्वम्
उत्तम पुरुष	सेवै	सेवावहै	सेवामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असेवत	असेवताम्	असेवन्त
मध्यम पुरुष	असेवथाः	असेवेथाम्	असेवध्वम्
उत्तम पुरुष	असेवे	असेवावहि	असेवामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेवेत	सेवेयाताम्	सेवेरन्
मध्यम पुरुष	सेवेथाः	सेवेयाथाम्	सेवेध्वम्
उत्तम पुरुष	सेवेय	सेवेवहि	सेवेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेविष्यते	सेविष्येते	सेविष्यन्ते
मध्यम पुरुष	सेविष्यसे	सेविष्येथे	सेविष्यध्वे
उत्तम पुरुष	सेविष्ये	सेविष्यावहे	सेविष्यामहे

14. लभ् (पाना) आत्मनेपदी, अनिट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लभते	लभेते	लभन्ते
मध्यम पुरुष	लभसे	लभेथे	लभध्वे
उत्तम पुरुष	लभे	लभावहे	लभामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लभताम्	लभेताम्	लभन्ताम्
मध्यम पुरुष	लभस्व	लभेथाम्	लभध्वम्
उत्तम पुरुष	लभै	लभावहै	लभामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अलभत	अलभेताम्	अलभन्त
मध्यम पुरुष	अलभथाः	अलभेथाम्	अलभध्वम्
उत्तम पुरुष	अलभे	अलभावहि	अलभामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लभेत	लभेयाताम्	लभेरन्
मध्यम पुरुष	लभेथाः	लभेयाथाम्	लभेध्वम्
उत्तम पुरुष	लभेय	लभेवहि	लभेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लप्स्यते	लप्स्येते	लप्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	लप्स्यसे	लप्स्येथे	लप्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	लप्स्ये	लप्स्यावहे	लप्स्यामहे

15. वृध् (बढ़ना) आत्मनेपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्धते	वर्धेते	वर्धन्ते
मध्यम पुरुष	वर्धसे	वर्धेथे	वर्धध्वे
उत्तम पुरुष	वर्धे	वर्धावहे	वर्धामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्धताम्	वर्धेताम्	वर्धन्ताम्
मध्यम पुरुष	वर्धस्व	वर्धेथाम्	वर्धध्वम्
उत्तम पुरुष	वर्धै	वर्धावहै	वर्धामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अवर्धत	अवर्धेताम्	अवर्धन्त
मध्यम पुरुष	अवर्धथाः	अवर्धेथाम्	अवर्धध्वम्
उत्तम पुरुष	अवर्धे	अवर्धावहि	अवर्धामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्धेत	वर्धेयाताम्	वर्धेरन्
मध्यम पुरुष	वर्धेथाः	वर्धेयाथाम्	वर्धेध्वम्
उत्तम पुरुष	वर्धेय	वर्धेवहि	वर्धेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्धिष्यते	वर्धिष्येते	वर्धिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	वर्धिष्यसे	वर्धिष्येथे	वर्धिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	वर्धिष्ये	वर्धिष्यावहे	वर्धिष्यामहे

16. वृत् (होना) आत्मनेपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्तते	वर्तेते	वर्तन्ते
मध्यम पुरुष	वर्तसे	वर्तेथे	वर्तध्वे
उत्तम पुरुष	वर्ते	वर्तावहे	वर्तामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्तताम्	वर्तेताम्	वर्तन्ताम्
मध्यम पुरुष	वर्तस्व	वर्तेथाम्	वर्तध्वम्
उत्तम पुरुष	वर्तै	वर्तावहै	वर्तामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अवर्तत	अवर्तेताम्	अवर्तन्त
मध्यम पुरुष	अवर्तथाः	अवर्तेथाम्	अवर्तध्वम्
उत्तम पुरुष	अवर्ते	अवर्तावहि	अवर्तामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्तेत	वर्तेयाताम्	वर्तेरन्
मध्यम पुरुष	वर्तेथाः	वर्तेयाथाम्	वर्तेध्वम्
उत्तम पुरुष	वर्तेय	वर्तेवहि	वर्तेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्तिष्यते	वर्तिष्येते	वर्तिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	वर्तिष्यसे	वर्तिष्येथे	वर्तिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	वर्तिष्ये	वर्तिष्यावहे	वर्तिष्यामहे

17. रुच् (अच्छा लगना) आत्मनेपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोचते	रोचेते	रोचन्ते
मध्यम पुरुष	रोचसे	रोचेथे	रोचध्वे
उत्तम पुरुष	रोचे	रोचावहे	रोचामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोचताम्	रोचेताम्	रोचन्ताम्
मध्यम पुरुष	रोचस्व	रोचेथाम्	रोचध्वम्
उत्तम पुरुष	रोचै	रोचावहै	रोचामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरोचत	अरोचेताम्	अरोचन्त
मध्यम पुरुष	अरोचथाः	अरोचेथाम्	अरोचध्वम्
उत्तम पुरुष	अरोचे	अरोचावहि	अरोचामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोचेत	रोचेयाताम्	रोचेरन्
मध्यम पुरुष	रोचेथाः	रोचेयाथाम्	रोचेध्वम्
उत्तम पुरुष	रोचेय	रोचेवहि	रोचेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोचिष्यते	रोचिष्येते	रोचिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	रोचिष्यसे	रोचिष्येथे	रोचिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	रोचिष्ये	रोचिष्यावहे	रोचिष्यामहे

18. वह् = बहना, ढोना, उभयपदी, अनिट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वहति	वहतः	वहन्ति
मध्यम पुरुष	वहसि	वहथः	वहथ
उत्तम पुरुष	वहामि	वहावः	वहामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वहतु	वहताम्	वहन्तु
मध्यम पुरुष	वह	वहतम्	वहत
उत्तम पुरुष	वहानि	वहाव	वहाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अवहत्	अवहताम्	अवहन्
मध्यम पुरुष	अवहः	अवहतम्	अवहत
उत्तम पुरुष	अवहम्	अवहाव	अवहाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वहेत्	वहेताम्	वहेयुः
मध्यम पुरुष	वहेः	वहेतम्	वहेत
उत्तम पुरुष	वहेयम्	वहेव	वहेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वक्ष्यति	वक्ष्यतः	वक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	वक्ष्यसि	वक्ष्यथः	वक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	वक्ष्यामि	वक्ष्यावः	वक्ष्यामः

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वहते	वहेते	वहन्ते
मध्यम पुरुष	वहसे	वहेथे	वहध्वे
उत्तम पुरुष	वहे	वहावहे	वहामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वहताम्	वहेताम्	वहन्ताम्
मध्यम पुरुष	वहस्व	वहेथाम्	वहध्वम्
उत्तम पुरुष	वहै	वहावहै	वहामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अवहत	अवहेताम्	अवहन्त
मध्यम पुरुष	अवहथाः	अवहेथाम्	अवहध्वम्
उत्तम पुरुष	अवहे	अवहावहि	अवहामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वहेत	वहेयाताम्	वहेरन्
मध्यम पुरुष	वहेथाः	वहेयाथाम्	वहेध्वम्
उत्तम पुरुष	वहेय	वहेवहि	वहेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वक्ष्यते	वक्ष्येते	वक्ष्यन्ते
मध्यम पुरुष	वक्ष्यसे	वक्ष्येथे	वक्ष्यध्वे
उत्तम पुरुष	वक्ष्ये	वक्ष्यावहे	वक्ष्यामहे

19. **भज् (सेवा करना)** और **यज् (यज्ञ करना)** धातुओं के रूप भी **वह्** धातु की तरह होते हैं।

20. **ह्वे (ह्वय्) (पुकारना)** धातु के रूप भी परस्मैपद और आत्मनेपद में **श्रि (श्रय्)** धातु की तरह चलते हैं।

लट्–ह्वयति, ह्वयते, लङ्–अह्वयत्, अह्वयत, विधिलिङ्–ह्वयेत्, ह्वयेत, लोट्–ह्वयतु, ह्वयताम् । लृट् में उसके रूप परस्मैपद में **पा (पीना)** के समान होते हैं, जैसे–ह्वास्यति और आत्मनेपद में ये रूप होंगे–

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ह्वास्यते	ह्वास्येते	ह्वास्यन्ते
मध्यम पुरुष	ह्वास्यसे	ह्वास्येथे	ह्वास्यध्वे
उत्तम पुरुष	ह्वास्ये	ह्वास्यावहे	ह्वास्यामहे

21. **श्रु** (प., अनिट्) इस धातु के रूप स्वादिगण की धातु के समान होते हैं। अतः इसके रूप स्वादिगण के अन्तर्गत दिए गए हैं।

दिवादि गण (चतुर्थ गण)

दिवादि और तुदादि धातुओं के परस्मैपद और आत्मनेपद के रूप प्रायः भ्वादि धातुओं के समान होते हैं। दिवादि का विकरण **श्य (य)** है और तुदादि का **श (अ)** । ये दोनों गुण विरोधी हैं। इसलिए धातु में इनके कारण गुण नहीं होगा। उदाहरण के लिए इनका एक रूप दिया जाता है–

1. दिव् (खेलना आदि) परस्मैपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दीव्यति	दीव्यतः	दीव्यन्ति
मध्यम पुरुष	दीव्यसि	दीव्यथः	दीव्यथ
उत्तम पुरुष	दीव्यामि	दीव्यावः	दीव्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दीव्यतु	दीव्यताम्	दीव्यन्तु
मध्यम पुरुष	दीव्य	दीव्यतम्	दीव्यत
उत्तम पुरुष	दीव्यानि	दीव्याव	दीव्याम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदीव्यत्	अदीव्यताम्	अदीव्यन्
मध्यम पुरुष	अदीव्यः	अदीव्यतम्	अदीव्यत
उत्तम पुरुष	अदीव्यम्	अदीव्याव	अदीव्याम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दीव्येत्	दीव्येताम्	दीव्येयुः
मध्यम पुरुष	दीव्येः	दीव्येतम्	दीव्येत
उत्तम पुरुष	दीव्येयम्	दीव्येव	दीव्येम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	देविष्यति	देविष्यतः	देविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	देविष्यसि	देविष्यथः	देविष्यथ
उत्तम पुरुष	देविष्यामि	देविष्यावः	देविष्यामः

2. जन् (उत्पन्न होना) आत्मनेपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जायते	जायेते	जायन्ते
मध्यम पुरुष	जायसे	जायेथे	जायध्वे
उत्तम पुरुष	जाये	जायावहे	जायामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जायताम्	जायेताम्	जायन्ताम्
मध्यम पुरुष	जायस्व	जायेथाम्	जायध्वम्
उत्तम पुरुष	जायै	जायावहै	जायामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अजायत	अजायेताम्	अजायन्त
मध्यम पुरुष	अजायथाः	अजायेथाम्	अजायध्वम्
उत्तम पुरुष	अजाये	अजायावहि	अजायामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जायेत	जायेयाताम्	जायेरन्
मध्यम पुरुष	जायेथाः	जायेयाथाम्	जायेध्वम्
उत्तम पुरुष	जायेय	जायेवहि	जायेमहि

लृट्लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जनिष्यते	जनिष्येते	जनिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	जनिष्यसे	जनिष्येथे	जनिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	जनिष्ये	जनिष्यावहे	जनिष्यामहे

3. नश् (नष्ट होना), प०, वेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नश्यति	नश्यतः	नश्यन्ति
मध्यम पुरुष	नश्यसि	नश्यथः	नश्यथ
उत्तम पुरुष	नश्यामि	नश्यावः	नश्यामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नश्यतु	नश्यताम्	नश्यन्तु
मध्यम पुरुष	नश्य	नश्यतम्	नश्यत
उत्तम पुरुष	नश्यानि	नश्याव	नश्याम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अनश्यत्	अनश्यताम्	अनश्यन्
मध्यम पुरुष	अनश्यः	अनश्यतम्	अनश्यत
उत्तम पुरुष	अनश्यम्	अनश्याव	अनश्याम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नश्येत्	नश्येताम्	नश्येयुः
मध्यम पुरुष	नश्येः	नश्येतम्	नश्येत
उत्तम पुरुष	नश्येयम्	नश्येव	नश्येम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नशिष्यति	नशिष्यतः	नशिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	नशिष्यसि	नशिष्यथः	नशिष्यथ
उत्तम पुरुष	नशिष्यामि	नशिष्यावः	नशिष्यामः

अथवा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नङ्क्ष्यति	नङ्क्ष्यतः	नङ्क्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	नङ्क्ष्यसि	नङ्क्ष्यथः	नङ्क्ष्यथ
उत्तम पुरुष	नङ्क्ष्यामि	नङ्क्ष्यावः	नङ्क्ष्यामः

दिवादि गण की कुछ प्रमुख धातुएँ ये हैं–

1.	दिव् (दीव्)	= खेलना	परस्मैपदी,	सेट्	दीव्यति
2.	नृत्	= नाचना	"	"	नृत्यति
3.	कुप्	= क्रोध करना	"	"	कुप्यति
4.	हृष्	= प्रसन्न होना	"	"	हृष्यति
5.	क्रुध्	= क्रोध करना	"	अनिट्	क्रुध्यति
6.	द्रुह्	= द्रोह करना	"	वेट्	द्रुह्यति
7.	नश्	= नष्ट होना	"	"	नश्यति
8.	जन् (जा)	= उत्पन्न होना	आत्मनेपदी	सेट्	जायते
9.	विद्	= होना	"	अनिट्	विद्यते

इन सभी धातुओं में 'य' विकरण के साथ तिङ् प्रत्यय जुड़ने पर रूप बनेंगे, जैसे– **नृत् (प.)** –नृत्यति, अनृत्यत्, नृत्यतु, नृत्येत्। लृट् में 'स्य' विकरण सभी शप्, श्यन् आदि विकरणों का अपवाद है। इसलिए 'श्यन्' नहीं होता और रूप बनेगा–नर्तिष्यति।

तुदादि गण (षष्ठ गण)

तुदादिगण का विकरण श (अ) है। भ्वादि के **शप् (अ)** से इसमें अन्तर है। श के परे धातु में गुण नहीं होता, जैसे–तुदति (तोदति नहीं) किन्तु शप् के परे हो जाता है–भवति ।

तुदादिगण की कुछ प्रमुख धातुएँ निम्नलिखित हैं –

1.	तुद्	= कष्ट देना	उ0	अनिट्	तुदति-तुदते
2.	मुच् (मुञ्च्)	= छोड़ना	"	"	मुञ्चति-मुञ्चते
3.	सिच् (सिञ्च्)	= सींचना	"	"	सिञ्चति-सिञ्चते

4. लुप् (लुम्प्)	=	लुप्त होना	उ0	अनिट्	लुम्पति-लुम्पते
5. मिल्	=	मिलना	"	सेट्	मिलति-मिलते
6. स्पृश्	=	स्पर्श करना	प0	अनिट्	स्पृशति
7. प्रच्छ् (पृच्छ्)	=	पूछना	"	"	पृच्छति
8. क्षिप्	=	फेंकना	"	"	क्षिपति
9. विश्	=	प्रवेश करना	"	"	विशति
10. लिख्	=	लिखना	"	सेट्	लिखति
11. इष् (इच्छ्)	=	इच्छा करना	"	वेट्	इच्छति
12. मृ	=	मरना	आ0	अनिट्	म्रियते
					(लृट् में परस्मैपद)

1. **मृङ्** (मरना) आत्मनेपदी है किन्तु लृट् में परस्मैपद होता है।[1]

2. **इष्** का रूप चार लकारों में इच्छ् में बदल कर–इच्छति, ऐच्छत्, इच्छतु, इच्छेत् – होगा, किन्तु लृट् में–एषिष्यति–बनेगा।

3. **मुच्** (मुञ्च्, उभयपदी, अनिट्) का रूप उदाहरण के लिए दिया जाता है–

लट्–मुञ्चति, मुञ्चते; लङ्–अमुञ्चत् अमुञ्चत; लोट्–मुञ्चतु, मुञ्चताम्; विधिलिङ्–मुञ्चेत्, मुञ्चेत; और लृट्–मोक्ष्यति, मोक्ष्यते।

4. **लुप्** (लुम्प्) (लुप्त होना) और **सिच्** (सिञ्च्) (सींचना) धातु के रूप **मुच्** की तरह होते हैं।

5. प्रच्छ्-पृच्छ् (पूछना), प0, अनिट्

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	पृच्छति	पृच्छतः	पृच्छन्ति
मध्यम पुरुष	पृच्छसि	पृच्छथः	पृच्छथ
उत्तम पुरुष	पृच्छामि	पृच्छावः	पृच्छामः

---

1. म्रियतेर्लुङ्लिङोश्च । ❑ पा. 1.3.61

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पृच्छतु	पृच्छताम्	पृच्छन्तु
मध्यम पुरुष	पृच्छ	पृच्छतम्	पृच्छत
उत्तम पुरुष	पृच्छानि	पृच्छाव	पृच्छाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपृच्छत्	अपृच्छताम्	अपृच्छन्
मध्यम पुरुष	अपृच्छः	अपृच्छतम्	अपृच्छत
उत्तम पुरुष	अपृच्छम्	अपृच्छाव	अपृच्छाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पृच्छेत्	पृच्छेताम्	पृच्छेयुः
मध्यम पुरुष	पृच्छेः	पृच्छेतम्	पृच्छेत
उत्तम पुरुष	पृच्छेयम्	पृच्छेव	पृच्छेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	प्रक्ष्यति	प्रक्ष्यतः	प्रक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	प्रक्ष्यसि	प्रक्ष्यथः	प्रक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	प्रक्ष्यामि	प्रक्ष्यावः	प्रक्ष्यामः

6. **मिल्** (मिलना), उभयपदी, सेट्

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	मिलति	मिलतः	मिलन्ति
मध्यम पुरुष	मिलसि	मिलथः	मिलथ
उत्तम पुरुष	मिलामि	मिलावः	मिलामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	मिलतु	मिलताम्	मिलन्तु
मध्यम पुरुष	मिल	मिलतम्	मिलत
उत्तम पुरुष	मिलानि	मिलाव	मिलाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अमिलत्	अमिलताम्	अमिलन्
मध्यम पुरुष	अमिलः	अमिलतम्	अमिलत
उत्तम पुरुष	अमिलम्	अमिलाव	अमिलाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	मिलेत्	मिलेताम्	मिलेयुः
मध्यम पुरुष	मिलेः	मिलेतम्	मिलेत
उत्तम पुरुष	मिलेयम्	मिलेव	मिलेम

लृट्

मेलिष्यति, इत्यादि–पठिष्यति की तरह चलती है।

आत्मनेपद में लट्–मिलते, लोट्–मिलताम्, लङ्–अमिलत, विधिलिङ्–मिलेत, लृट्–मेलिष्यते इत्यादि पाँचों लकारों में सारे रूप **सेव्** धातु की तरह होते हैं।

7. **विश्** (प्रवेश करना) धातु के रूप **मिल्** धातु के परस्मैपदी रूपों के समान होते हैं। किन्तु लृट् में रूप–

वेक्ष्यति वेक्ष्यतः वेक्ष्यन्ति –इस प्रकार चलते हैं।

8. **लिख्** (परस्मैपदी, सेट्) के रूप होते हैं–

लट्–लिखति, लोट्–लिखतु, लङ्–अलिखत्, विधिलिङ्–लिखेत् और लृट्–लेखिष्यति।

चुरादि गण (दशम गण)

चुरादिगण का विकरण **णिच्** है। कर्तृवाच्य में **शप्** (अ) आ जाने पर दोनों मिलकर 'अय' का रूप धारण कर लेता है। णिच् के कारण धातु के इकार और उकार को गुण हो जाता है। उपधा 'अ' को तथा अन्तिम इकार उकार को वृद्धि– आ ऐ या औ हो जाता है। किन्तु कथ या गण आदि कुछ धातु ऐसे हैं जिनमें अकार का लोप होने के कारण उपधा में वृद्धि नहीं होती, जैसे–

चुर् + णिच् (अय्) + शप् (अ) = (उपधा का ओ) चोरयति

चुरादिगण की प्रमुख धातुएँ निम्नलिखित हैं–

1.	चुर्	=	चुराना	उभयपदी,	सेट्	चोरयति, चोरयते
2.	कथ	=	कहना	"	"	कथयति, कथयते
3.	गण	=	गिनना	"	"	गणयति, गणयते
4.	भक्ष्	=	खाना	"	"	भक्षयति, भक्षयते
5.	प्रथ्	=	प्रसिद्ध होना	"	"	प्राथयति, प्राथयते

इस गण के धातुओं के रूप भ्वादिगणीय धातुओं की तरह चलते हैं, जैसे–

1. कथ - कहना (उभयपदी), परस्मैपदी, सेट्

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	कथयति	कथयतः	कथयन्ति
मध्यम पुरुष	कथयसि	कथयथः	कथयथ
उत्तम पुरुष	कथयामि	कथयावः	कथयामः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	कथयतु	कथयताम्	कथयन्तु
मध्यम पुरुष	कथय	कथयतम्	कथयत
उत्तम पुरुष	कथयानि	कथयाव	कथयाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अकथयत्	अकथयताम्	अकथयन्
मध्यम पुरुष	अकथयः	अकथयतम्	अकथयत
उत्तम पुरुष	अकथयम्	अकथयाव	अकथयाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कथयेत्	कथयेताम्	कथयेयुः
मध्यम पुरुष	कथयेः	कथयेतम्	कथयेत
उत्तम पुरुष	कथयेयम्	कथयेव	कथयेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कथयिष्यति	कथयिष्यतः	कथयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	कथयिष्यसि	कथयिष्यथः	कथयिष्यथ
उत्तम पुरुष	कथयिष्यामि	कथयिष्यावः	कथयिष्यामः

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कथयते	कथयेते	कथयन्ते
मध्यम पुरुष	कथयसे	कथयेथे	कथयध्वे
उत्तम पुरुष	कथये	कथयावहे	कथयामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कथयताम्	कथयेताम्	कथयन्ताम्
मध्यम पुरुष	कथयस्व	कथयेथाम्	कथयध्वम्
उत्तम पुरुष	कथयै	कथयावहै	कथयामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अकथयत	अकथयेताम्	अकथयन्त्
मध्यम पुरुष	अकथयथाः	अकथयेथाम्	अकथयध्वम्
उत्तम पुरुष	अकथये	अकथयावहि	अकथयामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कथयेत	कथयेयाताम्	कथयेरन्
मध्यम पुरुष	कथयेथाः	कथयेयाथाम्	कथयेध्वम्
उत्तम पुरुष	कथयेय	कथयेवहि	कथयेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कथयिष्यते	कथयिष्येते	कथयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	कथयिष्यसे	कथयिष्येथे	कथयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	कथयिष्ये	कथयिष्यावहे	कथयिष्यामहे

2. चुर् - चोरी करना (उभयपदी), सेट्
परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ
उत्तम पुरुष	चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयतु	चोरयताम्	चोरयन्तु
मध्यम पुरुष	चोरय	चोरयतम्	चोरयत
उत्तम पुरुष	चोरयानि	चोरयाव	चोरयाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्
मध्यम पुरुष	अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत
उत्तम पुरुष	अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयेत्	चोरयेताम्	चोरयेयुः
मध्यम पुरुष	चोरयेः	चोरयेतम्	चोरयेत
उत्तम पुरुष	चोरयेयम्	चोरयेव	चोरयेम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसि	चोरयिष्यथः	चोरयिष्यथ
उत्तम पुरुष	चोरयिष्यामि	चोरयिष्यावः	चोरयिष्यामः

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयते	चोरयेते	चोरयन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयसे	चोरयेथे	चोरयध्वे
उत्तम पुरुष	चोरये	चोरयावहे	चोरयामहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयताम्	चोरयेताम्	चोरयन्ताम्
मध्यम पुरुष	चोरयस्व	चोरयेथाम्	चोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयै	चोरयावहै	चोरयामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचोरयत	अचोरयेताम्	अचोरयन्त
मध्यम पुरुष	अचोरयथाः	अचोरयेथाम्	अचोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	अचोरये	अचोरयावहि	अचोरयामहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयेत	चोरयेयाताम्	चोरयेरन्
मध्यम पुरुष	चोरयेथाः	चोरयेयाथाम्	चोरयेध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयेय	चोरयेवहि	चोरयेमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिष्यते	चोरयिष्येते	चोरयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसे	चोरयिष्येथे	चोरयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिष्ये	चोरयिष्यावहे	चोरयिष्यामहे

II. द्वितीय वर्ग के तिङ् प्रत्यय

(अदादि, जुह्योत्यादि, स्वादि, रुधादि, तनादि एवं क्रयादि गणों की धातुओं से होने वाले तिङ् प्रत्यय)

अदादि, जुहोत्यादि आदि धातुओं से होने वाले तिङ् प्रत्ययों में भ्वादि, चुरादि, दिवादि और तुदादि गणों के प्रत्ययों से कुछ अन्तर पाये जाते हैं। वे इस प्रकार हैं–

1. परस्मैपद के प्रत्ययों में विशेष अन्तर नहीं है। लट्, लङ् और लोट् में वे ही प्रत्यय आते हैं जो पहले दिए जा चुके हैं।
2. केवल लोट् मध्यमपुरुष एक वचन में शेष गणों में **हि** प्रत्यय लगता है। अतः भ्वादि आदि में भव, चोरय आदि रूप बनते हैं तो अदादि आदि में पाहि, देहि आदि रूप होते हैं।
3. शेष गणों में परस्मैपद में विधिलिङ् के प्रत्यय भिन्न हैं, जैसे–

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	यात्	याताम्	युस्
मध्यम पुरुष	यास्	यातम्	यात
उत्तम पुरुष	याम्	याव	याम

इन गणों में आत्मनेपद प्रत्ययों की तालिका इस प्रकार है –

लकार	काल	पुरुष	आत्मनेपद प्रत्यय		
			एक.	द्वि.	बहु.
1. लट्	वर्तमान	प्र. पु.	ते	आते	अते
		म. पु.	से	आथे	ध्वे
		उ. पु.	ए	वहे	महे
2. लोट्	आज्ञार्थ	प्र. पु.	ताम्	आताम्	अताम्
		म. पु.	स्व	आथाम्	ध्वम्
		उ. पु.	ऐ	आवहै	आमहै
3. लङ्	अनद्यतन	प्र. पु.	त	आताम्	अत
	भूत	म. पु.	थास्	आथाम्	ध्वम्
		उ. पु.	इ	वहि	महि
4. विधिलिङ्	विध्यर्थ	प्र. पु.	ईत	ईयाताम्	ईरन्
		म. पु.	ईथाः	ईयाथाम्	ईध्वम्
		उ. पु.	ईय	ईवहि	ईमहि

टिप्पणी- लृट् लकार में (तथा शेष लकारों में भी) आत्मनेपद के वे ही प्रत्यय लगते हैं जो भ्वादि आदि गणों में लगते हैं।

अदादि गण (द्वितीय गण)

अदादि में विकरण का लोप् हो जाता है। इसलिए इसका विकरण 'शून्य' माना जाता है। अदादि में लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में धातु और तिङ् का साक्षात् संबन्ध पाया जाता है।

अदादि गण की कुछ प्रमुख धातुएँ निंम्नलिखित हैं–

परस्मैपदी

1. अद्	= खाना	अनिट्	अत्ति
2. हन्	= मारना	”	हन्ति
3. या	= जाना	”	याति
4. पा	= रक्षा करना	”	पाति
5. इण् (इ)	= जाना	”	एति
6. स्वप्	= सोना	”	स्वपिति
7. वच्	= बोलना	”	वक्ति
8. अस्	= होना	सेट्	अस्ति
9. विद्	= जानना	”	वेत्ति
10. शास्	= शासन करना	”	शास्ति
11. जागृ	= जागना	”	जागर्ति
12. रुद्	= रोना	”	रोदिति

आत्मनेपदी

13. शीङ् (शी)	= सोना	सेट्	शेते
14. आस्	= बैठना, होना	”	आस्ते
15. अधि + इङ् (इ)	= अध्ययन करना	अनिट्	अधीते

उभयपदी

16. ब्रू	= बोलना	सेट्	ब्रवीति,	ब्रूते
17. दुह्	= दुहना	अनिट्	दोग्धि,	दुग्धे

1. अद् = खाना, परस्मैपदी, अनिट्

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अत्ति	अत्तः	अदन्ति
मध्यम पुरुष	अत्सि	अत्थः	अत्थ
उत्तम पुरुष	अद्मि	अद्वः	अद्मः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अत्तु	अत्ताम्	अदन्तु
मध्यम पुरुष	अद्धि	अत्तम्	अत्त
उत्तम पुरुष	अदानि	अदाव	अदाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आदत्	आत्ताम्	आदन्
मध्यम पुरुष	आदः	आत्तम्	आत्त
उत्तम पुरुष	आदम्	आद्व	आद्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अद्यात्	अद्याताम्	अद्युः
मध्यम पुरुष	अद्याः	अद्यातम्	अद्यात
उत्तम पुरुष	अद्याम्	अद्याव	अद्याम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अत्स्यति	अत्स्यतः	अत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	अत्स्यसि	अत्स्यथः	अत्स्यथ
उत्तम पुरुष	अत्स्यामि	अत्स्यावः	अत्स्यामः

अदादि के रूप भ्वादि की अपेक्षा क्लिष्ट होते हैं। धातु और प्रत्यय के बीच विकरण न होने से इस गण में प्रकृति और प्रत्ययों में अधिक विकार देखे जाते हैं, जैसे–

2. अस् = होना, प0, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अस्ति	स्तः	सन्ति
मध्यम पुरुष	असि	स्थः	स्थ
उत्तम पुरुष	अस्मि	स्वः	स्मः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अस्तु	स्ताम्	सन्तु
मध्यम पुरुष	एधि	स्तम्	अस्त
उत्तम पुरुष	असानि	असाव	असाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आसीत्	आस्ताम्	आसन्
मध्यम पुरुष	आसीः	आस्तम्	आस्त
उत्तम पुरुष	आसम्	आस्व	आस्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्यात्	स्याताम्	स्युः
मध्यम पुरुष	स्याः	स्यातम्	स्यात
उत्तम पुरुष	स्याम्	स्याव	स्याम

लृट्

इस लकार में अस् धातु को भू आदेश हो जाता है।[1] इसलिए इसके रूप भविष्यति इत्यादि भू धातु की तरह चलते हैं ।

3. हन् = मारना, प0, अनिट्, (किन्तु लृट् में विशेष नियम से इट्[2])

---

1. अस्तेर्भूः । □ पा. 2.4.52
2. ऋद्धनोः स्ये । □ पा. 7.2.70

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	हन्ति	हतः	घ्नन्ति
मध्यम पुरुष	हंसि	हथः	हथ
उत्तम पुरुष	हन्मि	हन्वः	हन्मः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	हन्तु	हताम्	घ्नन्तु
मध्यम पुरुष	जहि	हतम्	हत
उत्तम पुरुष	हनानि	हनाव	हनाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अहन्	अहताम्	अघ्नन्
मध्यम पुरुष	अहन्	अहतम्	अहत
उत्तम पुरुष	अहनम्	अहन्व	अहन्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	हन्यात्	हन्याताम्	हन्युः
मध्यम पुरुष	हन्याः	हन्यातम्	हन्यात
उत्तम पुरुष	हन्याम्	हन्याव	हन्याम

लृट् में अनिट् होने पर भी विशेष नियम से इट् होता है।

अतः हनिष्यति हनिष्यतः हनिष्यन्ति –इत्यादि रूप होते हैं।

4. पा = रक्षा करना, प0, अनिट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पाति	पातः	पान्ति
मध्यम पुरुष	पासि	पाथः	पाथ
उत्तम पुरुष	पामि	पावः	पामः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पातु	पाताम्	पान्तु
मध्यम पुरुष	पाहि	पातम्	पात
उत्तम पुरुष	पानि	पाव	पाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अपात्	अपाताम्	अपुः, अपान्
मध्यम पुरुष	अपाः	अपातम्	अपात
उत्तम पुरुष	अपाम्	अपाव	अपाम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पायात्	पायाताम्	पायुः
मध्यम पुरुष	पायाः	पायातम्	पायात
उत्तम पुरुष	पायाम्	पायाव	पायाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति
मध्यम पुरुष	पास्यसि	पास्यथः	पास्यथ
उत्तम पुरुष	पास्यामि	पास्यावः	पास्यामः

5. *या* = जाना, अनिट् के रूप **पा** धातु की तरह ही होते हैं, जैसे – लट्–याति, लोट्–यातु, लङ्–अयात्, विधिलिङ्–यायात्, और लृट्–यास्यति ।

6. इण् (इ) = जाना, प0, अनिट्,

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	एति	इतः	यन्ति
मध्यम पुरुष	एषि	इथः	इथ
उत्तम पुरुष	एमि	इवः	इमः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	एतु	इताम्	यन्तु
मध्यम पुरुष	इहि	इतम्	इत
उत्तम पुरुष	अयानि	अयाव	अयाम

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	ऐत्	ऐताम्	आयन्
मध्यम पुरुष	ऐः	ऐतम्	ऐत
उत्तम पुरुष	आयम्	ऐव	ऐम

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	इयात्	इयाताम्	इयुः
मध्यम पुरुष	इयाः	इयातम्	इयात
उत्तम पुरुष	इयाम्	इयाव	इयाम

लृट्

प्रथम पुरुष	एष्यति	एष्यतः	एष्यन्ति आदि

7. दुह् = दुहना, उ0, अनिट्
परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दोग्धि	दुग्धः	दुहन्ति
मध्यम पुरुष	धोक्षि	दुग्धः	दुग्ध
उत्तम पुरुष	दोह्मि	दुह्वः	दुह्मः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दोग्धु	दुग्धाम्	दुहन्तु
मध्यम पुरुष	दुग्धि	दुग्धम्	दुग्ध
उत्तम पुरुष	दोहानि	दोहाव	दोहाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अधोक्	अदुग्धाम्	अदुहन्
मध्यम पुरुष	अधोक्	अदुग्धम्	अदुग्ध
उत्तम पुरुष	अदोहम्	अदुह्व	अदुह्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दुह्यात्	दुह्याताम्	दुह्युः
मध्यम पुरुष	दुह्याः	दुह्यातम्	दुह्यात
उत्तम पुरुष	दुह्याम्	दुह्याव	दुह्याम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	धोक्ष्यति	धोक्ष्यतः	धोक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	धोक्ष्यसि	धोक्ष्यथः	धोक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	धोक्ष्यामि	धोक्ष्यावः	धोक्ष्यामः

आत्मनेपद में लट्–दुग्धे, लोट्–दुग्धाम्, लङ्–अदुग्ध, विधिलिङ्–दुहीत, लृट्–धोक्ष्यते आदि रूप होते हैं।

8. ब्रू = कहना, (लृट् में वच्) उभयपदी, अनिट्

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	ब्रवीति	ब्रूतः	ब्रुवन्ति
	(आह	आहतुः	आहुः)
मध्यम पुरुष	ब्रवीषि	ब्रूथः	ब्रूथ
	(आत्थ	आहथुः	–)
उत्तम पुरुष	ब्रवीमि	ब्रूवः	ब्रूमः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	ब्रवीतु	ब्रूताम्	ब्रुवन्तु
मध्यम पुरुष	ब्रूहि	ब्रूतम्	ब्रूत
उत्तम पुरुष	ब्रवाणि	ब्रवाव	ब्रवाम

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अब्रवीत्	अब्रूताम्	अब्रुवन्
मध्यम पुरुष	अब्रवीः	अब्रूतम्	अब्रूत
उत्तम पुरुष	अब्रवम्	अब्रूव	अब्रूम

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	ब्रूयात्	ब्रूयाताम्	ब्रूयुः
मध्यम पुरुष	ब्रूयाः	ब्रूयातम्	ब्रूयात
उत्तम पुरुष	ब्रूयाम्	ब्रूयाव	ब्रूयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वक्ष्यति	वक्ष्यतः	वक्ष्यन्ति इत्यादि

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ब्रूते	ब्रुवाते	ब्रुवते
मध्यम पुरुष	ब्रूषे	ब्रुवाथे	ब्रूध्वे
उत्तम पुरुष	ब्रुवे	ब्रूवहे	ब्रूमहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ब्रूताम्	ब्रुवाताम्	ब्रुवताम्
मध्यम पुरुष	ब्रूष्व	ब्रुवाथाम्	ब्रूध्वम्
उत्तम पुरुष	ब्रवै	ब्रवावहै	ब्रवामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अब्रूत	अब्रुवाताम्	अब्रुवत
मध्यम पुरुष	अब्रूथाः	अब्रुवाथाम्	अब्रूध्वम्
उत्तम पुरुष	अब्रुवि	अब्रूवहि	अब्रूमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ब्रुवीत	ब्रुवीयाताम्	ब्रुवीरन्
मध्यम पुरुष	ब्रुवीथाः	ब्रुवीयाथाम्	ब्रुवीध्वम्
उत्तम पुरुष	ब्रुवीय	ब्रुवीवहि	ब्रुवीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वक्ष्यते	वक्ष्येते	वक्ष्यन्ते इत्यादि

9. स्वप् = सोना, प0, अनिट्

स्वप् और **रुद्** धातु के लट् के अन्ति को छोड़कर सर्वत्र इट् (इ) हो जाता है। लोट् के अन्तु और उत्तम पुरुष के तीनों वचनों को छोड़कर अन्यत्र इट् (इ) हो जाता है। इसलिए रूप होते हैं–

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्वपिति	स्वपितः	स्वपन्ति
मध्यम पुरुष	स्वपिषि	स्वपिथः	स्वपिथ
उत्तम पुरुष	स्वपिमि	स्वपिवः	स्वपिमः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्वपितु	स्वपिताम्	स्वपन्तु
मध्यम पुरुष	स्वपिहि	स्वपितम्	स्वपित
उत्तम पुरुष	स्वपानि	स्वपाव	स्वपाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अस्वपत्, अस्वपीत्	अस्वपिताम्	अस्वपन्
मध्यम पुरुष	अस्वपः, अस्वपीः	अस्वपितम्	अस्वपित
उत्तम पुरुष	अस्वपम्	अस्वपिव	अस्वपिम

टिप्पणी - लङ् में प्रथम और मध्यम पुरुष के एकवचन में तिङ् के पूर्व और धातु के अन्त में अट् (अ) और ईट् (ई) भी लगता है। प्र. पु. बहुवचन और उ. पु. एकवचन को छोड़कर धातु के अन्त में सर्वत्र (इ) लग जाता है।

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्वप्यात्	स्वप्याताम्	स्वप्युः
मध्यम पुरुष	स्वप्याः	स्वप्यातम्	स्वप्यात
उत्तम पुरुष	स्वप्याम्	स्वप्याव	स्वप्याम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्वप्स्यति	स्वप्स्यतः	स्वप्स्यन्ति इत्यादि

10. रुद् = रोना, प0, अनिट् का रूप स्वप् की तरह होता है।

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोदिति	रुदितः	रुदन्ति इत्यादि

11. विद् = जानना, प0, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वेत्ति	वित्तः	विदन्ति
मध्यम पुरुष	वेत्सि	वित्थः	वित्थ
उत्तम पुरुष	वेद्मि	विद्वः	विद्मः

तथा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वेद	विदतुः	विदुः
मध्यम पुरुष	वेत्थ	विदथुः	विद
उत्तम पुरुष	वेद	विद्व	विद्म

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वेत्तु	वित्ताम्	विदन्तु
मध्यम पुरुष	विद्धि	वित्तम्	वित्त
उत्तम पुरुष	वेदानि	वेदाव	वेदाम

तथा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	विदाङ्करोतु	विदाङ्कुरुताम्	विदाङ्कुर्वन्तु
मध्यम पुरुष	विदाङ्कुरु	विदाङ्कुरुतम्	विदाङ्कुरुत
उत्तम पुरुष	विदाङ्करवाणि	विदाङ्करवाव	विदाङ्करवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अवेत्	अवित्ताम्	अविदुः
मध्यम पुरुष	अवेः, अवेत्	अवित्तम्	अवित्त
उत्तम पुरुष	अवेदम्	अविद्व	अविद्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	विद्यात्	विद्याताम्	विद्युः
मध्यम पुरुष	विद्याः	विद्यातम्	विद्यात
उत्तम पुरुष	विद्याम्	विद्याव	विद्याम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वेदिष्यति	वेदिष्यतः	वेदिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	वेदिष्यसि	वेदिष्यथः	वेदिष्यथ
उत्तम पुरुष	वेदिष्यामि	वेदिष्यावः	वेदिष्यामः

टिप्पणी – विद् के लट् में परस्मैपद के स्थान में णल् (अ), अतुस्, उस्, थल्, अथुस्, अ, णल् (अ), व, और म, आदेश भी हो जाता है। इसलिए वेत्ति आदि

रूपों के साथ-साथ वेद आदि रूप भी बनते हैं जो कि ऊपर दिए गए हैं। लोट् में वेत्तु आदि जाने-पहचाने रूपों के साथ-साथ विदाङ्करोतु इत्यादि रूप भी बनते हैं, जिन्हें बनाने का सरल तरीका यह है कि 'विदाम्' के आगे कृ धातु के लोट् के रूप 'करोतु', 'कुरुताम्' आदि जोड़ा जाए। इस धातु के लङ् में प्रथम पुरुष बहुवचन में 'अन्' नहीं लगता है किन्तु उस् लगता है।

12. शीङ्[1] = सोना, आत्मनेपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	शेते	शयाते	शेरते
मध्यम पुरुष	शेषे	शयाथे	शेध्वे
उत्तम पुरुष	शये	शेवहे	शेमहे

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	शेताम्	शयाताम्	शेरताम्
मध्यम पुरुष	शेष्व	शयाथाम्	शेध्वम्
उत्तम पुरुष	शयै	शयावहै	शयामहै

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अशेत	अशयाताम्	अशेरत
मध्यम पुरुष	अशेथाः	अशयाथाम्	अशेध्वम्
उत्तम पुरुष	अशयि	अशेवहि	अशेमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	शयीत	शयीयाताम्	शयीरन्
मध्यम पुरुष	शयीथाः	शयीयाथाम्	शयीध्वम्
उत्तम पुरुष	शयीय	शयीवहि	शयीमहि

1. प्रारंभ के चार लकारों में 'शीङः सार्वधातुके गुणः' □ पा. 7.4.21 से गुण हुआ है और लृट् में 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' □ पा. 7.3.84 से गुण होता है।

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शयिष्यते	शयिष्येते	शयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	शयिष्यसे	शयिष्येथे	शयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	शयिष्ये	शयिष्यावहे	शयिष्यामहे

13. आस् = बैठना, आत्मनेपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आस्ते	आसाते	आसते
मध्यम पुरुष	आस्से	आसाथे	आध्वे
उत्तम पुरुष	आसे	आस्वहे	आस्महे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आस्ताम्	आसाताम्	आसताम्
मध्यम पुरुष	आस्स्व	आसाथाम्	आध्वम्
उत्तम पुरुष	आसै	आसावहै	आसामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आस्त	आसाताम्	आसत
मध्यम पुरुष	आस्थाः	आसाथाम्	आध्वम्
उत्तम पुरुष	आसि	आस्वहि	आस्महि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आसीत	आसीयाताम्	आसीरन्
मध्यम पुरुष	आसीथाः	आसीयाथाम्	आसीध्वम्
उत्तम पुरुष	आसीय	आसीवहि	आसीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	आसिष्यते	आसिष्येते	आसिष्यन्ते इत्यादि

14. अधि + इङ् (इ) = अध्ययन करना, आत्मनेपदी, अनिट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अधीते	अधीयाते	अधीयते
मध्यम पुरुष	अधीषे	अधीयाथे	अधीध्वे
उत्तम पुरुष	अधीये	अधीवहे	अधीमहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अधीताम्	अधीयाताम्	अधीयताम्
मध्यम पुरुष	अधीष्व	अधीयाथाम्	अधीध्वम्
उत्तम पुरुष	अध्ययै	अध्ययावहै	अध्ययामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अध्यैत	अध्यैयाताम्	अध्यैयत
मध्यम पुरुष	अध्यैथाः	अध्यैयाथाम्	अध्यैध्वम्
उत्तम पुरुष	अध्यैयि	अध्यैवहि	अध्यैमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अधीयीत	अधीयीयाताम्	अधीयीरन्
मध्यम पुरुष	अधीयीथाः	अधीयीयाथाम्	अधीयीध्वम्
उत्तम पुरुष	अधीयीय	अधीयीवहि	अधीयीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अध्येष्यते	अध्येष्येते	अध्येष्यन्ते
मध्यम पुरुष	अध्येष्यसे	अध्येष्येथे	अध्येष्यध्वे
उत्तम पुरुष	अध्येष्ये	अध्येष्यावहे	अध्येष्यामहे

15. जागृ = जागना, परस्मैपदी, सेट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जागर्ति	जागृतः	जाग्रति
मध्यम पुरुष	जागर्षि	जागृथः	जागृथ
उत्तम पुरुष	जागर्मि	जागृवः	जागृमः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जागर्तु	जागृताम्	जाग्रतु
मध्यम पुरुष	जागृहि	जागृतम्	जागृत
उत्तम पुरुष	जागराणि	जागराव	जागराम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अजागः	अजागृताम्	अजागरुः
मध्यम पुरुष	अजागः	अजागृतम्	अजागृत
उत्तम पुरुष	अजागरम्	अजागृव	अजागृम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जागृयात्	जागृयाताम्	जागृयुः
मध्यम पुरुष	जागृयाः	जागृयातम्	जागृयात
उत्तम पुरुष	जागृयाम्	जागृयाव	जागृयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जागरिष्यति	जागरिष्यतः	जागरिष्यन्ति इत्यादि

जुहोत्यादि गण (तृतीय गण)

जुहोत्यादि धातु का विकरण **श्लु** (शून्य) माना गया है। लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में श्लु होता है। यह श्लु धातु को दुहरा देता है। लट् और लङ् के प्रथम पुरुष बहुवचन में क्रमशः अति और उस् प्रत्यय लगते हैं। लोट् के प्रथम पुरुष बहुवचन में अतु लगता है।

जुहोत्यादिगण की प्रमुख धातुएँ निम्नलिखित हैं–

1. हु = हवन करना, यज्ञ करना	परस्मैपदी,	अनिट्	जुहोति
2. भी = डरना	”	”	बिभेति
3. दा = देना	उभयपदी	”	ददाति, दत्ते
4. भृ = भरणपोषण करना	”	”	बिभर्ति, बिभृते

1. हु = (हवन करना, प0 अनिट्) का रूप इस तरह चलता है–

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जुहोति	जुहुतः	जुह्वति
मध्यम पुरुष	जुहोषि	जुहुथः	जुहुथ
उत्तम पुरुष	जुहोमि	जुहुवः	जुहुमः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जुहोतु	जुहुताम्	जुह्वतु
मध्यम पुरुष	जुहुधि	जुहुतम्	जुहुत
उत्तम पुरुष	जुहवानि	जुहवाव	जुहवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अजुहोत्	अजुहुताम्	अजुहवुः
मध्यम पुरुष	अजुहोः	अजुहुतम्	अजुहुत
उत्तम पुरुष	अजुहवम्	अजुहुव	अजुहुम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जुहुयात्	जुहुयाताम्	जुहुयुः
मध्यम पुरुष	जुहुयाः	जुहुयातम्	जुहुयात
उत्तम पुरुष	जुहुयाम्	जुहुयाव	जुहुयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	होष्यति	होष्यतः	होष्यन्ति
मध्यम पुरुष	होष्यसि	होष्यथः	होष्यथ
उत्तम पुरुष	होष्यामि	होष्यावः	होष्यामः

टिप्पणी – हु धातु के लोट् के मध्यम पुरुष एकवचन में **हि** का **धि** होता है।[1]

2. दा = देना, उभयपदी, अनिट्
परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददाति	दत्तः	ददति
मध्यम पुरुष	ददासि	दत्थः	दत्थ
उत्तम पुरुष	ददामि	दद्वः	दद्मः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददातु	दत्ताम्	ददतु
मध्यम पुरुष	देहि	दत्तम्	दत्त
उत्तम पुरुष	ददानि	ददाव	ददाम

1. हुझल्भ्यो हेर्धिः। ▫ पा. 6.4.101

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अददात्	अदत्ताम्	अददुः
मध्यम पुरुष	अददाः	अदत्तम्	अदत्त
उत्तम पुरुष	अददाम्	अदद्व	अदद्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः
मध्यम पुरुष	दद्याः	दद्यातम्	दद्यात
उत्तम पुरुष	दद्याम्	दद्याव	दद्याम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति
मध्यम पुरुष	दास्यसि	दास्यथः	दास्यथ
उत्तम पुरुष	दास्यामि	दास्यावः	दास्यामः

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दत्ते	ददाते	ददते
मध्यम पुरुष	दत्से	ददाथे	दद्ध्वे
उत्तम पुरुष	ददे	दद्वहे	दद्महे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दत्ताम्	ददाताम्	ददताम्
मध्यम पुरुष	दत्स्व	ददाथाम्	दद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	ददै	ददावहै	ददामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदत्त	अददात्ताम्	अददत
मध्यम पुरुष	अदत्थाः	अददाथाम्	अदद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अददि	अदद्वहि	अदद्महि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददीत	ददीयाताम्	ददीरन्
मध्यम पुरुष	ददीथाः	ददीयाथाम्	ददीध्वम्
उत्तम पुरुष	ददीय	ददीवहि	ददीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दास्यते	दास्येते	दास्यन्ते
मध्यम पुरुष	दास्यसे	दास्येथे	दास्यध्वे
उत्तम पुरुष	दास्ये	दास्यावहे	दास्यामहे

स्वादि गण (पञ्चम गण)

स्वादिगण के धातुओं का विकरण श्नु (नु) है। इस विकरण के कारण धातु को गुण नहीं होता है।

स्वादिगण की प्रमुख धातुएँ निम्नलिखत हैं–

1.	सु	= रस निकालना	उभयपदी,	अनिट्,	सुनोति, सुनुते
2.	चि	= चुनना, इकट्ठा करना	”	”	चिनोति, चिनुते
3.	आप्	= पाना	”	”	आप्नोति, आप्नुते
4.	श्रु	= सुनना	परस्मैपदी	”	शृणोति

1. सु (रस निचोड़ना, उ0, अनिट्) धातु के रूप
परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनोति	सुनुतः	सुन्वन्ति
मध्यम पुरुष	सुनोषि	सुनुथः	सुनुथ
उत्तम पुरुष	सुनोमि	सुन्वः, सुनुवः	सुन्मः, सुनुमः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनोतु	सुनुताम्	सुन्वन्तु
मध्यम पुरुष	सुनु	सुनुतम्	सुनुत
उत्तम पुरुष	सुनवानि	सुनवाव	सुनवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असुनोत्	असुनुताम्	असुन्वन्
मध्यम पुरुष	असुनोः	असुनुतम्	असुनुत
उत्तम पुरुष	असुनवम्	असुन्व, असुनुव	असुन्म, असुनुम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनुयात्	सुनुयाताम्	सुनुयुः
मध्यम पुरुष	सुनुयाः	सुनुयातम्	सुनुयात
उत्तम पुरुष	सुनुयाम्	सुनुयाव	सुनुयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सोष्यति	सोष्यतः	सोष्यन्ति इत्यादि

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनुते	सुन्वाते	सुन्वते
मध्यम पुरुष	सुनुषे	सुन्वाथे	सुनुध्वे
उत्तम पुरुष	सुन्वे	सुन्वहे, सुनुवहे	सुन्महे, सुनुमहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुनुताम्	सुन्वाताम्	सुन्वताम्
मध्यम पुरुष	सुनुष्व	सुन्वाथाम्	सुनुध्वम्
उत्तम पुरुष	सुनवै	सुनवावहै	सुनवामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असुनुत	असुन्वाताम्	असुन्वत
मध्यम पुरुष	असुनुथाः	असुन्वाथाम्	असुनुध्वम्
उत्तम पुरुष	असुन्वि	असुन्वहि, असुनुवहि	असुन्महि, असुनुमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सुन्वीत	सुन्वीयाताम्	सुन्वीरन्
मध्यम पुरुष	सुन्वीथाः	सुन्वीयाथाम्	सुन्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	सुन्वीय	सुन्वीवहि	सुन्वीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सोष्यते	सोष्येते	सोष्यन्ते इत्यादि

2. शक् (सकना) परस्मैपदी, अनिट्

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शक्नोति	शक्नुतः	शक्नुवन्ति
मध्यम पुरुष	शक्नोषि	शक्नुथः	शक्नुथ
उत्तम पुरुष	शक्नोमि	शक्नुवः	शक्नुमः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शक्नोतु	शक्नुताम्	शक्नुवन्तु
मध्यम पुरुष	शक्नुहि	शक्नुतम्	शक्नुत
उत्तम पुरुष	शक्नवानि	शक्नवाव	शक्नवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अशक्नोत्	अशक्नुताम्	अशक्नुवन्
मध्यम पुरुष	अशक्नोः	अशक्नुतम्	अशक्नुत
उत्तम पुरुष	अशक्नवम्	अशक्नुव	अशक्नुम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शक्नुयात्	शक्नुयाताम्	शक्नुयुः
मध्यम पुरुष	शक्नुयाः	शक्नुयातम्	शक्नुयात
उत्तम पुरुष	शक्नुयाम्	शक्नुयाव	शक्नुयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शक्ष्यति	शक्ष्यतः	शक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	शक्ष्यसि	शक्ष्यथः	शक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	शक्ष्यामि	शक्ष्यावः	शक्ष्यामः

3. चि = चुनना, इकट्ठा करना, उभयपदी, अनिट्

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिनोति	चिनुतः	चिन्वन्ति
मध्यम पुरुष	चिनोषि	चिनुथः	चिनुथ
उत्तम पुरुष	चिनोमि	चिन्वः, चिनुवः	चिन्मः, चिनुमः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिनोतु	चिनुताम्	चिन्वन्तु
मध्यम पुरुष	चिनु	चिनुतम्	चिनुत
उत्तम पुरुष	चिनवानि	चिनवाव	चिनवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचिनोत्	अचिनुताम्	अचिन्वन्
मध्यम पुरुष	अचिनोः	अचिनुतम्	अचिनुत
उत्तम पुरुष	अचिनवम्	अचिन्व, अचिनुव	अचिन्म, अचिनुम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिनुयात्	चिनुयाताम्	चिनुयुः
मध्यम पुरुष	चिनुयाः	चिनुयातम्	चिनुयात
उत्तम पुरुष	चिनुयाम्	चिनुयाव	चिनुयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चेष्यति	चेष्यतः	चेष्यन्ति इत्यादि

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिनुते	चिन्वाते	चिन्वते
मध्यम पुरुष	चिनुषे	चिन्वाथे	चिनुध्वे
उत्तम पुरुष	चिन्वे	चिन्वहे, चिनुवहे	चिन्महे, चिनुमहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिनुताम्	चिन्वाताम्	चिन्वताम्
मध्यम पुरुष	चिनुष्व	चिन्वाथाम्	चिनुध्वम्
उत्तम पुरुष	चिनवै	चिनवावहै	चिनवामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचिनुत	अचिन्वाताम्	अचिन्वत
मध्यम पुरुष	अचिनुथाः	अचिन्वाथाम्	अचिनुध्वम्
उत्तम पुरुष	अचिन्वि	अचिन्वहि, अचिनुवहि	अचिन्महि, अचिनुमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चिन्वीत	चिन्वीयाताम्	चिन्वीरन्
मध्यम पुरुष	चिन्वीथाः	चिन्वीयाथाम्	चिन्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	चिन्वीय	चिन्वीवहि	चिन्वीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चेष्यते	चेष्येते	चेष्यन्ते इत्यादि

4. आप् = पाना, उभयपदी, अनिट् के रूप प्र उपसर्ग के साथ इस प्रकार चलते हैं–

परस्मैपद में लट्–प्राप्नोति, लोट्–प्राप्नोतु, (मध्यम पु0, एकव0–प्राप्नुहि) लङ्–प्राप्नोत्, विधिलिङ्–प्राप्नुयात्, और लृट्–प्राप्स्यति । और आत्मनेपद में लट्–प्राप्नुते इत्यादि रूप भी **सु** धातु की तरह होते हैं।

5. श्रु = सुनना, परस्मैपदी, अनिट्

टिप्पणी – यद्यपि **श्रु** धातु को भ्वादिगण में पढ़ा गया है। परन्तु इसमें 'श्नु' विकरण का विधान किया गया है। इसलिए इसका रूप **सु** की तरह होता है। अतः विद्यार्थियों को आसानी से समझने के लिए उसको स्वादिगणीय माना जा सकता है। भ्वादि गण में पाठ का प्रयोजन है वेद में 'शृणोति' के साथ-साथ 'श्रवति' की सिद्धि। **श्रुवः शृ च**[1] सूत्र से पाणिनि श्नु प्रत्यय का विधान करते हैं और श्रु को **शृ** आदेश करते हैं। इसलिए जहाँ-जहाँ (लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में) श्नु प्रत्यय होगा वहाँ-वहाँ शृ आदेश होगा।

इसका रूप **सु** की तरह चलेगा। श्रु धातु बहुत प्रयोग में आता है। इसलिए इसके रूप नीचे दिए जाते हैं–

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	शृणोति	शृणुतः	शृण्वन्ति
मध्यम पुरुष	शृणोषि	शृणुथः	शृणुथ
उत्तम पुरुष	शृणोमि	शृण्वः, शृणुवः	शृण्मः, शृणुमः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	शृणोतु, शृणुतात्	शृणुताम्	शृण्वन्तु
मध्यम पुरुष	शृणु, शृणुतात्	शृणुतम्	शृणुत
उत्तम पुरुष	शृणवानि	शृणवाव	शृणवाम

---

1. ❑ पा. 3.1.74

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अशृणोत्	अशृणुताम्	अशृण्वन्
मध्यम पुरुष	अशृणोः	अशृणुतम्	अशृणुत
उत्तम पुरुष	अशृणवम्	अशृण्व, अशृणुव	अशृण्म, अशृणुम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शृणुयात्	शृणुयाताम्	शृणुयुः
मध्यम पुरुष	शृणुयाः	शृणुयातम्	शृणुयात
उत्तम पुरुष	शृणुयाम्	शृणुयाव	शृणुयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रोष्यति	श्रोष्यतः	श्रोष्यन्ति
मध्यम पुरुष	श्रोष्यसि	श्रोष्यथः	श्रोष्यथ
उत्तम पुरुष	श्रोष्यामि	श्रोष्यावः	श्रोष्यामः

रुधादि गण (सप्तम गण)

रुधादि धातुओं का विकरण **श्नम्** (न) है। यह **न** धातु के अन्तिम स्वर के आगे होता है। सभी पुरुषों के एक वचन **तिप्**, **सिप्** और **मिप्** में **न** पूरा रहता है किन्तु अन्यत्र 'न' का 'अ' लुप्त हो जाता है। आत्मनेपद में तो सर्वत्र 'न्' हलन्त होकर ही आता है। इस गण के प्रमुख धातु ये हैं–

1. **रुध् =** रोकना, उभयपदी, अनिट्
2. **भुज् =** भोगना और खाना, (खाना-अर्थ में आत्मनेपद, उपभोग करना या भोगना-अर्थ में परस्मैपद), अनिट्

1. रुध् धातु के रूप–

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	रुणद्धि	रुन्धः	रुन्धन्ति
मध्यम पुरुष	रुणत्सि	रुन्धः	रुन्ध
उत्तम पुरुष	रुणध्मि	रुन्ध्वः	रुन्ध्मः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	रुणद्धु	रुद्धाम्	रुन्धन्तु
मध्यम पुरुष	रुन्द्धि	रुन्धम्	रुन्द्ध
उत्तम पुरुष	रुणधानि	रुणधाव	रुणधाम

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अरुणत्, अरुणद्	अरुन्धाम्	अरुन्धन्
मध्यम पुरुष	अरुणः, अरुणत्	अरुन्द्धम्	अरुन्ध
उत्तम पुरुष	अरुणधम्	अरुन्ध्व	अरुन्ध्म

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	रुन्ध्यात्	रुन्ध्याताम्	रुन्ध्युः
मध्यम पुरुष	रुन्ध्याः	रुन्ध्यातम्	रुन्ध्यात
उत्तम पुरुष	रुन्ध्याम्	रुन्ध्याव	रुन्ध्याम

लृट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	रोत्स्यति	रोत्स्यतः	रोत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	रोत्स्यसि	रोत्स्यथः	रोत्स्यथ
उत्तम पुरुष	रोत्स्यामि	रोत्स्यावः	रोत्स्यामः

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुन्धे	रुन्धाते	रुन्धते
मध्यम पुरुष	रुन्त्से	रुन्धाथे	रुन्ध्वे
उत्तम पुरुष	रुन्धे	रुन्ध्वहे	रुन्ध्महे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुन्द्धाम्	रुन्द्धाताम्	रुन्धताम्
मध्यम पुरुष	रुन्त्स्व	रुन्धाथाम्	रुन्द्ध्वम्
उत्तम पुरुष	रुणधै	रुणधावहै	रुणधामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अरुन्द्ध	अरुन्धाताम्	अरुन्धत
मध्यम पुरुष	अरुन्द्धाः	अरुन्धाथाम्	अरुन्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अरुन्धि	अरुन्ध्वहि	अरुन्ध्महि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रुन्धीत	रुन्धीयाताम्	रुन्धीरन्
मध्यम पुरुष	रुन्धीथाः	रुन्धीयाथाम्	रुन्धीध्वम्
उत्तम पुरुष	रुन्धीय	रुन्धीवहि	रुन्धीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	रोत्स्यते	रोत्स्येते	रोत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	रोत्स्यसे	रोत्स्येथे	रोत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	रोत्स्ये	रोत्स्यावहे	रोत्स्यामहे

2. **भुज्** = 'भोगना' अर्थ में परस्मैपदी[1] है और 'खाना' अर्थ में आत्मनेपदी[2] है। उसका रूप इस प्रकार चलता है–

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	भुनक्ति	भुङ्क्तः	भुञ्जन्ति
मध्यम पुरुष	भुनक्षि	भुङ्क्थः	भुङ्क्थ
उत्तम पुरुष	भुनज्मि	भुञ्ज्वः	भुञ्ज्मः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	भुनक्तु	भुङ्क्ताम्	भुञ्जन्तु
मध्यम पुरुष	भुङ्ग्धि	भुङ्क्तम्	भुङ्क्त
उत्तम पुरुष	भुनजानि	भुनजाव	भुनजाम

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अभुनक्	अभुङ्क्ताम्	अभुञ्जन्
मध्यम पुरुष	अभुनक्	अभुङ्क्तम्	अभुङ्क्त
उत्तम पुरुष	अभुनजम्	अभुञ्ज्व	अभुञ्ज्म

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	भुञ्ज्यात्	भुञ्ज्याताम्	भुञ्ज्युः
मध्यम पुरुष	भुञ्ज्याः	भुञ्ज्यातम्	भुञ्ज्यात
उत्तम पुरुष	भुञ्ज्याम्	भुञ्ज्याव	भुञ्ज्याम

---

1. प्रयोग – चोरः कारावासकष्टं यद् भुनक्ति तदुचितमेव।
2. प्रयोग – बालकः स्वादु फलं भुङ्क्ते।

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भोक्ष्यति	भोक्ष्यतः	भोक्ष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भोक्ष्यसि	भोक्ष्यथः	भोक्ष्यथ
उत्तम पुरुष	भोक्ष्यामि	भोक्ष्यावः	भोक्ष्यामः

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भुङ्क्ते	भुञ्जाते	भुञ्जते
मध्यम पुरुष	भुङ्क्षे	भुञ्जाथे	भुङ्ध्वे
उत्तम पुरुष	भुञ्जे	भुञ्ज्वहे	भुञ्ज्महे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भुङ्क्ताम्	भुञ्जाताम्	भुञ्जताम्
मध्यम पुरुष	भुङ्क्ष्व	भुञ्जाथाम्	भुङ्ध्वम्
उत्तम पुरुष	भुनजै	भुनजावहै	भुनजामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अभुङ्क्त	अभुञ्जाताम्	अभुञ्जत
मध्यम पुरुष	अभुङ्क्थाः	अभुञ्जाथाम्	अभुङ्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अभुञ्जि	अभुञ्ज्वहि	अभुञ्ज्महि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भुञ्जीत	भुञ्जीयाताम्	भुञ्जीरन्
मध्यम पुरुष	भुञ्जीथाः	भुञ्जीयाथाम्	भुञ्जीध्वम्
उत्तम पुरुष	भुञ्जीय	भुञ्जीवहि	भुञ्जीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भोक्ष्यते	भोक्ष्येते	भोक्ष्यन्ते
मध्यम पुरुष	भोक्ष्यसे	भोक्ष्येथे	भोक्ष्यध्वे
उत्तम पुरुष	भोक्ष्ये	भोक्ष्यावहे	भोक्ष्यामहे

तनादि गण (अष्टम गण)

तनादि (तन् और कृ धातु) का विकरण **उ** है। इस 'उ' को तिप्, सिप्, मिप् अर्थात् सभी पुरुषों के एकवचनों में गुण 'ओ' हो जाता है।
तनादि के कुछ मुख्य धातु के रूप इस प्रकार हैं–

1. तन् = फैलाना, उभयपदी, सेट्

परस्मैपद

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनोति	तनुतः	तन्वन्ति
मध्यम पुरुष	तनोषि	तनुथः	तनुथ
उत्तम पुरुष	तनोमि	तन्वः, तनुवः	तन्मः, तनुमः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनोतु	तनुताम्	तन्वन्तु
मध्यम पुरुष	तनु	तनुतम्	तनुत
उत्तम पुरुष	तनवानि	तनवाव	तनवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतनोत्	अतनुताम्	अतन्वन्
मध्यम पुरुष	अतनोः	अतनुतम्	अतनुत
उत्तम पुरुष	अतनवम्	अतन्व, अतनुव	अतन्म, अतनुम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनुयात्	तनुयाताम्	तनुयुः
मध्यम पुरुष	तनुयाः	तनुयातम्	तनुयात
उत्तम पुरुष	तनुयाम्	तनुयाव	तनुयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनिष्यति	तनिष्यतः	तनिष्यन्ति इत्यादि

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनुते	तन्वाते	तन्वते
मध्यम पुरुष	तनुषे	तन्वाथे	तनुध्वे
उत्तम पुरुष	तन्वे	तन्वहे, तनुवहे	तन्महे, तनुमहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनुताम्	तन्वाताम्	तन्वताम्
मध्यम पुरुष	तनुष्व	तन्वाथाम्	तनुध्वम्
उत्तम पुरुष	तनवै	तनवावहै	तनवामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अतनुत	अतन्वाताम्	अतन्वत
मध्यम पुरुष	अतनुथाः	अतन्वाथाम्	अतनुध्वम्
उत्तम पुरुष	अतन्वि	अतन्वहि, अतनुवहि	अतन्महि, अतनुमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तन्वीत	तन्वीयाताम्	तन्वीरन्
मध्यम पुरुष	तन्वीथाः	तन्वीयाथाम्	तन्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	तन्वीय	तन्वीवहि	तन्वीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	तनिष्यते	तनिष्येते	तनिष्यन्ते इत्यादि

2. कृ = करना, उभयपदी, अनिट् (किन्तु लृट् में सेट्)

तिप्, सिप्, मिप् में तन् धातु की तरह रूप होते हैं। कृ के ऋ को गुण अर् होने पर करोति करोषि करोमि में उ को गुण हुआ है। अन्यत्र 'क' का 'अ' 'उ' में बदल जाता है और कुरुतः इत्यादि बनता है। लोट् के मध्यम पुरुष में भी 'क' के 'अ' को 'उ' हो जाता है।

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति
मध्यम पुरुष	करोषि	कुरुथः	कुरुथ
उत्तम पुरुष	करोमि	कुर्वः	कुर्मः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करोतु	कुरुताम्	कुर्वन्तु
मध्यम पुरुष	कुरु	कुरुतम्	कुरुत
उत्तम पुरुष	करवाणि	करवाव	करवाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्
मध्यम पुरुष	अकरोः	अकुरुतम्	अकुरुत
उत्तम पुरुष	अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः
मध्यम पुरुष	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात
उत्तम पुरुष	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	करिष्यसि	करिष्यथः	करिष्यथ
उत्तम पुरुष	करिष्यामि	करिष्यावः	करिष्यामः

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुरुते	कुर्वाते	कुर्वते
मध्यम पुरुष	कुरुषे	कुर्वाथे	कुरुध्वे
उत्तम पुरुष	कुर्वे	कुर्वहे	कुर्महे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुरुताम्	कुर्वाताम्	कुर्वताम्
मध्यम पुरुष	कुरुष्व	कुर्वाथाम्	कुरुध्वम्
उत्तम पुरुष	करवै	करवावहै	करवामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अकुरुत	अकुर्वाताम्	अकुर्वत
मध्यम पुरुष	अकुरुथाः	अकुर्वाथाम्	अकुरुध्वम्
उत्तम पुरुष	अकुर्वि	अकुर्वहि	अकुर्महि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुर्वीत	कुर्वीयाताम्	कुर्वीरन्
मध्यम पुरुष	कुर्वीथाः	कुर्वीयाथाम्	कुर्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	कुर्वीय	कुर्वीवहि	कुर्वीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करिष्यते	करिष्येते	करिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	करिष्यसे	करिष्येथे	करिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	करिष्ये	करिष्यावहे	करिष्यामहे

क्र्यादि गण (नवम गण)

क्र्यादि गण का विकरण **श्ना** (ना) है। यह 'ना' सभी पुरुषों के एकवचन में 'ना' के रूप में रहता है परन्तु 'अन्ति' में 'न्' स्वरहीन बन जाता है और अन्यत्र 'नी' के रूप में आता है। लोट् के मध्यम पुरुष में और विधिलिङ् में सर्वत्र 'नी' बन जाता है। आत्मनेपद में स्वरादि प्रत्यय को छोड़कर अन्यत्र 'नी' हो जाता है।

क्र्यादि गण की प्रमुख धातुएँ निम्नलिखित हैं–

1. क्री	= खरीदना	उभयपदी,	अनिट्	क्रीणाति, क्रीणीते
2. ज्ञा (जा)	= जानना	"	"	जानाति, जानीते
3. पू (पु)	= पवित्र करना	"	सेट्	पुनाति, पुनीते
4. ग्रह् (गृह्)	= लेना	"	"	गृह्णाति, गृह्णीते

1. क्री = खरीदना, उभयपदी, अनिट् के रूप इस प्रकार होते हैं–

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति
मध्यम पुरुष	क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ
उत्तम पुरुष	क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्रीणातु	क्रीणीताम्	क्रीणन्तु
मध्यम पुरुष	क्रीणीहि	क्रीणीतम्	क्रीणीत
उत्तम पुरुष	क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्
मध्यम पुरुष	अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत
उत्तम पुरुष	अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्रीणीयात्	क्रीणीयाताम्	क्रीणीयुः
मध्यम पुरुष	क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणीयात
उत्तम पुरुष	क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रीणीयाम

लृट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्रेष्यति	क्रेष्यतः	क्रेष्यन्ति इत्यादि

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते
मध्यम पुरुष	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे
उत्तम पुरुष	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्रीणीताम्	क्रीणाताम्	क्रीणताम्
मध्यम पुरुष	क्रीणीष्व	क्रीणाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अक्रीणीत	अक्रीणाताम्	अक्रीणत
मध्यम पुरुष	अक्रीणीथाः	अक्रीणाथाम्	अक्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्रीणीत	क्रीणीयाताम्	क्रीणीरन्
मध्यम पुरुष	क्रीणीथाः	क्रीणीयाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणीमहि

लृट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	क्रेष्यते	क्रेष्येते	क्रेष्यन्ते इत्यादि

2. ज्ञा = जानना, उभयपदी, अनिट् के स्थान में 'जा' हो जाता है। अन्य परिवर्तन **क्री** धातु की तरह होते हैं–

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	जानाति	जानीतः	जानन्ति
मध्यम पुरुष	जानासि	जानीथः	जानीथ
उत्तम पुरुष	जानामि	जानीवः	जानीमः

लोट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	जानातु	जानीताम्	जानन्तु
मध्यम पुरुष	जानीहि	जानीतम्	जानीत
उत्तम पुरुष	जानानि	जानाव	जानाम

लङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	अजानात्	अजानीताम्	अजानन्
मध्यम पुरुष	अजानाः	अजानीतम्	अजानीत
उत्तम पुरुष	अजानाम्	अजानीव	अ:जानीम

विधिलिङ्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	जानीयात्	जानीयाताम्	जानीयुः
मध्यम पुरुष	जानीयाः	जानीयातम्	जानीयात
उत्तम पुरुष	जानीयाम्	जानीयाव	जानीयाम

लृट्

	एकवचन	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथम पुरुष	ज्ञास्यति	ज्ञास्यतः	ज्ञास्यन्ति इत्यादि

आत्मनेपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानीते	जानाते	जानते
मध्यम पुरुष	जानीषे	जानाथे	जानीध्वे
उत्तम पुरुष	जाने	जानीवहे	जानीमहे

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानीताम्	जानाताम्	जानताम्
मध्यम पुरुष	जानीष्व	जानाथाम्	जानीध्वम्
उत्तम पुरुष	जानै	जानावहै	जानामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अजानीत	अजानाताम्	अजानत
मध्यम पुरुष	अजानीथाः	अजानाथाम्	अजानीध्वम्
उत्तम पुरुष	अजानि	अजानीवहि	अजानीमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानीत	जानीयाताम्	जानीरन्
मध्यम पुरुष	जानीथाः	जानीयाथाम्	जानीध्वम्
उत्तम पुरुष	जानीय	जानीवहि	जानीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ज्ञास्यते	ज्ञास्येते	ज्ञास्यन्ते इत्यादि

3. पू = पवित्र करना, उभयपदी, सेट्

इस धातु में तिङन्त रूप बनते समय ऊ को ह्रस्व हो जाता है। अन्य रूप क्री धातु के समान चलते हैं। जैसे–

लट्–पुनाति, पुनीते; लोट्–पुनातु, पुनीताम्; लङ्–अपुनात्, अपुनीत; विधिलिङ्–पुनीयात्, पुनीत; लृट्–पविष्यति, पविष्यते आदि।

4. ग्रह् (गृह्) = लेना, उभयपदी, सेट्

परस्मैपदी

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णाति	गृह्णीतः	गृह्णन्ति
मध्यम पुरुष	गृह्णासि	गृह्णीथः	गृह्णीथ
उत्तम पुरुष	गृह्णामि	गृह्णीवः	गृह्णीमः

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णातु	गृह्णीताम्	गृह्णन्तु
मध्यम पुरुष	गृहाण	गृह्णीतम्	गृह्णीत
उत्तम पुरुष	गृह्णानि	गृह्णाव	गृह्णाम

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अगृह्णात्	अगृह्णीताम्	अगृह्णन्
मध्यम पुरुष	अगृह्णाः	अगृह्णीतम्	अगृह्णीत
उत्तम पुरुष	अगृह्णम्	अगृह्णीव	अगृह्णीम

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णीयात्	गृह्णीयाताम्	गृह्णीयुः
मध्यम पुरुष	गृह्णीयाः	गृह्णीयातम्	गृह्णीयात
उत्तम पुरुष	गृह्णीयाम्	गृह्णीयाव	गृह्णीयाम

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ग्रहीष्यति[1]	ग्रहीष्यतः	ग्रहीष्यन्ति
मध्यम पुरुष	ग्रहीष्यसि	ग्रहीष्यथः	ग्रहीष्यथ
उत्तम पुरुष	ग्रहीष्यामि	ग्रहीष्यावः	ग्रहीष्यामः

आत्मनेपद

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णीते	गृह्णाते	गृह्णते
मध्यम पुरुष	गृह्णीषे	गृह्णाथे	गृह्णीध्वे
उत्तम पुरुष	गृह्णे	गृह्णीवहे	गृह्णीमहे

---

1. ग्रहोऽलिटि दीर्घः। ❑ **पा. 7.2.37 से 'इ' (इट्) को दीर्घ हुआ है।**

लोट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णीताम्	गृह्णाताम्	गृह्णताम्
मध्यम पुरुष	गृह्णीष्व	गृह्णाथाम्	गृह्णीध्वम्
उत्तम पुरुष	गृह्णै	गृह्णावहै	गृह्णामहै

लङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अगृह्णीत	अगृह्णाताम्	अगृह्णत
मध्यम पुरुष	अगृह्णीथाः	अगृह्णाथाम्	अगृह्णीध्वम्
उत्तम पुरुष	अगृह्णि	अगृह्णीवहि	अगृह्णीमहि

विधिलिङ्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णीत	गृह्णीयाताम्	गृह्णीरन्
मध्यम पुरुष	गृह्णीथाः	गृह्णीयाथाम्	गृह्णीध्वम्
उत्तम पुरुष	गृह्णीय	गृह्णीवहि	गृह्णीमहि

लृट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ग्रहीष्यते	ग्रहीष्येते	ग्रहीष्यन्ते
मध्यम पुरुष	ग्रहीष्यसे	ग्रहीष्येथे	ग्रहीष्यध्वे
उत्तम पुरुष	ग्रहीष्ये	ग्रहीष्यावहे	ग्रहीष्यामहे

णिजन्त (प्रेरणार्थक Causals)

कर्ता जब स्वयं किसी क्रिया को न करता हो, किन्तु दूसरे की प्रेरणा से क्रिया में प्रवृत्त होता हो तो उस वाक्य में धातु के **णिजन्त** रूप का प्रयोग होता है*। णिजन्त रूप बनाने में धातुओं के गणों की विभिन्नता नहीं होती। किन्तु सभी गणों की धातुओं से **णिच्** प्रत्यय लगाकर चुरादि की तरह रूप बनाये जाते हैं। जैसे–

धातु	गण का रूप	णिजन्त
1. पठ्	पठति	पाठयति–ते
2. अद्	अत्ति	आदयति–ते
3. दिव्	दीव्यति	देवयति–ते
4. रुध्	रुणद्धि	रोधयति–ते

टिप्पणी – णिजन्त रूपों में परस्मैपद और आत्मनेपद दोनों प्रकार के प्रत्यय आते हैं।

कुछ धातुओं के णिजन्त रूप इस प्रकार हैं–

धातु	प.	आ.
भू	भावयति	भावयते
स्था	स्थापयति	स्थापयते
पठ्	पाठयति	पाठयते
गम्	गमयति	गमयते
कृ	कारयति	कारयते
क्री	क्रापयति	क्रापयते

---

* णिजन्त क्रिया के प्रयोग में यह बात ध्यान देने योग्य है कि गत्यर्थक, ज्ञानार्थक, भक्षणार्थक, सकर्मक एवं अकर्मक धातुओं के मूल (प्रयोज्य) कर्ता के वाचक शब्द से द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है, किन्तु अन्य सभी अर्थों की धातुओं के मूल कर्ता की तृतीया विभक्ति होती है। जैसे–

1. रमेशः ग्रामं गच्छति। पिता रमेशं ग्रामं गमयति।
2. मोहनः क्रीडति। माता मोहनं क्रीडयति।

किन्तु

3. सूदः ओदनं पचति। स्वामी सूदेन ओदनं पाचयति।
4. भृत्यः कार्यं करोति। प्रभुः भृत्येन कार्यं कारयति।

नामधातु (Nominal Verbs)

संस्कृत भाषा में नाम (प्रातिपदिक) या संज्ञा से भी कुछ प्रत्यय लगाकर धातुएँ बनती हैं, जिन्हें **नामधातु** कहा जाता है। ये प्रत्यय कई हैं। उदाहरण के लिए क्यच् या क्यङ् (य) को लिया जा सकता है–

पुत्रीयति गुरुः छात्रम्। (गुरु छात्र के साथ पुत्रवत् आचरण करता है।)
तपस्यति तापसः। इत्यादि।

अभ्यास

1. **टिप्पणी लिखिए–**
   धातु, नामधातु, विकरण, वाच्य, परस्मैपद, आत्मनेपद, लकार, वेट्, अनिट्।
2. **विधिलिङ् में भ्वादि, चुरादि, दिवादि और तुदादि के प्रत्ययों से अन्य गणों के प्रत्ययों में क्या भेद है, उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए–**
3. **निम्नलिखित धातुओं के रूप, निर्दिष्ट काल, पुरुष और वचन में लिखिए–**

भू	लोट्	– म. पु., एकवचन
गम्	लृट्	– प्र. पु., बहुवचन
श्रु	लट्	– परस्मैपद, म. पु., बहुवचन
हन्	लोट्	– म. पु., एकवचन
स्वप्	लट्	– उ. पु., एकवचन
आस्	विधिलिङ्	– प्र. पु. बहुवचन
दा	(जुहोत्यादि) लङ्	– प्र. पु., बहुवचन
जन्	लट्	– उ. पु., एकवचन
चि	लोट्	– उभयपद, उ. पु., एकवचन
प्रच्छ्	लृट्	– प्र. पु., द्विवचन
सिच्	लङ्	– प्र. पु., एकवचन

भुज्	लट्	– उभयपद, प्र. पु., बहुवचन
कृ	विधिलिङ्	– आत्मनेपद, प्र. पु., बहुवचन
ग्रह्	लोट्	– म. पु., एकवचन
चुर्	लृट्	– उ. पु., बहुवचन

4. **निम्नलिखित क्रियापदों के लिए प्रेरणार्थक क्रियापद लिखिए–**

गच्छति –

तिष्ठतु –

क्रीणाति –

अपठत् –

भविष्यति –

कुर्यात् –

5. **कोष्ठक में निर्दिष्ट धातुओं के उचित रूप से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–**

(क) वयं श्वः नाटकम्....... । (दृश्)

(ख) गतवार्षिकपरीक्षायां परीक्षकाः प्रतिपत्रं पञ्च प्रश्नान्.......। (प्रच्छ्)

(ग) जनाः कदापि प्राणिनं न.......। (हन्)

(घ) महापुरुषः न सर्वदा......। (जन्)

(ङ) स्वामी सेवकम् आज्ञापयति– 'त्वं भिक्षुकाय अन्नम्....' इति। (दा)

6. **कोष्ठक में कुछ काल और अर्थ दिए गए हैं, उन्हें नीचे लिखे उपयुक्त लकारों के सामने लिखिए–**

(आज्ञार्थ, भूतकाल, विध्यर्थ, वर्तमानकाल, भविष्यत्काल)

(च) लङ् ....

(छ) लट् .....

(ज) लोट् .....

(झ) लृट् .....

(ञ) लिङ् .....

7. **निम्नलिखित जोड़ियों में शुद्ध रूप पर ✓ यह चिह्न लगाइए–**

पास्यति / पिबिष्यति

नृत्स्यति / नर्तिष्यति

अजायत् / अजायत

करोति / करति

लेखति / लिखति

8. निम्नलिखित क्रियापदों का परिचय निर्दिष्ट पद्धति के अनुसार दीजिए–

	धातु	**विकरण**	**पद**	**काल**	**पुरुष**	**वचन**
गच्छति	गम्	अ (शप्)	परस्मैपद	वर्तमान	प्रथम	एकवचन
अपिबत्	——	——	——	——	——	——
एधि	——	——	——	——	——	——
पुनातु	——	——	——	——	——	——
ब्रुवते	——	——	——	——	——	——
कुर्वीरन्	——	——	——	——	——	——

पञ्चम अध्याय

(Suffixes)

I. कृदन्त (Primary Suffixes)

धातु के बाद जिन प्रत्ययों को लगा कर संज्ञा, विशेषण अव्यय आदि शब्द बनाए जाते हैं, वे प्रत्यय **कृत्** ('करने वाले' अर्थात् धातु से मूल शब्द बनाने वाले) कहलाते हैं और उनसे बने शब्द **कृदन्त**, जैसे –

पठनीयं (पठ् + अनीयर्) पुस्तकम्, कर्तव्यं (कृ+तव्यत्) कर्म आदि । कृदन्त शब्दों में कारक विभक्तियाँ लगती हैं और उनके प्रथमादि विभक्तियों में रूप बनते हैं । कुछ कृदन्त-शब्द अव्यय बन जाते हैं और उनका रूप परिवर्तित नहीं होता, जैसे– कृत्वा, गत्वा आदि । कुछ कृदन्त-शब्द क्रिया के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं, जैसे– सः ग्रामं गतः । कुछ प्रमुख कृत् प्रत्ययों का परिचय यहाँ प्रस्तुत है–

1. कृत्य प्रत्यय[1] (विध्यर्थक)

तव्यत् (तव्य) और अनीयर् (अनीय) –

'चाहिए' तथा 'योग्य' अर्थ में किसी भी धातु में 'तव्यत्' या 'अनीयर्' प्रत्यय जोड़े जाते हैं, जैसे–

गम् + तव्यत् = गन्तव्यम् = जाना चाहिए ।

दा + तव्यत् = दातव्यम् = देना चाहिए ।

---

1. कृत्य प्रत्यय सात हैं – तव्यत् (तव्य),तव्य, अनीयर् (अनीय), केलिमर् (एलिम), यत् (य), क्यप् (य) और ण्यत् (य) । कृत्य प्रत्यय सामान्यतया भाववाच्य एवं कर्मवाच्य में प्रयुक्त होते हैं ।

इसी प्रकार–

पठ् + अनीयर् = पठनीयम् = पढ़ना चाहिए ।

गम् + अनीयर् = गमनीयम् = जाना चाहिए ।

इनके रूप पुंलिङ्ग में **बालक**, नपुंसकलिङ्ग में **फल** और स्त्रीलिङ्ग में **बाला** के समान होंगे, जैसे – पठनीयो ग्रन्थः (पढ़ने योग्य ग्रन्थ या ग्रन्थ पढ़ना चाहिए) । दानं दातव्यम् (दान देना चाहिए) । गन्तव्या नगरी (उस नगरी में जाना चाहिए) आदि ।

तव्य और अनीय जोड़ते समय धातु में निम्नलिखित नियमानुसार परिवर्तन होते हैं–

(i) धातु के अन्त में आने वाले अथवा उपधा (अन्तिम वर्ण से पूर्व) में आने वाले इ, उ, ऋ क्रमशः ए, ओ, अर् हो जाते हैं, जैसे–

धातु	**तव्य**	**अनीय**
कृ	कर्तव्यम्	करणीयम्
नी	नेतव्यम्	नयनीयम्
स्तु	स्तोतव्यम्	स्तवनीयम्
श्रु	श्रोतव्यम्	श्रवणीयम्
लिख्	लेखितव्यम्	लेखनीयम्
मुद्	मोदितव्यम्	मोदनीयम्

(ii) धातु के अन्त वाले ए और ऐ का आ हो जाता है, जैसे–

वे	वातव्यम्	वानीयम्
गै	गातव्यम्	गानीयम्
त्रै	त्रातव्यम्	त्राणीयम्

निम्नलिखित नियम केवल तव्य प्रत्यय जोड़ते समय लगेंगे–

(i) धातु के अन्त में आने वाले च् तथा ज् → क् में, द् → त् में, भ् → ब् में, ध्→ द्, में तथा म्→ न् में परिवर्तित हो जाते हैं, जैसे–

वच्	वक्तव्यम्	बुध्	बोद्धव्यम्
भुज्	भोक्तव्यम्	गम्	गन्तव्यम्
भिद्	भेत्तव्यम्	लभ्	लब्धव्यम्

(ii) सेट् धातुओं में इट् (इ) लगता है, जैसे–

पठ्	पठितव्यम्	रक्ष्	रक्षितव्यम्
हस्	हसितव्यम्	लिख्	लेखितव्यम्

तव्य (त) और अनीय (र) प्रत्ययान्त शब्द क्रिया के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं। तब इसका कर्ता तृतीयान्त और कर्म प्रथमान्त होता है, जैसे–

युष्माभिः पुस्तकं पठितव्यम् । छात्रैः पाठः स्मरणीयः ।

त्वया कुकृत्यानि न कर्तव्यानि ।

अकर्मक धातुओं में तव्य प्रत्यय लगने पर क्रियारूप सदा प्रथमान्त नपुंसकलिङ्ग और एकवचन में होते हैं, जैसे –

अस्माभिः स्नातव्यम् (हम लोगों को नहाना चाहिए) । त्वया अत्र स्थातव्यम् (तुम्हें यहाँ ठहरना चाहिए) । तेन जीवितव्यम् (उसे जीना चाहिए) ।

यत् (य)

'चाहिए' या 'योग्यता' अर्थ में (भाव/कर्म में) निम्नलिखित प्रकार की धातुओं में यत् (य) प्रत्यय होता है–

1. स्वर से अन्त होने वाली धातु (जैसे – जि, नी, पा आदि) में।[1]
2. पवर्ग से अन्त होने वाली ऐसी धातुओं में जिनकी उपधा (अन्तिम वर्ण के पूर्व का वर्ण) में अ हो, जैसे[2] –

   लभ् + यत् = लभ्य (लभ्यम्)

   जप् + यत् = जप्य (जप्यम्)

   शप् + यत् = शप्य (शप्यम्)

(i) यत् प्रत्यय लगने पर उसके पूर्ववर्ती स्वर इ, उ, ऋ क्रमशः ए, ओ, अर् में परिवर्तित हो जाते हैं, जैसे–

जि + यत् = जेय → जेयः, जेयम्, जेया ।

नी + यत् = नेय → नेयः, नेयम्, नेया ।

चि + यत् = चेय → चेयः, चेयम्, चेया ।

---

1. अचो यत् । ❑ पा० 3.1. 97

2. पोरदुपधात् । ❑ पा० 3.1.98

(ii) यदि धातु के अन्त में आ हो तो यत् लगने पर वह ई में परिवर्तित होता है और पुनः गुण होकर ए हो जाता है, जैसे–

पा + यत् = पी + य = पेय → पेयः, पेयम्, पेया।

दा + यत् = दी + य = देयम् ।

धा + यत् = धी + य = धेयम् ।

स्था + यत् = स्थी + य = स्थेयम् ।

(iii) ऐ से अन्त होने वाली धातुओं का भी अन्तिम स्वर ई में परिवर्तित हो जाता है और पुनः गुण हो कर ए हो जाता है, जैसे–

गै + यत् = गी + य = गेय (गेयम्)

टिप्पणी – कुछ ऐसे भी यत्प्रत्ययान्त शब्द है जो उपर्युक्त नियमों से नहीं बन पाते, अपितु उनके विशेष नियम हैं, जैसे–
वध्य (हन् + यत्), सह्य (सह् + यत्), शक्य (शक् + यत्), गद्य (गद्+यत्), मद्य (मद् + यत्) आदि ।

ण्यत् (य)

ऋकारान्त अथवा व्यञ्जनान्त धातुओं से 'चाहिए' या 'योग्य' अर्थ में ण्यत् (य) प्रत्यय लगता है।[1] ण्यत् लगने पर पूर्व स्वर की वृद्धि होती है (ऋ का आर् हो जाता है) । उपधा में यदि अ हो तो उसका आ हो जाता है । उदाहरण–

(i) कृ + ण्यत् = कृ + य = कार् + य = कार्य – कार्यम् = करने योग्य

हृ + ण्यत् = हृ + य = हार् + य = हार्य–हार्यम् = हरण करने योग्य

(ii) पठ् + ण्यत् = पाठ् + य = पाठ्य (पाठ्यम्)

ग्रह् + ण्यत् = ग्राह् + य = ग्राह्य (ग्राह्यम्)

वच् + ण्यत् = वाच् + य = वाच्य (वाच्यम्)

त्यज् + ण्यत् = त्याज्+ य = त्याज्य (त्याज्यम्)

---

1. ऋहलोर्ण्यत् । ❑ पा0 3.1.124

2. भूतकालिक कृत् प्रत्यय – क्त (त) और क्तवतु (तवत्)

क्त और क्तवतु को **निष्ठा** भी कहते है।[1] ये दोनों प्रत्यय किसी कार्य के समाप्त हो जाने के सूचक हैं । क्त और क्तवतु में क्रमशः **त** और **तवत्** रहते हैं । शेष अक्षर लुप्त हो जाते हैं । भूतकालिक क्रिया के अर्थ में किसी भी धातु से क्त (त) एवं क्तवतु (तवत्) प्रत्यय हो सकते हैं । उदाहरण–

कृ + क्त (त) = कृत । कृ + क्तवतु (तवत्) = कृतवत्।

मृ + क्त (त) = मृत । मृ + क्तवतु (तवत्) = मृतवत् ।

क्त प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में **बालक** के समान, नपुंसकलिङ्ग में **फल** के समान और स्त्रीलिङ्ग में **बाला** के समान होते हैं । क्तवतु प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में **श्रीमत्** के समान, नपुंसकलिङ्ग में **जगत्** के समान और स्त्रीलिङ्ग में **नदी** के समान चलते हैं । इनके रूप तीनों लिङ्गों में सभी विभक्तियों और सभी वचनों में होते हैं, जैसे–

धातु + प्रत्यय	**= निष्पन्न शब्द**	**प्रथमा के रूप**		
		पुं०	नपुं०	स्त्री०
मृ + (क्त) त	= मृत	= मृतः	मृतम्	मृता
मृ + (क्तवतु) तवत्	= मृतवत्	= मृतवान्	मृतवत्	मृतवती
स्ना + (क्त) त	= स्नात	= स्नातः	स्नातम्	स्नाता
स्ना + (क्तवतु) तवत्	= स्नातवत्	= स्नातवान्	स्नातवत्	स्नातवती

सेट् धातुओं में क्त या क्तवतु लगने से पूर्व इट् (इ) का आगम होता है, जैसे–

धातु	**क्त प्रत्ययान्त**	**क्तवतु प्रत्ययान्त**
पठ्	पठित	पठितवत्
कथ	कथित	कथितवत्
लिख्	लिखित	लिखितवत्

निष्ठा प्रत्यय (**क्त, क्तवतु**) जुड़ने पर धातु के प्रारम्भ में स्थित **य्, र्, ल्, व्** के स्थान में क्रमशः इ, ऋ, लृ, उ बन जाते हैं, जैसे–

धातु +	**क्त**	**+ क्तवतु**
वस्	उषित	उषितवत्

1. क्तक्तवतू निष्ठा । ☐ **पा० 1.1.26**

वच्	उक्त	उक्तवत्
ग्रह्	गृहीत	गृहीतवत्
स्वप्	सुप्त	सुप्तवत्
यज्	इष्ट	इष्टवत्

प्रायः धातु के अन्त में स्थित **म्** का लोप हो जाता है, जैसे–

गम्	गत	गतवत्
यम्	यत	यतवत्
नम्	नत	नतवत्

क्त और **क्तवतु** के तकार में भी कभी–कभी कुछ परिवर्तन होते हैं। **द्** या **र्** के बाद में आने वाले **त** का **न** हो जाता है और पूर्ववर्ती **द्** का भी **न्** हो जाता है।[1] जैसे–

धातु	**+ क्त**	**+ क्तवतु**
छिद्	छिन्न	छिन्नवत्
भिद्	भिन्न	भिन्नवत्
जॄ	जीर्ण	जीर्णवत्
श्रॄ	शीर्ण	शीर्णवत्

निष्ठा का **त** 'शुष्' के बाद आने पर **क** और पच् के बाद आने पर **व** हो जाता है, जैसे–

शुष् + त = शुष्कः, शुष्कवत्   पच् + त = पक्वः, पक्ववत्

निष्ठा का प्रयोग – क्त और क्तवतु प्रत्ययों से निष्पन्न शब्द विशेषण के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं, जैसे – सुप्तः शिशुः – और क्रिया रूप में भी, जैसे– सः पुस्तकं पठितवान्, तेन पुस्तकं पठितम्।

क्रिया रूप में क्त प्रत्यय **कर्मवाच्य** और **भाववाच्य** (Passive Voice) में प्रयुक्त होते हैं।[2] तब क्त से निष्पन्न शब्द के लिङ्ग, वचन और विभक्ति कर्म के अनुसार होते हैं, जैसे – मया रामायणं पठितम्।[3] क्तवतु प्रत्यय से निष्पन्न शब्द सदैव **कर्तृवाच्य** में प्रयुक्त होते हैं। अतएव उनके लिङ्ग, वचन और विभक्ति कर्ता के अनुसार होते हैं, जैसे – छात्रः पुस्तकं पठितवान्। सीता रामायणं पठितवती आदि।

---

1. रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः। ☐ **पा0 8. 2. 42**
2. तयोरेव कृत्यक्तखलर्थाः। ☐ **पा0 3.4. 70**
3. कुछ क्रियाओं के साथ क्त प्रत्यय होने पर कर्तृवाच्य में भी प्रयोग होता है, जैसे–सः गृहं गतः आदि।

कुछ प्रमुख धातुओं के 'क्त' और 'क्तवतु, प्रत्ययों से निष्पन्न रूप–

धातु	क्त (त)	क्तवतु (तवत्)	धातु	क्त (त)	क्तवतु (तवत्)
हन्	हतः	हतवान्	युज्	युक्तः	युक्तवान्
मन्	मतः	मतवान्	पच्	पक्वः	पक्ववान्
जन्	जातः	जातवान्	शुष्	शुष्कः	शुष्कवान्
वच्	उक्तः	उक्तवान्	इष्	इष्टः	इष्टवान्
वद्	उदितः	उदितवान्	तुष्	तुष्टः	तुष्टवान्
वह्	ऊढः	उढवान्	हृष्	हृष्टः	हृष्टवान्
ग्रह्	गृहीतः	गृहीतवान्	दृश्	दृष्टः	दृष्टवान्
पा(पिब)	पीतः	पीतवान्	शास्	शिष्टः	शिष्टवान्
दम्	दान्तः	दान्तवान्	स्पृश्	स्पृष्टः	स्पृष्टवान्
शम्	शान्तः	शान्तवान्	नश्	नष्टः	नष्टवान्
गम्	गतः	गतवान्	प्रच्छ्	पृष्टः	पृष्टवान्
भञ्ज्	भग्नः	भग्नवान्	दा	दत्तः	दत्तवान्
मज्ज्	मग्नः	मग्नवान्	घ्रा	घ्राणः, घ्रातः	घ्रातवान्
सह्	सोढः	सोढवान्	धा	हितः	हितवान्
भिद्	भिन्नः	भिन्नवान्	गै	गीतः	गीतवान्
शी	शयितः	शयितवान्	कथ	कथितः	कथितवान्
लभ्	लब्धः	लब्धवान्	पत्	पतितः	पतितवान्
दह्	दग्धः	दग्धवान्	पूज्	पूजितः	पूजितवान्
आरुह्	आरूढः	आरूढवान्	स्था	स्थितः	स्थितवान्
त्यज्	त्यक्तः	त्यक्तवान्	स्मृ	स्मृतः	स्मृतवान्
भुज्	भुक्तः	भुक्तवान्	अधि+इ	अधीतः	अधीतवान्
मुच्	मुक्तः	मुक्तवान्	भू	भूतः	भूतवान्

3. वर्तमानकालार्थ कृत् प्रत्यय

शतृ (अत्) और शानच् (आन)

जाता हुआ (जाती हुई), पढ़ता हुआ (पढ़ती हुई) आदि वर्तमान काल के अर्थ को प्रकट करने के लिए संस्कृत में शतृ (अत्) और शानच् (आन) प्रत्ययों का प्रयोग होता है। इन्हें **'सत्'** (विद्यमान, वर्तमान) भी कहा जाता

है । परस्मैपदी धातुओं में शतृ (अत्) और आत्मनेपदी धातुओं में शानच् (आन) जोड़ा जाता है । उभयपदी धातुओं में दोनों – शतृ और शानच् लगते हैं। ऐसे शब्द कर्ता के विशेषण के रूप होते हैं । शतृ प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में 'पठन्, पठन्तौ पठन्तः' के समान, नपुंसकलिङ्ग में जगत् के समान और स्त्रीलिङ्ग में नदी के समान चलते हैं । शानच् प्रत्ययान्त शब्द अकारान्त होते हैं । उनके रूप बालक, फल एवं लता के समान क्रमश् पुं0, नपुं0 एवं स्त्री0 में होते हैं । धातुओं का लट् लकार प्र0पु0 बहुवचन में प्रत्यय जोड़ने से पूर्व जो रूप रहता है, जैसे – पठन्ति में पठ, उसमें अत् जोड़ देने से शतृ प्रत्ययान्त तथा आन जोड़ने से शानच् प्रत्ययान्त रूप बन जाते हैं । आन के पहले यदि अकारान्त रूप आए तो आन के स्थान पर मान हो जाता है । अत् के पहले अकारान्त रूप आने पर दोनों अ के स्थान में एक ही अ रह जाता है ।

उदाहरण–

धातु	**लट् लकार में प्रत्यय जुड़ने से पूर्व का रूप**	**शतृ प्रत्यय से निष्पन्न शब्द**
भू	(भव)	भवत्
पठ्	(पठ)	पठत्
कृ	(कुर्व)	कुर्वत्
गम्	(गच्छ)	गच्छत्
दृश्	(पश्य)	पश्यत्
वद्	(वद)	वदत्
वस्	(वस)	वसत्
स्था	(तिष्ठ)	तिष्ठत्
पा	(पिब)	पिबत्
दा	(दद)	ददत्
नी	(नये)	नयत्

धातु	शानच् प्रत्यय से निष्पन्न शब्द
वृध्	वर्धमानः
सेव्	सेवमानः
ईक्ष्	ईक्षमाणः
कम्प्	कम्पमानः
वृत्	वर्तमानः

आस् (बैठना) के बाद शानच् प्रत्यय लगने पर आन का ईन हो जाता है।[1] तब रूप बनता है आस् – आसीनः ।

टिप्पणी – शतृ और शानच् प्रत्यय भविष्यत् काल के अर्थ में भी प्रयुक्त होते हैं । ऐसी स्थिति में लृट् लकार के प्रथम पुरुष बहुवचन में प्रत्यय लगने से पूर्व धातु का जो रूप बनता है, उसमें आन (मान) लगता है, जैसे–

धातु	शतृ	धातु	शानच्
भू	भविष्यत्	सह्	सहिष्यमाणः
गम्	गमिष्यत्	युध्	योत्स्यमानः
हन्	हनिष्यत्		

4. पूर्वकालिक क्रियार्थक
क्त्वा (त्वा) और ल्यप् (य)

जब एक ही कर्ता कोई एक कार्य समाप्त करके दूसरा कार्य करता है, तो पहली क्रिया **पूर्वकालिक क्रिया** कहलाती है[2], जैसे– सुरेश जल लेकर आता है । लेकर, पढ़कर, खाकर, जाकर आदि अर्थों में पूर्वकालिक कृदन्त बनाने के लिए संस्कृत में **क्त्वा** (त्वा) प्रत्यय लगाया जाता है, जैसे–

सुरेशः जलं गृहीत्वा (ग्रह्+ त्वा) आगच्छति ।

क्त्वा (त्वा) प्रत्यय से बने शब्द

धातु	शब्द		
जि	जित्वा	=	जीत कर
स्मृ	स्मृत्वा	=	स्मरण कर

1. ईदासः । ❑ पा0 **7.2.83**

2. समानकर्तृकयोः पूर्वकाले । ❑ पा0 **3.4.21**

नी	नीत्वा	=	लेकर
श्रु	श्रुत्वा	=	सुनकर
ज्ञा	ज्ञात्वा	=	जानकर
स्पृश्	स्पृष्ट्वा	=	छूकर
दृश्	दृष्ट्वा	=	देखकर
क्री	क्रीत्वा	=	खरीदकर
भू	भूत्वा	=	होकर
कृ	कृत्वा	=	करके
धृ	धृत्वा	=	धारण कर

धातुओं से क्त्वा (त्वा) प्रत्यय जोड़ते समय निम्नलिखित नियमों का पालन करना पड़ता है–

(1) सेट् धातुओं में (इट्) का आगम होता है, जैसे–

पठ्	पठित्वा
पत्	पतित्वा
लिख्	लिखित्वा
कथ	कथयित्वा
भक्ष्	भक्षयित्वा
पूज्	पूजयित्वा

(2) धातुओं में स्थित य्, र्, ल्, व् का (सम्प्रसारण अर्थात्) क्रमशः इ, ऋ, लृ, उ हो जाता है, जैसे–

ग्रह्	गृहीत्वा
वद्	उदित्वा
यज्	इष्ट्वा

(3) धातु के अन्त में स्थित म् और न् का प्रायः लोप हो जाता है, जैसे

गम्	गत्वा	हन्	हत्वा
नम्	नत्वा	मन्	मत्वा

(4) धातु के अन्तिम वर्ण में परिवर्तन हो जाता है, जैसे–

च्/ज् →क्	:	वच्	उक्त्वा
		मुच्	मुक्त्वा
		त्यज्	त्यक्त्वा
		भुज्	भुक्त्वा आदि
च्छ् → ष्	:	प्रच्छ्	पृष्ट्वा

ल्यप् (य)

यदि धातु के पूर्व कोई उपसर्ग लगा हो अथवा क्त्वा प्रत्ययान्त शब्द समास में प्रयुक्त हो रहे हों तो **क्त्वा** के स्थान में **ल्यप्** (य) प्रत्यय लगते हैं । इसमें केवल **य** अवशिष्ट रहता है । शेष का लोप हो जाता है । किन्तु नञ् समास में क्त्वा ही रहता है[1], जैसे–

आ + नी + ल्यप् (य) = आनीय
प्र + दा + ल्यप् (य) = प्रदाय
आ + दा + ल्यप् (य) = आदाय
अनु + भू + ल्यप् (य) = अनुभूय
नञ् (अ) + कृ + क्त्वा (त्वा) = अकृत्वा

धातु का अन्तिम स्वर यदि ह्रस्व हो तो 'य' जोड़ने से पूर्व तुक (त्) का आगम होता है।[2] अर्थात् 'य' के स्थान में 'त्य' जुड़ता है, जैसे–

प्र + कृ + ल्यप् (य) = प्रकृत्य
सम् + चि + ल्यप् (य) = संचित्य
वि + जि + ल्यप् (य) = विजित्य
अधि + इ + ल्यप् (य) = अधीत्य

क्त्वा और ल्यप् प्रत्ययान्त शब्द अव्यय बन जाते हैं अर्थात् इनके रूप सदा एक से रहते हैं।

णमुल् (अम्)

किसी समानकर्तृक पूर्वकालिक क्रिया को बार-बार किए जाने के भाव को प्रकट करने के लिए णमुल् (अम्) प्रत्यय का विकल्प से प्रयोग होता है।[3] पक्ष में क्त्वा भी होता है । णमुल् प्रत्ययान्त शब्दों का प्रयोग दो बार होता है।[4] जैसे– भक्तः स्मारं स्मारं (बार-बार स्मरण कर) भजति

---

1. समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप् । ❑ **पा07.1. 37**
2. ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् । ❑ **पा0 6.1. 71**
3. आभीक्ष्ण्ये णमुल् च । ❑ **पा0 3. 4. 22**
4. नित्यवीप्सयोः । ❑ **पा0 8.1.4**

ईशम् । धातु में णमुल् प्रत्यय का केवल अम् बचता है । शेष अक्षरों का लोप हो जाता है । प्रत्यय जुड़ने से पूर्व धातु के अन्तिम स्वर अथवा उपधा अ की वृद्धि (आ, ऐ, औ, आर्) हो जाती है । उपधा में इ, उ, ऋ के रहने पर गुण होता है ।

उदाहरण–

स्मृ	स्मारं स्मारम्	(पक्ष में, स्मृत्वा स्मृत्वा)
श्रु	श्रावं श्रावम्	(पक्ष में, श्रुत्वा श्रुत्वा)
लभ	लाभं लाभम्	(पक्ष में, लब्ध्वा लब्ध्वा)
गम्	गामं गामम्	(पक्ष में, गत्वा गत्वा)
भुज्	भोजं भोजम्	(पक्ष में,भुक्त्वा,भुक्त्वा)

आकारान्त धातु में अम् और धातु के बीच य जोड़ा जाता है[1], जैसे–

पा + अम् = पायं पायम् (पक्ष में, पीत्वा पीत्वा)

दा + अम् = दायं दायम् (पक्ष में, दत्वा दत्वा)

स्ना + अम् = स्नायं स्नायम् (पक्ष में, स्नात्वा स्नात्वा)

णमुल् प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होते हैं अर्थात् इनके रूप नहीं चलते ।

5. निमित्तार्थक – तुमुन् (तुम्)

जब कोई क्रिया किसी दूसरी क्रिया के लिए की जाती है तो निमित्तार्थक क्रिया में **तुमुन्** प्रत्यय होता है[2], जैसे – रमेश पढ़ने के लिए विद्यालय जाता है । यहाँ 'पढ़ने के लिए' निमित्तार्थक क्रिया है । संस्कृत में इसके लिए तुमुन् प्रत्यय का प्रयोग होता है । अतः इस वाक्य का संस्कृत रूप होगा – रमेशः पठितुं विद्यालयं गच्छति ।

जिस क्रिया के साथ तुमुन् प्रत्यय आता है, उसका तथा मुख्य क्रिया का कर्ता एक ही होना चाहिए[3], जैसे– रमेशः पठितुं विद्यालयं गच्छति । इस वाक्य में पठितुम् और गच्छति दोनों क्रियाओं का कर्ता रमेश ही है ।

---

1. आतो युक् चिण्कृतोः । ❑ पा0 7.3.33
2. तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् । ❑ पा03.3.10
3. समानकर्तृकेषु तुमुन् । ❑ पा0 3.3.158

कालवाची शब्दों (जैसे काल, समय, बेला इत्यादि) के साथ समान कर्ता न होने पर भी तुमुन् प्रत्यय होता है[1], जैसे–

गन्तुं कालोऽधुना । पठितुं समयोऽधुना ।

तुमुन् प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होते हैं । अतएव इनके रूप सदा एक समान होते हैं ।

तुमुन् प्रत्यय से बने शब्दों के उदाहरण–

धातु	**निष्पन्न शब्द**	**धातु**	**निष्पन्न शब्द**
गम्	गन्तुम्	स्था	स्थातुम्
हन्	हन्तुम्	दा	दातुम्
पा	पातुम्	स्ना	स्नातुम्

सेट् धातुओं में इट् (इ) का आगम होता है, जैसे–

पठ् पठितुम्

पत् पतितुम्

हस् हसितुम्

धातु के अन्त में या उपधा में स्थित इ, उ, ऋ का गुण (ए,ओ,अर्) होता है, जैसे–

जि	जेतुम्	भू	भवितुम्
नी	नेतुम्	श्रु	श्रोतुम्
लिख्	लेखितुम्	कृ	कर्तुम्
विद्	वेदितुम्	हृ	हर्तुम्

6. कर्तृवाचक

ण्वुल् (वु = अक), तृच् (तृ), णिनि (इन्)

कर्ता (करने वाला) अर्थ में किसी भी धातु से ण्वुल् (वु = अक) तथा तृच् (तृ) प्रत्यय होते हैं।[2] ण्वुल् के लगने पर धातु के स्वर की वृद्धि तथा तृच् के लगने पर गुण हो जाता है ।

---

1. कालसमयवेलासु तुमुन् । ❑ पा0 3.3.167

2. ण्वुल्तृचौ । ❑ पा0 3.1.133

उदाहरण–

धातु	ण्वुल् (वु = अक)	धातु	तृच् से निष्पन्न शब्द
पठ्	पाठक	कृ	कर्तृ
पच्	पाचक	दा	दातृ
कृ	कारक	नी	नेतृ
नी	नायक	श्रु	श्रोतृ
स्मृ	स्मारक	जि	जेतृ
दा	दायक	भृ	भर्तृ
गै	गायक	युध्	योद्धृ
दृश्	दर्शक	हन्	हन्तृ
यज्	याजक	पठ्	पठितृ
ग्रह्	ग्राहक		

ण्वुल् (अक) प्रत्ययान्त शब्दों के रूप तीनों लिङ्गों में बनते हैं – पुंलिङ्ग में बालक के समान, स्त्रीलिङ्ग में लता के समान और नपुंसकलिङ्ग में फल के समान । तृच् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप तीनों लिङ्गों में कर्ता, कर्त्री, कर्तृ जैसे चलते हैं ।

णिनि (इन्)

ग्रह् आदि धातुओं में कर्ता अर्थ में णिनि (इन्) प्रत्यय होता है[1], जैसे–
ग्रह् + इन् = ग्रा, ग्राहिन् –ग्राही, उत्साही, स्थायी आदि ।

7. भावार्थक

ल्युट्, घञ्, अच् तथा क्तिन् प्रत्यय धातु से भाववाचक संज्ञा बनाने के लिए प्रयुक्त होते हैं ।

ल्युट् (यु = अन)

भाववाचक संज्ञा बनाने के लिए ल्युट् (यु = अन) प्रत्यय होता है । साथ ही इसका प्रयोग करण तथा अधिकरण के अर्थ में भी होता है।[2] ल्युट् प्रत्ययान्त शब्द प्रायः नपुंसकलिङ्ग में होते हैं तथा इसके रूप फल के समान चलते हैं ।

---

1. नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः । ☐ **पा0 3.1.134**

2. करणाधिकरणयोश्च । ☐ **पा0 3.3.117**

उदाहरण–

दा	दानम्	गम्	गमनम्
या	यानम्	साध्	साधनम्
पा	पानम्	पठ्	पठनम्
पत्	पतनम्	सह्	सहनम्
मन्	मननम्	भज्	भजनम्
वद्	वदनम्	रक्ष्	रक्षणम्
आस्	आसनम्	दृश्	दर्शनम्

धातु में आने वाले ह्रस्व या दीर्घ इ,उ, ऋ का गुण (ए, ओ,अर्) हो जाता है, जैसे–

शी	शयनम्	कृ	करणम्
नी	नयनम्	हृ	हरणम्
श्रु	श्रवणम्	दृश्	दर्शनम्
भू	भवनम्	भुज्	भोजनम्

घञ् (अ)

भाव अर्थ में (अर्थात् सिद्धावस्थापन्न क्रिया के अर्थ में) धातु में घञ् प्रत्यय होता है।[1] घञ् में अ बचता है, जो धातु से जुड़ता है। शेष अक्षरों का लोप हो जाता है। घञ् जोड़ते समय धातु के अन्त में स्थित ह्रस्व या दीर्घ इ, उ, ऋ तथा उपधा में स्थित 'अ' की प्रायः वृद्धि (क्रमशः ऐ, औ आर् तथा आ) हो जाती है। उपधा में स्थित इ, उ, ऋ को गुण (क्रमशः ए, ओ, अर्) हो जाता है।

उदाहरण–

भू	भावः	उप + कृ	उपकारः
आधृ	आधारः	लभ्	लाभः
पठ्	पाठः	कम्	कामः
हस्	हासः	आ + चर्	आचारः
रम्	रामः	आमुद्	आमोदः
अवतृ	अवतारः	लिख्	लेखः

1. भावे । ❑ पा0 3.3.18

यदि धातु के अन्त में च् या ज् हो तो वे क्रमशः क् या ग् में बदल जाते हैं।[1]

पच् पाकः , शुच् शोकः , यज् यागः।
भुज् भोगः , त्यज् त्यागः ,

म् से अन्त होने वाली कुछ धातुओं में वृद्धि नहीं होती, जैसे–

दम् दमः , श्रम् श्रमः।

अच् (अ)

इ/ई से अन्त होने वाली धातुओं में भाव अर्थ में अच् (अ) प्रत्यय लगता है[2] अच् लगने के पूर्व इ/ई का गुण हो कर ए होता है । जैसे–

जि जयः, चि चयः , नी नयः इत्यादि

अच् प्रत्ययान्त शब्द प्रायः पुंलिङ्ग होते हैं ।

क्तिन् (ति)

स्त्रीलिङ्ग भाववाचक संज्ञा बनाने के लिए धातु में क्तिन् (ति) प्रत्यय का प्रयोग होता है।[3] क्तिन् प्रत्ययान्त शब्द सदा स्त्रीलिङ्ग होते हैं तथा इसके रूप मति की तरह चलते हैं ।

उदाहरण–

कृ + क्तिन् (ति) = कृतिः श्रु + ति = श्रुतिः
भी + ति = भीतिः स्तु + ति = स्तुतिः
स्मृ + ति = स्मृतिः जागृ + ति = जागर्तिः

क्त्वा प्रत्यय जोड़ने से पूर्व धातु में जो परिवर्तन होते हैं वे यहाँ भी होते हैं।

(1) धातु के अन्त में स्थित म् और न् का प्रायः लोप होता है[4]–

---

1. चजोः कु घिण्ण्यतोः। ❑ पा0 7. 3. 52
2. एरच् । ❑ पा0 3.3.56
3. स्त्रियां क्तिन् । ❑ पा0 3.3.94
4. किन्तु शम् + ति = शान्तिः
   कम् + ति = कान्तिः, आदि में म् का लोप नहीं होता ।

गम्	गतिः	मन्	मतिः
रम्	रतिः	नम्	नतिः

(2) धातु के अन्तिम वर्ण में परिवर्तन हो जाते हैं, जैसे–

भज्	भक्तिः	सृज्	सृष्टिः
दृश्	दृष्टिः	बुध्	बुद्धिः

(3) अन्य परिवर्तन–

वच् उक्तिः, कृ कीर्तिः, जन् जातिः इत्यादि

अभ्यास

1. निम्नलिखित से उचित रूप बनाइए–

पठ्	+	अनीयर्	=	छिद्	+	क्त	=
स्था	+	तव्य	=	दृश्	+	क्त	=
दा	+	अनीयर्	=	गम्	+	क्तवत्	=
पूज्	+	अनीयर्	=	नम्	+	क्त्वा	=
स्था	+	अनीयर्	=	दृश्	+	क्त्वा	=
निन्द्	+	अनीयर्	=	प्र + स्था	+	ल्यप्	=
जि	+	यत्	=	दा	+	ल्युट्	=
दा	+	यत्	=	नी	+	ल्युट्	=
पठ्	+	ण्यत्	=	कृ	+	ल्युट्	=
कृ	+	ण्यत्	=	स्था	+	क्तिन्	
भू	+	यत्	=	मन्	+	क्तिन्	=
भुज्	+	ण्यत्	=	लभ्	+	यत्	=

2. निम्नलिखित रूपों में प्रकृति (धातु) और प्रत्यय को अलग-अलग कीजिए–

श्रोतव्यम्	श्रवणीयम्
भोजनीयम्	पठितव्यम्
करणीयम्	हसितव्यम्
गेयम्	श्रुत्वा
पेयम्	श्रोतुम्
लभ्यम्	पठनम्
ग्राह्यम्	शयनम्
उक्तम्	भोजनम्
गृहीतम्	दर्शनम्
आदाय	गतिः
त्यागः	पाठः
जयः	उपाध्यायः
स्मारम्	स्नानम्

3. टिप्पणी लिखिए–

कृत्, कृत्य, निष्ठा, शतृ, शानच्, तुमुन् ।

4. 'क' भाग में दिए गए कृदन्त शब्दों को 'ख' में दिए उपयुक्त शब्दों के साथ जोड़िए–

(क)	(ख)
भोज्यः	प्रदेशः
भोग्यः	का
निर्वातः	ग्रामः
निर्वाणः	दीपः
गन्तव्यः	वयम्
गतिः	रसः
श्रावं-श्रावम्	रामायणम्
पेयः	शापः

II. तद्धित प्रत्यय (Secondary Suffixes)

सामान्य नियम

जो प्रत्यय प्रातिपादक[1] (संज्ञा, विशेषण, कृदन्त आदि) के साथ लगकर उनके अर्थ को परिवर्तित कर देते हैं, वे **तद्धित प्रत्यय**[2] कहलाते हैं। जैसे–

वसुदेवस्य अपत्यं पुमान् वासुदेवः (वसुदेव + अण्)

तद्धित प्रत्ययान्त शब्दों में कारक विभक्तियाँ लगती हैं। तद्धित प्रत्यय जोड़ते समय निम्नलिखित नियमों का पालन करना पड़ता है–

1. तद्धित प्रत्यय यदि ञित्, णित् या कित् हो (अर्थात् ञ, ण्, या क् में से किसी का लोप हुआ हो) तो वह जिस शब्द में लगता है, उसके आदि स्वर की वृद्धि होती है[3], जैसे – वसुदेव+ अण्+ (अ)= वासुदेवः । यहाँ आदि स्वर अ की वृद्धि आ हो गई है ।

2. स्वर या यकार से प्रारम्भ होने वाले तद्धित प्रत्यय जिस शब्द में जोड़े जाते हैं, उस शब्द के अन्त में यदि अ/ आ या इ/ई हो तो उसका लोप हो जाता है और यदि उ/ऊ हो तो उसका गुण होकर ओ हो जाता है।[4] जैसे–

दशरथ + इञ् (इ) = दाशरथ् + इ = दाशरथिः ।
वसुदेव + अण् (अ) = वासुदेव् + अ = वासुदेवः ।
विनता + ढक् (एय) = विनत् + एय = वैनतेयः
उपगु + अण् (अ) = उपगो + अ = औपगवः

तद्धित प्रत्ययों की संख्या अनेक हैं और ये विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होते हैं। कुछ प्रमुख तद्धित प्रत्ययों का परिचय यहाँ दिया जा रहा है–

अण् (अ)

1. निम्नलिखित से अपत्य (पुत्र या पुत्री) अर्थ में अण् प्रत्यय होता है।[5] (शब्द में आदि स्वर की वृद्धि, शब्द के अन्तिम अ/आ या इ/ई का लोप होता है)

---

1. अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् । कृतद्धितसमासाश्च । ❑ पा0 **1.2.45,46**
2. (तत् + हित) तेभ्यः प्रयोगेभ्यः हिता इति तद्धिता ।
3. तद्धितेष्वचामादेः । किति च । ❑ पा0 **7.2.117, 118**
4. यस्येति च । ओर्गुणः । ❑ पा0 **6.4.148,146**
5. तस्यापत्यम् । ❑ पा0 **4.1.92**

(i) अश्वपति आदि से[1] –

अश्वपति + अण् (अ)= आश्वपतम् (अश्वपतेः अपत्यम्)

गणपति + अण् (अ)= गाणपतम्

(ii) शिव आदि से[2] –

शिव + अण् (अ)= शैवः (शिवस्यापत्यम् पुमान्)

गङ्गा + अण् (अ)= गाङ्गः

(iii) ऋषिवाचक, वृष्णिवंशीवाचक और कुरुवंशीवाचक से[3] –

ऋषि – वसिष्ठ + अण् (अ) = वासिष्ठः (वसिष्ठस्य अपत्यं पुमान्)

विश्वमित्र + अण् (अ) = वैश्वामित्रः (विश्वामित्रस्यापत्यं पुमान्)

वृष्णि – वसुदेव + अण् (अ) = वासुदेवः

यदु + अण् (अ) = यादवः

कुरु – नकुल + अण् (अ) = नाकुलः

सहदेवः + अण् (अ) = साहदेवः

2. कोई संख्या, सम् तथा भद्र शब्द यदि पहले हो तो मातृ शब्द से[4] अण् होता है (मातृ का मातुर हो जाता है)

द्विमातृ + अण् (अ)= द्वैमातुरः

षण्मातृ + अण् (अ)= षाण्मातुरः

संमातृ + अण् (अ)= साम्मातुरः

भद्रमातृ + अण् (अ)= भाद्रमातुरः

3. जिससे कोई वस्तु रंगी जाय, उस रंगवाची शब्द में अण् प्रत्यय लगता है।[5] जैसे–

कषाय + अण् (अ)= काषायम् (कषायेण रक्तं वस्त्रम् = गेरूए रंग में रंगा हुआ)

---

1. अश्वपत्यादिभ्यश्च। ❑ पा0 4.1.84
अश्वपत्यादि—अश्वपति, शतपति, धनपति, गणपति, राष्ट्रपति, कुलपति, गृहपति, पशुपति, धान्यपति, धर्मपति, सभापति, प्राणपति, क्षेत्रपति ।

2. शिवादिभ्योऽण् । ❑ पा0 4.1.112

3. ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च। ❑ पा0 4.1.114

4. मातृरुत्सख्यासंभद्रपूर्वायाः। ❑ पा0 4.1.115

5. तेन रक्तं रागात् । ❑ पा0 4.2.1

4. नक्षत्र से युक्त समयवाची शब्द बनाने के लिए नक्षत्र वाचक शब्द में अण् प्रत्यय लगता है।[1] जैसे–

चित्रा + अण् (अ)= चैत्रः मासः ।

विशाखा + अण् (अ)= वैशाखः मासः ।

5. उसे पढ़ता है, उसे जानता है, इस अर्थ में अण् प्रत्यय होता है।[2]
व्याकरण + अण् (अ) = वैयाकरणः (व्याकरणम् अधीते वेद वा)

इस प्रकार अण् प्रत्यय अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है।

इञ् (इ)

अपत्य अर्थ में अकारान्त प्रातिपादिक (संज्ञा आदि) से इञ् (इ) प्रत्यय होता है।[3] (शब्द के प्रथम स्वर की वृद्धि एवं अन्त में आये **अ** का लोप होता है)। जैसे–

दशरथ + इञ् (इ) = दाशरथिः (दशरथस्य अपत्यं पुमान्)= रामः

सुमित्रा + इ = सौमित्रिः . = लक्ष्मणः

द्रोण + इ = द्रौणिः = अश्वत्थामा

मतुप् (मत्)

इसके पास है या इसमें है, इस अर्थ में मतुप् (मत्) प्रत्यय होता है।[4] जैसे–

गो + मत् = गोमत् (गोमान्) गावः अस्य सन्तीति (गाय वाला) ।

बुद्धि + मत् = बुद्धिमत् (बुद्धिमान्, बुद्धि वाला)

इसी प्रकार–

शक्ति + मत् = शक्तिमत् (शक्तिमान्), धी + मत् = धीमत् (धीमान्)

श्री + मत् = श्रीमत् (श्रीमान्), कीर्ति + मत् = कीर्तिमत् (कीर्तिमान्)

---

1. नक्षत्रेण युक्तः कालः । ❑ **पा0 4.2.3**
2. तदधीते तद्वेद । ❑ **पा0 4.2.59**
3. अत इञ् । ❑ **पा0 4.1.95**
4. तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् । ❑ **पा0 5.2.94**

वतुप् (वत्)

शब्द के अन्त में या उपधा में यदि अ/आ या म् हो तो मत् के स्थान पर वत् हो जाता है[1], जैसे–

धन – धनवत् (धनवान्, धनम् अस्य अस्तीति) धन वाला
गुण – गुणवत् (गुणवान्), गुण वाला
विद्या – विद्यावत् (विद्यावान्) विद्या वाला
लक्ष्मी – लक्ष्मीवत् (लक्ष्मीवान्) लक्ष्मी वाला

मतुप् या वतुप् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में भवत् के समान, स्त्रीलिङ्ग में नदी के समान और नपुंसकलिङ्ग में जगत् के समान होते हैं।

इनि (इन्) और ठन् (इक)

युक्त या वाला अर्थ में अकारान्त शब्दों से इनि (इन्) और ठन् (इक) प्रत्यय लगते हैं।[2] जैसे–

दण्ड + इन् = दण्डिन् – दण्डी
दण्ड + इक = दण्डिक – दण्डिकः, दण्ड वाला
रथ + इन् = रथिन् – रथी
रथ + इक = रथिक – रथिकः, रथ वाला
धन + इन् = धनिन् – धनी
धन + इक = धनिक – धनिकः, धन वाला

इन् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप पुंलिङ्ग में दण्डिन् के समान और स्त्रीलिङ्ग में ई लगाकर नदी के समान होते हैं।

---

1. मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः । ❑ पा० 8.2.9
2. अत इनिठनौ । ❑ पा० 5.2.115

इतच् (इत)

युक्त अर्थ में तारक आदि शब्दों से इतच् (इत) प्रत्यय लगता है[1], जैसे–
तारका + इतच् (इत) = तारकितं नभः (तारों से युक्त)
पिपासा + इतच् (इत) = पिपासितः (प्यास से युक्त) ।

इसी प्रकार दुःखित, पुष्पितः, कुसुमितः, अङ्कुरितः, क्षुधितः आदि ।

भावार्थक – त्व और तल् (ता)

किसी शब्द में त्व और तल् (ता) जोड़ कर भाववाचक संज्ञाएं बनाई जाती हैं।[2] त्व प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं और ता प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग। इनके रूप क्रमशः फलम् और बाला के समान चलते हैं ।

उदाहरण –

मूल शब्द	**त्व प्रत्ययान्त**	**तल् (ता) प्रत्यान्त**	
गुरु	गुरुत्वम्	गुरुता	(गुरोः भावः – इस अर्थ में)
मूर्ख	मूर्खत्वम्	मूर्खता	
मित्र	मित्रत्वम्	मित्रता	
दुष्ट	दुष्टत्वम्	दुष्टता	
लघु	लघुत्वम्	लघुता	
पवित्र	पवित्रत्वम्	पवित्रता	
विद्वस्	विद्वत्त्वम्	विद्वत्ता	
महत्	महत्त्वम्	महत्ता	
मनुष्य	मनुष्यत्वम्	मनुष्यता	

---

1. तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच् । ❑ पा0 **5.2.36**
तारकादि गण के मुख्य शब्द –
तारका, सूत्र, मूत्र, उच्चार, प्रचार, विचार, कुड्मल, कण्टक, मुकुल, कुसुम, कुतूहल, स्तवक, किसलय, पल्लव, निद्रा, मुद्रा, बुभुक्षा, पिपासा, श्रद्धा, पुलक, सुख, दुःख, उत्कण्ठा, व्याधि, व्रण, गौरव, शास्त्र, तरङ्ग, तिलक, चन्द्रक, अन्धकार, गर्व, मुकुर, हर्ष, उत्कर्ष, क्षुधा, ज्वर, रोग, रोमाञ्च, पण्डा, कज्जल, तृष, फल, श्रृंगार, अङ्कुर, कलङ्क, मूर्च्छा, प्रतिबिम्ब, दीक्षा, गर्ज आदि ।

2. तस्य भावस्त्वतलौ । ❑ पा0 **5.1.119**

तल् (ता) प्रत्यय समूह के अर्थ में भी कुछ शब्दों से होता है[1], जैसे–

जन + तल् (ता) = जनता (जनानां समूहः – इस अर्थ में)।

इसी प्रकार

ग्राम + तल् (ता) = ग्रामता

बन्धु + तल् (ता) = बन्धुता

सहाय + तल् (ता) = सहायता[2], ऐसे ही गजता।

यत् (य)

होने वाला (तत्र भवः) इस अर्थ में शरीर के अवयववाची शब्दों से यत् (य) प्रत्यय होता है[3], जैसे–

दन्तेषु भवम् (दाँतों में होने वाला) इस अर्थ में शरीरावयव दन्त + यत् (य) दन्त्य, विभक्ति युक्त होने पर दन्त्यम् रूप बनता है। इसी प्रकार–

कण्ठ + य = कण्ठ्यम् (कण्ठे भवम्)।

मुख + य = मुख्यम् (मुखे भवम्)।

हित अर्थ में गो आदि कुछ शब्दों में यत् प्रत्यय होता है। जैसे–

गव्यम् (गोभ्यः हितम्) आदि।

थाल् (था)

प्रकार अर्थ में किम् आदि सर्वनामों से थाल् (था) प्रत्यय होता है[4], जैसे–

तद्+ था = तथा (तेन प्रकारेण)। यद् + था = यथा (येन प्रकारेण)।

सर्व + था = सर्वथा, उभय + था = उभयथा।

इदम् और किम् के उपरान्त थमु (थम्) होता है,[5] जैसे–

इदम् + थम् = इत्थम् = इत्थम् (अनेन एतेन वा प्रकारेण)

किम् + थम् = कथम् (केन प्रकारेण)

---

1. ग्रामजनबन्धुभ्यस्तल्। ❑ पा0 4. 2.43
2. गजसहायाभ्यां चेति वक्तव्यम् (वार्तिक)
3. शरीरावयवाद्यत्। ❑ पा0 5.1. 6
4. प्रकारवचने थाल्। ❑ पा0 5.3. 23
5. इदमस्थमुः। किमश्च। ❑ पा0 5.3. 24, 25

सुन् (ईयस्)

अतिशय दिखलाने के लिए तरप् (तर) और ईयसुन्
। होते है[1], जैसे–

निष्पन्न शब्द	ईयसुन् (ईयस्) से निष्पन्न शब्द
लघुतरः	लघीयान्
गुरुतरः	गरीयान्
पटुतरः	पटीयान्

ष्ठन् (इष्ठ)

एक का अतिशय दिखलाने के लिए तमप् (तम) और
लगते हैं[2], जैसे–

मप् से निष्पन्न रूप	इष्ठन् से निष्पन्न रूप
घुतमः	लघिष्ठः
टुतमः	पटिष्ठः

तमप् एवं इष्ठन् प्रत्यय लगने पर जिसकी विशेषता
ं षष्ठी या सप्तमी विभक्ति होती है, जैसे–
वा सुरेशः पटुतमः।
र इष्ठन् (इष्ठ) प्रत्यय केवल गुणवाचक शब्दों में ही
((तर) और तमप् (तम) सर्वत्र लगते हैं ।

रबीयसुनौ । ❑ पा0 5.3. 57
। ❑ पा0 5.3. 55

मयट् (मय)

खाने वाली वस्तुओं को छोड़कर अन्य वस्तुवाचक शब्दों से विकार तथा अवयव अर्थ में विकल्प से मयट् (मय) प्रत्यय होता है।[1] जैसे–

सुवर्ण + मयट् (मय) = सुवर्णमयम् (सुवर्ण का विकार अथवा अवयव) पक्ष में, सौवर्णम्।

इसी प्रकार वाङ्मयम्, अम्मयम् इत्यादि ।

वुञ् (अक)

धूम आदि शब्दों से 'तत्र भवः' आदि अर्थों में वुञ् (अक) प्रत्यय होता है[2]। जैसे–

धूमे भवः = धौमकः (धूम + वुञ् – अक)

तीर्थे भवः = तैर्थकः (तीर्थ + वुञ् – अक)

इसी प्रकार ग्रैष्मकम, राजन्यकः (राजन्यानां निवासो जनपदः) आदि उदाहरण समझना चाहिए ।

ख, खञ् (ईन)

1. ग्राम तथा कुल शब्दों से 'तत्र भवः' अर्थ में 'ख' (ईन) प्रत्यय होता है।[3] जैसे–

   ग्राम + ख (ईन) = ग्रामीणः (पक्ष में ग्राम्यः) ।

   कुल + ख (ईन) = कुलीनः ।

2. युष्मद्, अस्मद् शब्दों से सम्बन्धी अर्थ में खञ् (ईन) प्रत्यय होता है।[4]

   जैसे– मम अयम् – मामकीनः (अस्मद् + खञ् – ईन)

   तव अयम् – तावकीनः (युष्मद् + खञ् – ईन)[5]

   युवयोः, युष्माकम् अयम् – यौष्माकीणः (युष्मद् + खञ् – ईन)

   आवयोः, अस्माकम् अयम् – आस्माकीनः (आस्माकीनः + खञ् – ईन)

---

1. नित्यं वृद्धशरादिभ्यः । ❑ पा0 4.3.144
2. धूमादिभ्यश्च । ❑ पा0 4.2.127
3. ग्रामाद्यखञौ । ❑ पा0 4. 2. 94 कुलात् खः । ❑ पा0 4.1.139
4. युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च। ❑ पा0 4.3.1
5. तवकममकावेकवचने । ❑ पा0 4.3.3

त्रल् (त्र)

1. सप्तमी के अर्थ में त्रल् प्रत्यय होता है।[1]
2. त्रल् प्रत्यय से बना हुआ शब्द अव्यय होता है।

त्रल् में त्र बचता है। जैसे –

किम् → (कु)+ त्रल् = कुत्र[4]

यत् → (य) + त्रल् = यत्र

तत् → (त) + त्रल् = तत्र

सर्व + त्रल् = सर्वत्र

उभय + त्रल् = उभयत्र

अन्य + त्रल् = अन्यत्र

बहु+ त्रल् = बहुत्र

ठक् (इक)

विभिन्न अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है।

'ठक्' में ठ बचता है। 'ठ' का इक् आदेश हो जाता है। जैसे–

बनाने अर्थ में →दधि + ठक् (इक्) = दाधिकम्

सवारी करने अर्थ में → हस्तिन् + ठक् (इक्) = हास्तिकः

आचरण अर्थ में → धर्म + ठक् (इक्) = धार्मिकः

---

1. सप्तम्यास्त्रल्। ❑ पा0 **5.3.10**
2. कुतिहोः। ❑ पा0 **7.2.104**

अभ्यास

1. **निम्नलिखित में प्रकृति और प्रत्ययों को जोड़कर नवीन शब्द बनाइए–**
   वसुदेव + अण् (अ) । चित्रा + अण् (अ) । सर्व + त्रल् ।
   विद्या + मतुप् (वत्) । दण्ड + इनि (इन्) । धर्म + ठक् ।
   दुःख + इतच् (इत) । मित्र + तल् (ता) ।
   महत् + त्व। ओष्ठ + यत् (य) ।
   यद् + थाल् (था) । किम् + त्रल् ।
2. **निम्नलिखित में प्रकृति और प्रत्ययों को अलग कीजिए–**
   दाशरथिः, शैवः, यादवः, वैशाखः, वैयाकरणः, श्रीमान् (श्रीमत्), लक्ष्मीवान् (लक्ष्मीवत्), धनी, कुसुमितः, पवित्रता, विद्वत्ता, कण्ठ्यम्, सुवर्णमयम्, वैनतेयः, सौमित्रिः, षाण्मातुरः, पटीयान्, अन्यत्र, दाधिकम्, हास्तिकः ।
3. **निम्नलिखित को समझाइए–**
   तद्धित, भावार्थक तद्धित, इतच्, इष्ठन्, त्रल्, ठक् ।
4. **निम्नलिखित विग्रहों के आधार पर बनने वाले तद्धितान्त शब्द लिखिए–**
   क. न्यायम् अधीते ख. अश्विन्या युक्तःमासः
   ग. पृथायाः अपत्यं पुमान् घ. छत्रम् अस्ति अस्य
   ङ. लघोः भावः ।
5. **नीचे लिखे हुए शब्दों में जो कृदन्त हैं उन्हें 'क' भाग में और जो तद्धित हैं उन्हें 'ख' भाग में लिखिए–**
   लिखित, दुःखित, वैदिक, पावक, हस्ती, स्थायी, भव्य, गव्य, लघुता, कर्ता, तत्र, अन्यत्र।
   क. कृदन्त ख. तद्धित

III. स्त्री प्रत्यय (Feminine Suffixes)

जिन प्रत्ययों को जोड़कर पुंलिङ्ग शब्दों का स्त्रीलिङ्ग रूप बनाया जाता है वे **स्त्री प्रत्यय** कहलाते हैं । ये मुख्यतः दो प्रकार के हैं–

1. आ (टाप्, डाप्, चाप्)
2. ई (ङीप्, ङीष्, ङीन्)

1. आ

सामान्यतः अकारान्त शब्दों से स्त्रीलिङ्ग बनाने के लिए आ (टाप्) प्रत्यय जोड़ा जाता है[1] ।

उदाहरण–

अज (बकरा)	अजा	सुत	सुता
कोकिल	कोकिला	चतुर	चतुरा
अश्व	अश्वा	क्षत्रिय	क्षत्रिया
बाल	बाला	कृष्ण	कृष्णा
शूद्र	शूद्रा	सरल	सरला
वैश्य	वैश्या	प्रथम	प्रथमा

आ जोड़ने से पूर्व यदि शब्द के अन्त में अक हो तो वह इक में बदल जाता है[2], जैसे–

बालक	बालिका	मूषक	मूषिका
पाचक	पाचिका	मामक	मामिका
अध्यापक	अध्यापिका	साधक	साधिका
शिक्षक	शिक्षिका	पाठक	पाठिका
नायक	नायिका	गायक	गायिका

---

1. अजाद्यतष्टाप् । □ पा0 4.1.4
2. परन्तु ऐसा तभी होता है जब क किसी प्रत्यय का हो । अन्यथा शङ्क–शङ्का । यहाँ क धातु का है ।

2. ई

1. ऋकारान्त और नकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों का स्त्रीलिङ्ग बनाने के लिए ई (ङीप्) प्रत्यय जोड़ा जाता है[1], जैसे–

कर्तृ	कर्त्री	दण्डिन्	दण्डिनी
दातृ	दात्री	गुणिन्	गुणिनी
धातृ	धात्री	तपस्विन्	तपस्विनी
कामिन्	कामिनी	मनोहारिन्	मनोहारिणी

वय की अवस्था (अन्तिम को छोड़कर) का ज्ञान कराने वाले अकारान्त शब्दों में ई (ङीप्) जोड़कर स्त्रीलिङ्ग रूप बनाया जाता है[2], जैसे–

कुमार – कुमारी किशोर – किशोरी

कुछ अकारान्त शब्दों में ई (ङीप्) जोड़कर स्त्रीलिङ्ग बनाया जाता है, जैसे–

भोगकर भोगकरी (कर से अन्त होने वाले सभी शब्दों में ई लगती है)

अर्थकर अर्थकरी

नद नदी

देव देवी

ऐसे अकारान्त जातिवाचक शब्द जिनकी उपधा (अन्तिम वर्ण से पूर्व का वर्ण) में य् न हो, उससे स्त्रीलिङ्ग बनाने के लिए ई (ङीष्) प्रत्यय[3] जोड़ा जाता है, जैसे–

ब्राह्मण	–	ब्राह्मणी	गोप	–	गोपी
मानुष	–	मानुषी	सिंह	–	सिंही
मृग	–	मृगी	व्याघ्र	–	व्याघ्री
भल्लूक	–	भल्लूकी	महिष	–	महिषी
शूकर	–	शूकरी	गन्धर्व	–	गन्धर्वी

---

1. ऋन्नेभ्यो ङीप् । ❑ पा0 4.1. 5
2. वयसि प्रथमे । ❑ पा0 4.1. 20
3. जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्। ❑ 4.1. 63

उकारान्त गुणवाची शब्दों से स्त्रीलिङ्ग रूप बनाने के लिए विकल्प से ई (ङीष्) प्रत्यय जुड़ता है[1], जैसे–

मृदु मृद्वी	पक्ष् में	मृदुः
पटु पट्वी	”	पटुः
साधु साध्वी	”	साधुः
गुरु गुर्वी	”	गुरुः

द्विगु समास का अन्तिम शब्द यदि अकारान्त हो तो ई (ङीप्) प्रत्यय[2] लगता है, जैसे–

त्रिलोक – त्रिलोकी। पञ्चनल – पञ्चनली।

ऐसे प्रत्यय जिनके उकार या ऋकार का लोप होता है, जैसे–

मतुप्, वतुप्, ईयसुन्, क्तवतु, शतृ आदि से बने शब्दों का स्त्रीलिङ्ग रूप बनाने के लिए ई (ङीप्) प्रत्यय[3] जोड़ा जाता है, जैसे–

श्रीमत्	श्रीमती	बुद्धिमत्	बुद्धिमती
भवत्	भवती	विद्यावत्	विद्यावती
लघीयस्	लघीयसी	गतवत्	गतवती

भ्वादि, अदादि और चुरादि गणीय धातुओं से बने शतृ (अत्) प्रत्ययान्त शब्दों का स्त्रीलिङ्ग रूप बनाने के लिए जब ई (ङीप्) जोड़ा जाता है, तो त् के पूर्व न् लग जाता है, जैसे–

गच्छत्	गच्छन्ती	चिन्तयत्	चिन्तयन्ती
वदत्	वदन्ती	भक्षयत्	भक्षयन्ती
नृत्यत्	नृत्यन्ती	दर्शयत्	दर्शयन्ती

जाया अर्थ में निम्नलिखित शब्दों से ई (ङीष्) जोड़ते समय ई से पूर्व आन् (आनुक्) जुड़ता है, जैसे–

इन्द्र	–	इन्द्राणी (इन्द्रस्य जाया)
वरुण	–	वरुणानी
भव	–	भवानी
शर्व	–	शर्वाणी

1. वोतो गुणवचनात् । ❑ पा0 - **4.1.44**
2. द्विगोः। ❑ पा0 **4 .1. 21**
3. उगितश्च । ❑ पा0 **4.1.6**

रुद्र	–	रुद्राणी
मृड	–	मृडानी
आचार्य	–	आचार्यानी
मातुल	–	मातुलानी

कुछ शब्दों से स्त्रीलिङ्ग रूप बनाने के लिए आ और ई दोनों प्रत्यय जुड़ते हैं, किन्तु उनके अर्थ में भिन्नता आ जाती है, जैसे–

शूद्र	शूद्रा (जाति)	–	शूद्री (पत्नी)
आचार्य	आचार्या (जाति)	–	आचार्यानी (पत्नी)
क्षत्रिय	क्षत्रिया (जाति)	–	क्षत्रियाणी (पत्नी)
उपाध्याय	उपाध्याया (जाति)	–	उपाध्यायी, उपाध्यायानी (पत्नी)

3. ति

स्त्रीलिङ्ग बनाने के लिए युवन् शब्द में ति प्रत्यय[1] लगता है, जैसे–

युवन् – युवतिः

शतृ प्रत्ययान्त 'युवन्' शब्द का स्त्रीलिङ्ग रूप 'युवती' बनता है ।

अभ्यास

1. **निम्नलिखित शब्दों का स्त्रीलिङ्ग बनाइए–**
   बाल, सरल, द्वितीय, नाटक, कारक, शिक्षक, कुमार, देव, मृदु, सिंह, श्रीमत् ।
2. **निम्नलिखित शब्दों का पुंलिङ्ग बनाइए–**
   तपस्विनी, दात्री, युवतिः, सुता, साध्वी ।
3. **निम्नलिखित शब्दों के अर्थ में अन्तर बताइए–**
   (क) शूद्रा, शूद्री
   ख) उपाध्याया, उपाध्यायानी

---

[1] यूनस्तिः । ❑ पा० 4.1.77

ग) क्षत्रिया क्षत्रियाणी

घ) आचार्या आचार्यानी

4. निम्नलिखित अर्थों में बनने वाला स्त्री प्रत्ययान्त शब्द लिखिए–

(क) रूद्रस्य स्त्री,

(ख) मृडस्य स्त्री

(ग) चन्द्र इव मुखं यस्याः सा

(घ) या अन्नं पचति सा

(ङ) अष्टानाम् अध्यायानां समाहारः ।

षष्ठ अध्याय

(Indeclinables)

परिभाषा

संस्कृत में कुछ शब्द ऐसे हैं जिनके रूप सभी लिङ्गों, सभी वचनों एवं सभी विभक्तियों में समान होते हैं[1], वे **अव्यय** कहलाते हैं, जैसे – इदानीम्, अधुना, अत्र, तत्र आदि । इनके रूप कभी परिवर्तित नहीं होते।[2]

प्रकार

1. कुछ अव्यय क्रिया-विशेषण के रूप में प्रयुक्त होते हैं, जैसे – अकस्मात्, अद्य, अपरेद्युः, कुत्र आदि ।
2. कुछ संयोजक का कार्य करते हैं; जैसे – च, वा, अथ, किन्तु आदि ।
3. कुछ मनोविकार के सूचक होते हैं, जैसे – हन्त, हा, धिक् आदि। ये विस्मयसूचक अव्यय भी कहलाते हैं ।

---

1. " सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु, सर्वासु च विभक्तिषु ।
   वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्"।। ❑ सि० कौ० अव्यय प्रकरण
2. न व्येति = विकारं न प्राप्नोति इति अव्ययम् ।

4. कुछ अव्यय निपात कहलाते हैं, जैसे – खलु, तु, नु, किल आदि। ये अर्थ पर बल देने वाले होते हैं ।
5. इनके अतिरिक्त उपसर्गों[1] की भी गणना अव्यय में की जाती है, परन्तु लौकिक संस्कृत में इनका स्वतंत्र प्रयोग नहीं होता । ये दूसरे शब्दों से संयुक्त होकर उनके अर्थ को बदल देते हैं या बढ़ा देते हैं ।

अव्ययों का वाक्यों में प्रयोग

कुछ प्रमुख अव्ययों के वाक्यों में प्रयोग यहाँ प्रस्तुत है –

पुनः (बार-बार)	— विघ्नैः पुनःपुनरपि प्रतिहन्यमानाः प्रारब्धमुत्तमजनाः न परित्यजन्ति।
उच्चैः (जोर से)	— उच्चैः वद ।
नीचैः (नीचे)	— नीचैः उपरि गच्छति भाग्यपङ्क्तिः।
शनैः (धीरे)	— शनैः याहि ।
शनैः शनैः (धीरे-धीरे)	— शनैः शनैः गच्छ ।
अधः (नीचे)	— वृक्षस्य अधः पथिकः उपविष्टः ।
ऋते (विना)	— नहि परिश्रमाद् ऋते साफल्यम्।
युगपत् (एक साथ)	— पितापुत्रौ युगपद् एव समुपस्थितौ।
ह्यः (बीता हुआ कल)	— ह्यः सुरेशः ग्रामाद् आगतः ।
श्वः (आने वाला कल)	— अहं श्वः नगरं गमिष्यामि ।
सायम् (शाम)	— अस्माभिः सायं क्रीडितव्यम् ।
चिरम्, चिरेण (दीर्घकाल से)	— चिरं गतः सुरेशः, चिरेण आगता रमा।
ईषत् (थोड़ा, कुछ)	— ईषत् कार्यमपि त्वया न कृतम् ।
तूष्णीम् (चुपचाप)	— अध्यापकं दृष्ट्वा छात्रः तूष्णीं स्थितः।
सहसा (अचानक)	— सहसा तत्र सैनिकाः आगताः ।

---

1. उपसर्ग 22 हैं – प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि, उप ।

मृषा (झूठ)	— मृषा वदति लोकोऽयं ताम्बूलं मुखभूषणम् । मुखस्य भूषणं पुंसां स्यादेकैव सरस्वती ।।
मिथ्या (झूठ)	— मिथ्या न वक्तव्यम् ।
पुरा (प्राचीन काल में)	— आसीत् पुरा दिलीपो नाम राजा।
प्रायः (साधारणतया, प्रायेण)	— प्रायः भृत्याः नष्टधनं स्वामिनं त्यजन्ति।
मुहुः (बार–बार)	— सः मुहुः त्वाम् अपश्यत् ।
नूनम् (निश्चय ही)	— हरिः नूनं तव कार्यं करिष्यति ।
भूयः (बार–बार)	— हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।
खलु (निश्चय ही)	— मूर्खाः खलु दुर्बोध्याः ।
किल (निश्चय ही)	— इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः ।
अद्य (आज)	— अद्य अहं विद्यालयं न गमिष्यामि।
अधुना (इस समय)	— अधुना सः पठति ।
कुत्र (कहाँ)	— त्वं कुत्र गच्छसि ?
उपरि (ऊपर)	— वृक्षस्य उपरि खगाः सन्ति ।
मा (मत)	— कोलाहलं मा कुरु ।
न (नहीं)	— मिथ्या न वक्तव्यम् ।
च (और)	— कृष्णः बलरामः च भ्रातरौ आस्ताम्।

प्रमुख अव्यय

प्रमुख अव्ययों की अर्थ सहित सूची अकारादि क्रम से यहाँ दी जा रही है।

अकस्मात्	= अचानक	आरात्	= समीप, दूर
अग्रतः	= सामने	आशु	= शीघ्र
अग्रे	= आगे	इतः	= इधर

अचिरम् = शीघ्र ही
अचिरात्, अचिरेण, अचिराय = अभी
अजस्त्रम् = निरन्तर
अतः = इसलिए
अतीव = अत्यधिक
अत्र = यहाँ
अथ = अनन्तर
अथ किम् = हाँ, और क्या
अद्य = आज
अधः = नीचे, नीचे की ओर
अधुना = इस समय
अन्तः = भीतर
अन्यत्र = दूसरी जगह
अन्यथा = नहीं तो
अपरम् = और भी
अपरेद्युः = दूसरे दिन
अभितः = चारों ओर
अमुत्र = वहाँ, परलोक में, ऊपर
अलम् = बस, पर्याप्त
असकृत् = बार–बार
असम्प्रति, असाम्प्रतम् = अनुचित
अहो = अहा !
अहोरात्रम् = दिन–रात
आम् = हाँ

इतस्ततः = इधर–उधर
इति = (समाप्ति-सूचक)
इत्थम् = इस प्रकार
इदानीम् = अब, इस समय
इव = सदृश, समान
इह = यहाँ
ईषत् = थोड़ा, कुछ, कम
उच्चैः = जोर से, ऊँचे
उभयतः = दोनों ओर
उषा = प्रातःकाल, उषा-काल में
ऋते = बिना
एकत्र = एक स्थान पर, इक्ट्ठे
एकदा = एक बार, एक समय
एव = ही
एवम् = ऐसा, इस प्रकार
कथम् = कैसे, क्यों
कथञ्चित् = जैसे–तैसे, कथमपि
कदा = कब
कदाचित् = कभी, किसी समय
किञ्चन, किञ्चित् = कुछ
किन्तु = परन्तु
किम् = क्या
किंवा = अथवा
किंल = अवश्य, वस्तुतः
कुतः = कहाँ से, कैसे

कुत्र = कहाँ, किस स्थान पर
कुत्रचित् = कहीं–कहीं पर
कृते = के लिए
केवलम् = केवल, सिर्फ
क्व = कहाँ
क्वचित् = कहीं
खलु = अवश्य, निश्चय से
च = और
चिरम्, चिराय, चिरेण = देर तक
चेत् = यदि
जातु = कभी
झटिति = शीघ्र
ततः = तब
तत्र = वहाँ
तथा = उस तरह
तदा = तब
तदानीम् = उस समय
तर्हि = तब
तस्मात् = अतएव, इसलिए
तावत् = तब तक
तिर्यक् = तिरछे
पृष्ठतः = पीछे
तूष्णीम् = चुप
दिवा = दिन में

ननु = ही, निश्चय से
नमः = नमस्कार, प्रणाम
नाना = अनेक प्रकार से
नाम = नाम
निकषा = निकट
निकामम् = बहुत अधिक
नीचैः = नीचे
नूनम् = अवश्य
परम् = अनन्तर, इसके बाद
परश्वः = आने वाला परसों
परितः = चारों ओर
परेद्युः = दूसरे दिन
पर्याप्तम् = पर्याप्त
पश्चात् = पीछे
पुनः = फिर
पुनः पुनः = बार–बार
पुरः, पुरतः, पुरस्तात् = सामने
पुरा = पहले, प्राचीन समय में
पूर्वेद्युः = पहले दिन
पृथक् = अलग
प्रतिदिनम् = प्रतिदिन
प्रभृति = से लेकर
प्रसह्य = बलात्

दिष्ट्या = भाग्य से
दूरम् = दूर
द्विधा = दो तरह का
धिक् = धिक्कार
ध्रुवम् = अवश्य
न = नहीं
नक्तंदिवम् = रात–दिन
नक्तम् = रात्रि
प्राक् = पहले
प्रातः = प्रातःकाल, सबेरे
प्रायः = बहुधा
बहिः = बाहर
बहुधा = प्रायः
भूयः = बार–बार, अत्यधिक
मनाक् = थोड़ा, कम
मिथः = आपस में
मिथ्या = झूठ
मुहुः = बार–बार
मृषा = झूठ
यत् = कि
यतः = क्योंकि
यत्र = जहाँ
यथा = जैसे
यथा तथा = जैसे तैसे
यदा = जब
यदि = अगर
यावत् = जब तक
युगपत् = एक साथ
वरम् = अच्छा
विना = बिना, अतिरिक्त
वृथा = बेकार (व्यर्थ)
वै = अवश्य, निश्चय से
शनैः शनैः = धीरे-धीरे
श्वः = आगामी कल
सकृत = एक बार
सततम् = सदा
सदा = हमेशा, सर्वदा
सद्यः = तुरन्त
सपदि = तुरन्त
समन्ततः = चारों ओर
समया = समीप
समीचीनम् = ठीक
सम्यक् = ठीक प्रकार से
सर्वतः = सब ओर से
सर्वत्र = सभी जगह
सर्वथा = सब प्रकार से
सर्वदा = सदा
स्वैरम् = स्वेच्छापूर्वक
सह = साथ
सहसा = अचानक
सहितम् = साथ
साकम् = साथ
साक्षात् = प्रत्यक्ष
सामि = आधा

साम्प्रतम्	= अब, उचित	हा!	= शोकसूचक उद्‌गार
सायं	= शाम के समय		
सुष्ठु	= भलीभाँति	हि	= क्योंकि, अवश्य, वस्तुतः
स्वयम्	= अपने आप		
स्वस्ति	= कल्याण हो (आशीर्वादसूचक)	ह्यः	= बीता हुआ कल
हन्त!	= हर्ष और खेदसूचक		

टिप्पणी – तुमुन्, णमुल्, क्त्वा और ल्यप् प्रत्ययान्त कृदन्त भी अव्यय होते हैं, जैसे – गन्तुम्, स्मारं स्मारम्, दत्वा, आदाय आदि ।

अभ्यास

1. अव्यय की परिभाषा और प्रकारों को कुछ उदाहरणों द्वारा स्पष्ट कीजिए।

2. निम्नलिखित अव्ययों का वाक्यों में प्रयोग कीजिए–

शनैः शनैः	सायम्	मा
ऋते	नूनम्	कुत्र
ह्यः	अद्य	उपरि
पुनः	मिथ्या	अधुना
श्वः	पुरा	

3. कोष्ठक में दिये हुए हिन्दी शब्दों से उपयुक्त संस्कृत अव्यय चुनकर रिक्त स्थानों में भरिए–

(अ) ———— पाठं पठ । (जोर से)

(आ) राजपुरुषं दृष्ट्वा चोरः ———— स्थितः । (चुपचाप)

(इ) ———— ग्रामे एकः व्याघ्रः समागतः । (अचानक)

(ई) सुरेशः ----------परीक्षायाम् असफलोऽभवत् । (बार–बार)

(उ) ———— एव गुरुशिष्यौ आगतौ । (एक साथ)

(ऊ) ———— जीवतु । (काफी समय तक)

4. कोष्ठक में दिए गए अव्ययों में से उचित अव्यय चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

क. ————अहम् नाटकम् अपश्यम् (श्वः/ह्यः)

ख. विद्यालये,————अवकाशः वर्तते (श्वः/ अद्यः)

ग. अग्निः स्पर्शेन ————दहति (नूनम्/ कदाचित्)

घ. अश्वः ———— विपुलं पुच्छं वहति (पश्चात् / पुरस्तात्)

ङ. जलं प्रकृत्या ———— प्रवहति (नीचैः/ उच्चैः)

5. निम्नलिखित पदों में से अव्ययों को चुनिए–

नराय, चिराय, तत्र, यस्मात्, कथम्, कथाम्, तस्मिन्, यतः, सहसा, मनसा, मिथ्या, रथ्या ।

सप्तम अध्याय

कारक और विभक्ति

I. कारक (Case)

परिभाषा एवं भेद

किसी वाक्य में क्रिया के सम्पादन में जो सहायक हो, उसे **कारक** कहते हैं।[1]

उदाहरण–

हे छात्राः ! दशरथस्य पुत्रः रामः सीतायै लङ्कायां रावणं बाणेन हतवान्।

हे छात्रों ! दशरथ के पुत्र राम ने सीता के लिए लङ्का में रावण को बाण से मारा ।

इस वाक्य में 'हतवान्' (मारा) क्रिया के सम्पादन में निम्नलिखित शब्द साक्षात् सहायक हैं–

1. रामः – यह मारना क्रिया का कर्ता (सम्पादक) है ।
2. रावणं – यह मारना क्रिया का कर्म है ।
3. बाणेन – यह मारना क्रिया का करण है ।
4. सीतायै – यह मारना क्रिया का सम्प्रदान है ।
5. लङ्कायाम् – यह मारना क्रिया का अधिकरण (आधारभूत स्थान) है ।

---

1. क्रियाऽन्वयि कारकम् ।

इन सबका क्रिया से सीधा सम्बन्ध है । अतएव ये पाँचों शब्द कारक हैं। किन्तु 'हे छात्राः' और 'दशरथस्य' – ये दोनों ऐसे पद हैं जिनका मारना क्रिया से साक्षात् सम्बन्ध नही हैं । अतएव ये कारक नहीं कहलाते हैं । इसी प्रकार एक छोटा वाक्य है –

वृक्षात् पत्रं पतति ।

इस वाक्य में 'पत्ति' क्रिया का सम्पादक 'पत्रम्' है । 'पतति' क्रिया वृक्ष से हो रही है। अतएव ' वृक्षात्' भी इस क्रिया के सम्पादन में सम्बद्ध है। इन सम्बन्धों के आधार पर संस्कृत में कारकों की संख्या छः ही मानी जाती है[1] –

कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण । सम्बोधन और सम्बन्ध इनके अतिरिक्त हैं, किन्तु क्रिया से सीधा सम्बन्ध न होने के कारण इन्हें कारक नहीं माना जाता। अतः उपर्युक्त वाक्य में 'हे छात्राः' एवं 'दशरथस्य' कारक नहीं है । सभी कारकों का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है–

1. कर्ता – क्रिया को करने वाला **कर्ता** कहलाता है।[2] यह क्रिया के करने में स्वतन्त्र होता है,, जैसे – रमेशः पुस्तकं पठति ।

यहाँ 'पठति' क्रिया को करने वाल 'रमेशः' है । अतएव यह कर्ता कारक है ।

2. कर्म – क्रिया के सम्पादन में कर्ता का जो अभीष्टतम रहता है वह **कर्म** कारक है[3], जैसे –(i) छात्रः पुस्तकं पठति । यहाँ 'पठति' क्रिया के सम्पादन में 'पुस्तक' कर्ता का अभीष्टतम है । अतएव पुस्तकं कर्म कारक है ।

---

1. कर्ता कर्म च करणं सम्प्रदानं तथैव च ।
   अपादानाधिकरणे इत्याहुः कारकाणि षट् ॥
2. स्वतन्त्रः कर्ता । ❑ **पा0 1.4.54**
3. कर्तुरीप्सिततमं कर्म । ❑ **पा0 1.4.49**

(ii) बालकः पयसा ओदनं भुङ्क्ते । यहाँ कर्ता का अभीष्ट 'ओदनं' और 'पयस्' दोनों है। किन्तु अभीष्टतम केवल 'ओदनं' है । अतएव यह कर्म कारक है । वाक्य में कर्ता के बाद कर्म ही सबसे मुख्य कारक होता है ; क्योंकि क्रिया का फल इस पर आधारित होता है।

3. करण– क्रिया की सिद्धि में कर्ता का जो प्रमुख सहायक हो वह **करण** कारक कहलाता है[1], जैसे–

(i) जलेन मुखं प्रक्षालयति । (ii) रामः रावणं बाणेन हतवान् । यहाँ 'प्रक्षालयति' क्रिया के सम्पादन में कर्ता ' जल' की सहायता लेता है। दूसरे वाक्य में 'हतवान्' क्रिया के सम्पादन में कर्ता का सहायक 'बाण' है । अतएव ये दोनों करण कारक हैं ।

4. सम्प्रदान – जिसको कोई वस्तु दी जाती है या जिसके लिए कोई कार्य किया जाता है वह **सम्प्रदान** कारक कहलाता है[2], जैसे–
राजा निर्धनाय धनं ददाति ।

यहाँ 'ददाति' क्रिया निर्धन के लिए की गई है अर्थात् धन निर्धन को दिया गया है । अतएव 'निर्धन' सम्प्रदान कारक है । इसी प्रकार –

पिता **पुत्राय** फलम् आनयति ।

यहाँ फल लाने का कार्य पुत्र के लिए हुआ है । अतएव 'पुत्राय' सम्प्रदान कारक है ।

5. अपादान– जिससे कोई वस्तु अलग हो, वह **अपादान** कारक कहलाता है[3], जैसे – **वृक्षात्** पत्रं पतति । यहाँ 'पतति' क्रिया के सम्पादन में वृक्ष से पत्र अलग हो रहा है । अतएव वृक्ष अपादान कारक है । इसी प्रकार – सः ग्रामाद् आगच्छति, आदि ।

6. अधिकरण – क्रिया के सम्पादन में जो आधार होता है, वह **अधिकरण** कहलाता है, जैसे 'स्थाल्यां तण्डुलं पचति' । इस वाक्य में 'पचति' क्रिया का आधार स्थाली है, अतः यह अधिकरण कारक है । इसी प्रकार – रामः आसने उपविशति, आदि ।

---

1. साधकतमं करणम् । ❑ पा0 **1.4.42**
2. कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम् । ❑ पा0 **1.4.32**
3. ध्रुवमपायेऽपादानम् । ❑ पा0 **1.4.24**

विभक्तियों के प्रयोग के प्रमुख नियम

कारक विभक्ति एवं उपपद विभक्ति के प्रयोग के प्रमुख नियम निम्नलिखित हैं–

1. प्रथमा विभक्ति (Nominative case)

1. कर्तृवाच्य के कर्ता कारक में प्रथमा विभक्ति होती है, जैसे–
   छात्रः पुस्तकं पठति ।
2. कर्मवाच्य के कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है, जैसे–
   मया ग्रन्थः पठ्यते ।
3. सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति होती है[1], जैसे–
   हे बालकाः, यूयं कुत्र गच्छथ ?
4. किसी संज्ञादि शब्द (प्रातिपदिक) के अर्थ, लिङ्ग, वचन एवं परिमाण को प्रकट करने के लिए प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है[2], जैसे– गोविन्दः, वृक्षः, लता आदि । विभक्ति लगने से पूर्व कोई भी शब्द संस्कृत में प्रयोग की दृष्टि से निरर्थक होता है ।
5. इति शब्द के योग में प्रथमा विभक्ति होती है, जैसे–
   जनाः इमं रमेश इति कथयन्ति ।

2. द्वितीया विभक्ति (Accusative case)

1. कर्तृवाच्य के कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है[3], जैसे–
   सः **ग्रामं** गच्छति । राजा **शत्रुं** जयति ।
2. निरन्तरता का अर्थ प्रकट करने के लिए समयवाचक और मार्गवाचक शब्दों में द्वितीया विभक्ति होती है,[4] जैसे–

क्रोशं कुटिला नदी ।	लगातार कोस तक नदी टेढ़ी है ।
मासम् अधीते ।	लगातार महीने भर से पढ़ता है ।
योजनं पर्वतः ।	लगातार योजन तक पर्वत है ।

---

1. सम्बोधने च । ❑ पा0 **2.3.47**
2. प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा । ❑ **पा0 2.3.46**
3. कर्मणि द्वितीया । ❑ **पा0 2.3.2**
4. कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे । ❑ **पा0 2.3.5**

3. शीङ् (सोना) स्था (ठहरना) तथा आस् (बैठना) धातुओं के पूर्व यदि अधि उपसर्ग लगा हो तो इन क्रियाओं के आधार कर्म[1] बन जाते हैं और इनमें द्वितीया विभक्ति होती है, जैसे–
   (i) शय्याम् अधितिष्ठति। (ii) हरिः शय्याम् अधिशेते। (iii) नृपः सिंहासनम् अध्यास्ते।
4. विश् धातु के पूर्व 'अभि' 'नि' उपसर्ग लगने पर इसके आधार कर्म बन[2] जाते हैं और इनमें द्वितीया होती है, जैसे–
   सन्मार्गम् अभिनिविशते। (वह अच्छे मार्ग का अनुसरण करता है)
5. वस् धातु के पूर्व 'उप' 'अनु' 'अधि' 'आङ्' में से किसी उपसर्ग के लगने पर क्रिया का आधार कर्म[3] बनता है और उसमें द्वितीया विभक्ति होती है, जैसे–
   हरिः वैकुण्ठम् उपवसति*, अनुवसति, अधिवसति, आवसति वा।

उपपद विभक्ति – अन्तरा (बीच में) अन्तरेण (बिना, छोड़कर) अभितः (चारों ओर), परितः (सब ओर), समया (समीप), निकषा (समीप), हा (हाय), प्रति (ओर, तरफ), उभयतः (दोनों ओर), सर्वतः (सब ओर), धिक् (धिक्कार), उपर्युपरि (सबसे ऊपर), अधोऽधः (सबसे नीचे), अध्यधि (समीप देश में), ऋते (बिना) इत्यादि अव्ययों के योग में द्वितीया विभक्ति[4] होती है, जैसे–

(i) **गङ्गां यमुनां** चान्तरा प्रयागः।
(ii) **परिश्रमम्** अन्तरेण कुतो विद्या।
(iii) **राजानम्** अभितः परिजनाः।
(iv) **नगरं** परितः जलम्।

---

1. अधिशीङ्स्थासां कर्म। ❑ **पा० 1.4.46**
2. अभिनिविशश्च। ❑ **पा० 1.4.47**
3. उपान्वध्याङ्वसः। ❑ **पा० 1.4.48**

* उपवास करने के अर्थ में उपवस् का आधार कर्म नहीं होता, अपितु अधिकरण होता है, जैसे वने उपवसति (वन में उपवास करता है)।

4. अन्तराऽन्तरेण युक्ते। ❑ **पा० 2.3. 4**
   अभितः परितः समया निकषा हा प्रतियोगेऽपि। – वा०
   उभसर्वतसोः कार्याधिगुपर्यादिषु त्रिषु।
   द्वितीयाऽऽम्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते॥ – वा०

(v) **ग्रामं** समया उद्यानम् वर्तते ।

(vi) **विद्यालयं** निकषा वाटिका ।

(vii) **दीनं** प्रति दया कार्या ।

(viii) उभयतः **नदीं** ग्रामः ।

(ix) सर्वतः **अध्यापकं** छात्राः ।

(x) धिक् **कृपणम्** ।

(xi) ऋते **ज्ञानं** सुखं नैव। आदि।

3. तृतीया विभक्ति (Instrumental case)

निम्नलिखित में तृतीया विभक्ति[1] होती है–

1. करण कारक में, जैसे–
   (i) रामः **रावणं** बाणेन हतवान् ।
   (ii) अहं **लेखन्या** पत्रं लिखामि ।
2. भाववाच्य एवं कर्मवाच्य के कर्ता में, जैसे–
   (i) **तेन** हसितम् । (भाव0) (ii) मया **रामायणं** पठ्यते । (कर्म0)
   उपपद विभक्ति – जिस विकृत अंग में विकार हो, उसके वाचक शब्द[2] में, जैसे–
   अक्ष्णा काणः । **पादेन** खञ्जः । **कर्णाभ्यां** बधिरः ।
3. कारण (हेतु) बोधक शब्दों में[3], जैसे–
   विद्यया यशः । **परिश्रमेण** धनम् ।
4. फल प्राप्ति (या कार्य की पूर्णता) के अर्थ में कालसातत्यवाची तथा मार्गसातत्यवाची शब्दों[4] में जैसे–
   (i) सः **मासेन** इमं ग्रन्थं पठितवान् । एक महीने में लगातार उसने यह ग्रन्थ पढ़ लिया है।
   (ii) **सप्तभिः दिनैः** नीरोगः जातः ।
   (iii) **क्रोशेन** पुस्तकं पठितवान् ।

---

1. कर्तृकरणयोस्तृतीया । ☐ **पा0 2.3.18**
2. येनाङ्गविकारः । ☐ **पा0 2.3.23**
3. हेतौ । ☐ **पा0 2.3.23**
4. अपवर्गे तृतीया। ☐ **पा0 2.3.6**
   (अपवर्गः फलप्राप्तिः)

5. साथ अर्थवाले सह, साकं, सार्धं, समं आदि अव्यय शब्दों[1] के योग में अप्रधानकर्ता में, जैसे–
   (i) **गुरुणा** सह शिष्यः आगच्छति ।
   (ii) **मित्रैः** सार्धं गच्छ ।
   (iii) **सीतया** साकं रामः वनं गतः ।
   (iv) **फलैः** समं दुग्धं पिब ।
6. पृथक्, विना, नाना– शब्दों[2] के योग में द्वितीया, तृतीया अथवा पञ्चमी में से कोई भी विभक्ति होती है, जैसे–
   जलं (जलेन, जलात् वा) विना कोऽपि न जीवति ।
   पृथक् रामं (रामेण, रामात् वा) न कोऽपि रक्षकः ।
   धनं (धनेन धनात् वा) नाना न सुखम् ।

4. चतुर्थी विभक्ति (Dative case)

1. सम्प्रदान कारक में चतुर्थी विभक्ति होती है[3], जैसे–
   गुरुः शिष्याय ज्ञानं ददाति ।
2. रुच् (अच्छा लगना) तथा इसके समानार्थक धातुओं के योग में प्रसन्न होने वाला (या सन्तुष्ट होने वाला) सम्प्रदान कहलाता है, और उसमें चतुर्थी विभक्ति होती है[4], जैसे–
   बालकाय मिष्टान्नं रोचते ।
3. स्पृह् (इच्छा करना) धातु के योग में जिस व्यक्ति या वस्तु की इच्छा की जाती है वह सम्प्रदान संज्ञक होता है और उसमें चतुर्थी विभक्ति होती है।[5] जैसे–
   (i) **पुष्पेभ्यः** स्पृहयति । यह फूलों को चाहता है ।
   (ii) **फलेभ्यः** स्पृहयति ।

---

1. सहयुक्तेऽप्रधाने । ❑ **पा० 2.3.19**
2. पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम् । ❑ **पा० 2.3.32**
3. चतुर्थी सम्प्रदाने । ❑ **पा० 2.3.13**
4. रुच्यर्थानां प्रीयमाणः । ❑ **पा० 1.4.33**
5. स्पृहेरीप्सितः । ❑ **पा० 1.4.36**

4. धारि {धारयति = धारता है (ऋण के रूप में धारण करता है)} के प्रयोग होने पर जिससे उधार लेता है, वह सम्प्रदान कहलाता है और उसमें चतुर्थी विभक्ति होती है[1], जैसे–
मोहनः **देवदत्ताय** शतं धारयति ।
5. जिसके लिए कोई कार्य किया जाता है, उस प्रयोजन वाचक शब्द में चतुर्थी विभक्ति होती है[2], जैसे – (i) **मुक्तये** हरिं भजति।
(ii) **यूपाय** दारु ।

उपपद विभक्ति–

1. नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम् और वषट् के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है[3], जैसे–
   (i) **गुरवे** नमः ।
   (ii) **प्रजाभ्यः** स्वस्ति ।
   (iii) **अग्नये** स्वाहा ।
   (iv) **पितृभ्यः** स्वधा ।
   (v) **दैत्येभ्यो** हरिः अलम् ।
   (vi) **इन्द्राय** वषट् ।
2. क्रुध्, द्रुह्, ईर्ष्य् तथा असूय् इन धातुओं के तथा इन्हीं अर्थवाली अन्य धातुओं के योग में जिसके प्रति क्रोध आदि होता है उसके वाचक शब्द में चतुर्थी विभक्ति होती है[4], जैसे–
प्रभुः **सेवकाय** क्रुध्यति । खलः **सज्जनेभ्यः** असूयति, द्रुह्यति, ईर्ष्यति वा।

5. पञ्चमी विभक्ति (Ablative case)

1. अपादान कारक[5] में पञ्चमी विभक्ति होती है, जैसे–
   (i) वृक्षात् फलानि पतन्ति ।
   (ii) छात्रः विद्यालयाद् आगच्छति ।

---

1. धारेरुत्तमर्णः । ☐ पा० 1.4.35
2. तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या । ☐ वा०
3. नमःस्वस्तिस्वाहास्वधाऽलंवषड्योगाच्च । ☐ पा० 2.3.16
4. क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः । ☐ पा० 1.4.37
5. अपादाने पञ्चमी । ☐ पा० 2.3.28

2. भय एवं रक्षा अर्थवाली (भी एवं त्रा) धातुओं के योग में जो भय एवं रक्षा का हेतु है वह अपादान संज्ञक होता है तथा उसमें पञ्चमी विभक्ति होती है[1], जैसे–

(i) सः पापाद् बिभेति ।

(ii) सः चौरात् त्रायते

3. जिससे नियमपूर्वक विद्या ग्रहण की जाय, वह अपादान संज्ञक होता है और उसमें पञ्चमी विभक्ति होती है[2], जैसे–

छात्रः **अध्यापकात्** संस्कृतं पठति ।

4. जहाँ से कोई वस्तु उत्पन्न होती है वह मूल कारण अपादान संज्ञक होता है[3], और उसमें पञ्चमी विभक्ति होती है, जैसे–

(i) **गोमयाद्** वृश्चिको जायते ।

(ii) **कामात्** क्रोधोऽभिजायते ।

(iii) गङ्गा **हिमालयात्** प्रभवति ।

उपपद विभक्ति – 1. अन्य, इतर तथा इनके अर्थों वाले दूसरे शब्द, आरात् (दूर या समीप), ऋते (विना) आदि शब्दों के योग में पञ्चमी विभक्ति होती है[4], जैसे–

कृष्णाद् अन्यः । आरात् **ग्रामात्** । ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः । **ग्रीष्मात्** पूर्वः वसन्तः आदि ।

2. प्रभृति, आरभ्य, बहिः, अनन्तरम्, ऊर्ध्वम्, परम् आदि शब्दों के योग में भी पञ्चमी होती है[2], जैसे–

तस्मात् **दिनात्** प्रभृति, सः **नगरात्** बहिः अगच्छत्, आदि ।

---

1. भीत्रार्थानां भयहेतुः । ☐ **पा0 1.4.25**
2. आख्यातोपयोगे। ☐ **पा0 1.4.29**
3. जनिकर्तुः प्रकृतिः । भुवः प्रभवः । ☐ **पा0 1 . 4 . 30,31**
4. अन्यारादितरर्तेदिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते । ☐ **पा0 2.3.29**

6. षष्ठी विभक्ति (Genitive case)

1. सम्बन्ध में षष्ठी विभक्ति होती है[1], जैसे–

राज्ञः पुरुषः । पितुः पुत्रः । मृत्तिकायाः घटः ।

उपपद विभक्ति – 1. जब किसी समूह में से गुण, क्रिया आदि के आधार पर किसी एक को अलग किया जाय, तब समूह में षष्ठी या सप्तमी होती है[2], जैसे–

कवीनां (कविषु वा) कालिदासः श्रेष्ठः ।

छात्राणां (छात्रेषु वा) गोपालः चतुरः ।

2. उपरि, पश्चात्, अधस्तात्, अधः, पुरस्तात्, पुरः आदि शब्दों के योग में षष्ठी विभक्ति होती है, जैसे–

वृक्षस्य अधः (अधस्तात् वा) एकः पथिकः आसीत् । **भवनस्य** उपरि । **गृहस्य** उपरि। **विद्यालयस्य** पुरः (पुरस्तात् वा) **तव** पश्चात् आदि ।

7. सप्तमी विभक्ति (Locative case)

1. अधिकरण कारक में सप्तमी विभक्ति होती है[3], जैसे–
   (i) **स्थाल्याम्** ओदनं पचति ।
   (ii) **वृक्षे** पत्राणि सन्ति ।
2. जब एक क्रिया के होने पर दूसरी क्रिया का होना वर्णित हो तो पहले होने वाली क्रिया में तथा उस क्रिया के कर्ता में भी सप्तमी विभक्ति होती है[4], जैसे–
   (i) **सूर्ये** अस्तं गते सर्वे गृहं गताः ।
   (ii) **रामे** वनं गते दशरथः स्वर्गं प्रयातः ।

3. जहाँ अनादर का भाव प्रकट हो वहाँ क्रियार्थक शब्दों में षष्ठी या सप्तमी विभक्ति होती है[5], जैसे–

रूदति (रूदतः वा) परिजने (परिजनस्य वा) सः गृहम् अत्यजत् ।

रूदति (रुदतः वा) बालके (बालकस्य वा) पिता कार्यालयं गतः ।

---

1. षष्ठी शेषे । ❑ पा0 2.3.50
2. यतश्च निर्धारणम् । ❑ पा0 2.3.41
3. सप्तम्यधिकरणे च । ❑ पा0 2.3.36
4. यस्य च भावेन भावलक्षणम् । ❑ पा0 2.3.37
5. षष्ठी चानादरे । ❑ पा0 2.3.38

अभ्यास

1. **कारक किसे कहते हैं ? संस्कृत में कितने कारक हैं ?**
2. **निम्नलिखित का लक्षण एवं उदाहरण लिखिए–**
   कर्म, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण।
3. **निम्नलिखित के योग में कौन-कौन-सी विभक्तियाँ होती हैं, वाक्यप्रयोग द्वारा बताइए–**
   सह, नमः, विना, ऋते, अधोऽधः, इति।
4. **कोष्ठ में दिए गए शब्दों से उचित विभक्ति लगाकर रिक्त स्थानों को भरिए–**
   (अ) सुरेशः ———— अधिशेते। (शय्या)
   (आ) हरिः ———— अधितिष्ठति। (वैकुण्ठ)
   (इ) राजा ———— अध्यास्ते। (सिंहासन)
   (ई) ज्ञानं भारः ———— विना। (क्रिया)
   (उ) जनाः तं ———— इति कथयन्ति। (रमेश)
   (ऊ) परितः ———— परिखा। (नगर)
   (ऋ) अलं ————। (विवाद)
5. **निम्नलिखित वाक्यों के स्थूलाक्षर पदों में कौन-सी विभक्ति है?**
   क. प्रजापालनं **राज्ञः** कार्यं वर्तते।
   (द्वितीया/षष्ठी/पञ्चमी)
   ख. कविः **छन्दांसि** रचयति।
   (द्वितीया/प्रथमा)
   ग. महाकविः सूरदासः **चक्षुर्भ्याम्** अन्धः आसीत्।
   (चतुर्थी/पञ्चमी/तृतीया)
   घ. प्रेम्णैव **यूनोः** जीवनं सुखाय कल्पते।
   (षष्ठी/सप्तमी)
   ङ. स्वयं दासाः **तपस्विनः**।
   (प्रथमा/द्वितीया/पञ्चमी/षष्ठी)

6. कोष्ठक में दिए गए पदों में से उचित पद चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

क. छात्राः ——— व्याकरणं पठन्ति । (अध्यापकेन/अध्यापकात्)

ख. ——— उभयतः ग्रामौ स्तः । (पर्वतम्/पर्वतस्य)

ग. ग्रीष्मे गङ्गास्नानं ——— न रोचते ? (कस्य/कस्मै)

घ. बालकः ——— बिभेति । (व्याघ्रात् /व्याघ्रेण)

ङ. प्रायो मातरः अपराधेऽपि ——— न कुप्यन्ति । (पुत्रेभ्यः/पुत्रेषु)

अष्टम अध्याय

समास
(Compound)

समास की परिभाषा

जब दो या दो से अधिक पद अपनी विभक्तियों को छोड़कर परस्पर मिलकर एक हो जाते हैं, तब उनका यह मेल **समास** कहलाता है।[1] जैसे सभायाः पतिः– सभापतिः। यहाँ सभायाः (ङस्) पतिः (सु) ये दो शब्द मिलते हैं और इनकी विभक्तियों का लोप हो जाता है। समास शब्द का अर्थ है **समसनम्– सम्यक् असनम् (क्षेपणम्)**। अर्थात् पदों से सम्बद्ध विभक्तियों को हटाकर अनेक पदों का एक पद बन जाना समास कहलाता है। समस्त पद के साथ पुनः विभक्ति का आगमन होता है। विभक्तियों के अतिरिक्त जो समुच्चय द्योतक **च** आदि आते हैं, वे भी समास होने पर लुप्त हो जाते हैं, जैसे– रामश्च लक्ष्मणश्च– रामलक्ष्मणौ। यहां दोनों पदों की विभक्तियों के साथ आये हुए 'च' का भी लोप हो जाता है। कहीं-कहीं पदों के बीच की विभक्तियों का लोप नहीं होता। जैसे– वनेचरः, युधिष्ठिरः आदि। ऐसे समासों को अलुक् समास कहते हैं।

विग्रह

समस्त-पद को तोड़कर उसको पहले का रूप दे देना **विग्रहवाक्य** कहलाता है। पारिभाषिक शब्दावली में समस्त पदों के अर्थ को प्रकट करने

---

1. सम (भली प्रकार) + अस् (फेंकना:रखना) + घञ् (अ) = समासः = संक्षेप।

वाला वाक्य **विग्रहवाक्य** कहलाता है[1], जैसे– उपर्युक्त सभापति का विग्रह है – सभायाः पतिः। इसी प्रकार नरपतिः समास का विग्रह वाक्य है– नराणां पतिः।

विग्रह दो प्रकार के होते हैं–

1. **लौकिक विग्रह-**

जब विग्रह करने पर पद विभक्ति के साथ रहते हैं और व्यवहार के योग्य होते हैं, तब उसे **लौकिक** विग्रह कहते हैं, जैसे– सभायाः पतिः।

2. अलौकिक विग्रह-

जब विग्रह वाक्य में प्रकृति और प्रत्यय को पृथग्-पृथग् दिखाया जाता है तब वे लोक व्यवहार के योग्य नहीं रहते इसे **अलौकिक** विग्रह कहते हैं। **अलौकिक** विग्रह में ही समास होता है।

सभा + ङस्, पति + सु

सन्धि और समास में अंतर

1. सन्धि में वर्णों का मेल होता है और समास में पदों का।
2. सन्धि वर्णों के अतिशय सामीप्य में होती है, किन्तु समास जिन पदों में होगा उनमें परस्पर अन्वय की विवक्षा रहती है। इसके अभाव में शाब्दिक सामीप्य होने पर भी समास नहीं होता, जैसे- पुरुषो राज्ञो भार्या च देवदत्तस्य। यहाँ परस्पर अन्वय विवक्षित न होने के कारण समास नहीं हो सकता, किन्तु सन्धि होती है। पुरुषो एवं राज्ञो में विसर्ग को ओ सन्धि के कारण हुआ है। सन्धि के लिए किसी प्रकार का अन्वय अपेक्षित नहीं है।
3. समास होने पर सन्धि अवश्य होती है, किन्तु सन्धि होने पर समास अनिवार्य नहीं है। "सूर्यस्य उदयः– सूर्योदयः" यहाँ "सूर्य उदयः" नहीं लिख सकते। सन्धि करनी ही पड़ेगी।

---

1. वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः। ❑ **सह सुपा पा0 - 2.1.4.** ल0सि0कौ0सू0वृत्ति।

समास के भेद

समास दो या अधिक पदों के बीच हुआ करता है। इन पदों की प्रधानता के आधार पर समास के मुख्य चार भेद किए जाते हैं– अव्ययीभाव, तत्पुरुष, द्वन्द्व, और बहुब्रीहि। तत्पुरुष के दो उपभेद हैं – कर्मधारय और द्विगु। इस प्रकार समास की संख्या सामान्यतया छः मानी जाती है*।

1. अव्ययीभाव

जिस समास का प्रायः पूर्वपद प्रधान होता है और समस्त पद अव्यय बन जाता है, वह **अव्ययीभाव** समास (Adverbial compound) कहलाता है।[1] इसमें प्रथम पद प्रायः अव्यय और द्वितीय पद कोई संज्ञा शब्द होते हैं। समस्त पद अव्यय होता है और नपुंसकलिङ्ग एकवचन के तुल्य प्रयुक्त होता है, जैसे– **यथाशक्ति** कार्यं करोति। अर्थात् शक्तिम् अनतिक्रम्य (शक्ति के अनुसार) कार्यं करोति। यहाँ यथा का अर्थ अनतिक्रम्य है और यही पद प्रधान है। इस कारण से यह अव्ययीभाव समास माना जाता है।[2] अव्ययीभाव समास निम्नलिखित अर्थों में होता है–

1. विभक्ति अर्थ में

हरौ इति – अधिहरि (हरि के विषय में) यहाँ सप्तमी विभक्ति के अर्थ में प्रयुक्त अधि का हरि के साथ समास हुआ है। इसी प्रकार अध्यात्मम् (आत्मनि इति), अधिगङ्गम् (गङ्गायाम् इति), अधिगृहम् (गृहे इति)।

टिप्पणी– (अ) अव्ययीभाव समास होने पर समस्त पद के अन्तिम दीर्घ स्वर का ह्रस्व, ए, ऐ का इ तथा ओ, औ का उ हो जाता है।[3]

अधि + गङ्गा = अधिगङ्गा— अधिगङ्गम्। इसी प्रकार
उप + नदा = उपनदि (नद्याः समीपम्)।
उप + वधू = उपवधु (वध्वाः समीपम्),
उप + गो = उपगु, (गोः समीपम्)
उप + नौ = उपनु (नावः समीपम्) आदि।

---

* द्वन्द्वो द्विगुरपि चाहं मद्गेहे नित्यमव्ययीभावः।
तत्पुरुष कर्मधारय येनाहं स्याम्बहुव्रीहिः ॥ ❑ **सुभाषितरत्नभाण्डागार**

1. पूर्वपदार्थप्रधानोऽव्ययीभावः। ❑ **सि० कौ० सर्वसमास शेषप्रकरण**
2. अव्ययं विभक्ति–समीप–समृद्धिव्यृद्ध्यर्थाभावात्यया– सम्प्रित–शब्दप्रादुर्भाव–पश्चाद्यथानुपूर्व्ययौगपद्य–सादृश्य–सम्पत्ति–साकल्यान्तवचनेषु। ❑ **पा० 2.1.6**
3. ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य। ❑ **पा० 1.2.47**

टिप्पणी– (आ) अव्ययीभाव समास होने पर समासान्त पद यदि अन् से अन्त होने वाला हो तो अन् का लोप हो जाता है और उसके स्थान पर समासान्त[1] टच् (अ)प्रत्यय जुड़ता है, जैसे– अधि + आत्मन् = अध्यात्म· अध्यात्मम्। इसी प्रकार उपराजम् आदि।

2. **समीप अर्थ में**
   गङ्गायाः समीपम् = उपगङ्गम्
   कृष्णस्य समीपम् = उपकृष्णम्
   यमुनायाः समीपम् = उपयमुनम्

3. **समृद्धि अर्थ में**
   पाञ्चालानां समृद्धिः = सुपाञ्चालम्
   मद्राणां समृद्धिः = सुमद्रम्

4. **व्यृद्धि (ऋद्धि का नाश) अर्थ में**
   यवनानां व्यृद्धिः (विगता ऋद्धिः) दुर्यवनम् (यवनों की दीनता)

5. **अभाव अर्थ में**
   जनानाम् अभावः = निर्जनम्
   मक्षिकाणाम् अभावः = निर्मक्षिकम्
   विघ्नानाम् अभावः = निर्विघ्नम्

6. **अत्यय (ध्वंस) अर्थ में**
   हिमस्य अत्ययः = अतिहिमम् (हिम की समाप्ति)
   इसी प्रकार अतियौवनम्, अतिवसन्तम्, अतिमात्रम् ।

7. **असम्प्रति (वर्तमान काल में अनुचित, अयोग्य) अर्थ में**
   निद्रा सम्प्रति न युज्यते = अतिनिद्रम्
   (निद्रा के अनुपयुक्त काल में)

8. **शब्द-प्रादुर्भाव (शब्द प्रकाश) अर्थ में**
   हरिशब्दस्य प्रकाशः = इतिहरि (हरि शब्द का उच्चारण)

---

1. अनश्च। ☐ पा0 **5.4.108**

9. **पश्चात् अर्थ में**

रथस्य पश्चात् = अनुरथम् (रथ के पीछे)

विष्णोः पश्चात् = अनुविष्णु

चैत्रमासस्य पश्चात् = अनुचैत्रमासम्

10. **यथा के अर्थ में**

यथा के चार अर्थ हैं

(अ) योग्यता – रूपस्य योग्यम् = अनुरूपम्, अनुगुणम्।

(आ) वीप्सा – दिने दिने = प्रतिदिनम्, प्रत्येकम्, प्रत्यहम्, प्रतिक्रमम्।

(इ) पदार्थानतिवृत्ति – शक्तिमनतिक्रम्य = यथाशक्ति, यथाविधि, यथाक्रमम्।

(ई) सादृश्य (समानता) – हरेः सादृश्यम् = सहरि

11. **आनुपूर्व्य (क्रम) अर्थ में**

ज्येष्ठस्यानुपूर्व्येण = अनुज्येष्ठम् (ज्येष्ठ के क्रम से)।

क्रमस्यानुपूर्व्येण = अनुक्रमम् (क्रम के अनुसार)।

12. **यौगपद्य (साथ-साथ) अर्थ में**

चक्रेण युगपत् = सचक्रम् (चक्र के साथ)

13. **सादृश्य अर्थ में**

सदृशः संख्या = ससखि

(यहाँ सादृश्य गौण है, सहरि में सादृश्य मुख्य था)।

14. **सम्पत्ति अर्थ में**[1]

क्षत्राणां सम्पत्तिः = सक्षत्रम् (क्षत्रियों की सम्पत्ति)

15. **साकल्य (सम्पूर्ण, अशेष) अर्थ में**

तृणमपि अपरित्यज्य = सतृणम्।

16. **अन्त (तक) के अर्थ में**

महाभाष्यपर्यन्तम् = समहाभाष्यम्।

---

1. धन की ज्यों की त्यों स्थिति सम्पत्ति या ऋद्धि है तथा सम्पत्ति की वृद्धि समृद्धि है।

मर्यादा* और **अभिविधि**** के अर्थ में आङ् (आ) के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास होता है।[1] समास न होने पर पञ्चमी विभक्ति होती है, जैसे–

आ मुक्तेः = आमुक्ति (मुक्ति पर्यन्त)।

इसी प्रकार आबालेभ्यः = आ बालम्। आ समुद्रेभ्यः = आसमुद्रम्।

बहिः, प्राञ्च् (अञ्च् धातु से निष्पन्न) शब्दों के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास होता है, जैसे[2]–

वनाद् बहिः = बहिर्वनम्, बहिर्वनात्। इसी प्रकार – प्राग्वनम्, प्राग्वनात्, प्राग्ग्रामम्, प्राग्ग्रामात् आदि।

अभिमुख अर्थ में अभि और प्रति के साथ समास होता है[3], जैसे–

अग्नेः अभिमुखम् = अभ्यग्नि (अग्नि की ओर)।

अग्निं प्रति = प्रत्यग्नि (अग्नि की ओर)।

2. तत्पुरुष

जिस समास में प्रायः उत्तर पद का अर्थ प्रधान रहता है, उसे **तत्पुरुष** समास कहते हैं[4], जैसे– राष्ट्रस्य पतिः = राष्ट्रपतिः। यहाँ उत्तर पद **पतिः** मुख्य है। क्योंकि राष्ट्रपति भाषण दे रहे हैं, यहाँ क्रिया से साक्षात् सम्बन्ध पति का है। राष्ट्र का नहीं। अतएव उत्तर पद की प्रधानता है। इस समस्त पद के लिङ्ग, वचन आदि उत्तर पद के समान ही होते हैं।

तत्पुरुष के भेद – तत्पुरुष समास के पूर्व पद एवं उत्तर पद में विभक्ति की समानता के आधार पर इसके दो भेद किये जाते हैं–

1. **व्यधिकरण तत्पुरुष** – जिसमें पूर्व पद तथा उत्तर पद की विभक्ति समान नहीं हो, जैसे– राष्ट्रस्य पतिः – राष्ट्रपतिः। यहाँ प्रथम पद षष्ठ्यन्त है और द्वितीय पद प्रथमान्त।

---

* तेन विना (excluding)

** तेन सहितम् (including)

1. आङ् मर्यादाभिविध्योः। ❑ **पा0 2.1.13**
2. अपपरिबहिरञ्चवः पञ्चम्या। ❑ **पा0 2.1.12**
3. लक्षणेनाभिप्रती आभिमुख्ये। ❑ **पा0 2.1.14**
4. उत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुषः। ❑ **सि0कौ0सर्वसमास शेषप्रकरण**

2. **समानाधिकरण तत्पुरुष** – जिसमें पूर्व पद और उत्तर पद दोनों की विभक्ति समान हो। जैसे– नीलम् कमलम् – नीलकमलम्। यहाँ दोनों पद प्रथमान्त हैं। व्यधिकरण तत्पुरुष में पूर्व पद द्वितीया से सप्तमी तक की किसी विभक्ति के साथ रहता है। इसके आधार पर इस समास के छः भेद किए जाते हैं–

(i) **द्वितीया तत्पुरुष**[1]

दुःखम् अतीतः = दुःखातीतः।
कृष्णं श्रितः = कृष्णाश्रितः।
शोकं पतितः = शोकपतितः।
ग्रामं गतः = ग्रामगतः।
सुखं प्राप्तः = सुखप्राप्तः।
कष्टम् आपन्नः = कष्टापन्नः।

(ii) **तृतीया तत्पुरुष**[2]

शङ्कुलया खण्डः = शङ्कुलाखण्डः।
अग्निना दग्धः = अग्निदग्धः।
व्यवहारेण कुशलः = व्यवहारकुशलः।
मासेन पूर्वः = मासपूर्वः[3]।
पित्रा समः = पितृसमः।
नखैः भिन्नः = नखभिन्नः[4]।
हरिणा त्रातः = हरित्रातः।

(iii) **चतुर्थी तत्पुरुष**[5]

यूपाय दारु = यूपदारु।
भूताय बलिः = भूतबलिः।
स्नानाय इदम् = स्नानार्थम्।
गवे हितम् = गोहितम्।

---

1. द्वितीया श्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नैः। ❑ **पा0 2.1.24**
2. तृतीया तत्कृतार्थेन गुणवचनेन। ❑ **पा0 2.1.30**
3. पूर्वसदृशसमोनार्थकलहनिपुणमिश्रश्लक्ष्णैः। ❑ **पा0 2.1.31**
4. कर्तृकरणे कृता बहुलम्। ❑ **पा0 2.1.32**
5. चतुर्थी तदर्थार्थबलिहितसुखरक्षितैः। ❑ **पा0 2.1.36**

छात्राय अयम् = छात्रार्थम् (ग्रन्थः) ।
गवे रक्षितम् = गोरक्षितम् ।
तस्मै इदम् = तदर्थम् ।
गवे सुखम् = गोसुखम् ।

(iv) **पञ्चमी तत्पुरुष**[1]

चोराद् भयम् = चोरभयम् ।
सिंहाद् भीतः = सिंहभीतः ।
रोगात् मुक्तः = रोगमुक्तः ।

(v) **षष्ठी तत्पुरुष**[2]

राज्ञः पुरुषः = राजपुरुषः ।
विद्यायाः आलयः = विद्यालयः ।
सुराणाम् ईशः = सुरेशः ।

(vi) **सप्तमी तत्पुरुष**[3]

अध्ययने कुशलः = अध्ययनकुशलः ।
काव्ये निपुणः = काव्यनिपुणः ।
कार्ये दक्षः = कार्यदक्षः ।
सभायां पण्डितः = सभापण्डितः ।

नञ् तत्पुरुष

उपर्युक्त भेदों के अतिरिक्त तत्पुरुष का एक अन्य भेद है **नञ् तत्पुरुष**। जब **न** का किसी संज्ञा शब्द के साथ समास होता है तब वह नञ् तत्पुरुष कहलाता है[4], जैसे–

न धार्मिकः = अधार्मिकः। न सत्यम् = असत्यम्।
न सुखम् = असुखम्। न आदिः = अनादिः।
न अन्तः = अनन्तः। न इष्टम् = अनिष्टम्।
न उपकारः = अनुपकारः। न अर्थः = अनर्थः।

---

1. पञ्चमी भयेन । ☐ पा0 2.1.37
2. षष्ठी । ☐ पा0 2.2.8
3. सप्तमी शौण्डैः । ☐ पा0 2.1.40
4. नञ् । ☐ पा 2.2.6

टिप्पणी– नञ् समास का न जब किसी व्यञ्जन वर्ण से मिलता है तब न् का लोप हो जाता है और **अ** शेष रह जाता है तथा जब किसी स्वर के साथ मिलता है तब **अन्**[1] में परिवर्तित हो जाता है ।

समानाधिकरण तत्पुरुष (कर्मधारय)

तत्पुरुष समास में विग्रह वाक्य में पूर्व पद एवं उत्तर पद की विभक्ति जब समान रहती है तब वह **समानाधिकरण तत्पुरुष** कहलाता है। इसके दोनों पद प्रथमा विभक्ति में होते हैं। यथासंभव लिङ्ग और वचन भी समान होते हैं। इसे **कर्मधारय** समास कहते हैं।[2] जैसे–

नीलं कमलम् = नीलकमलम्। पीतम् अम्बरम् = पीताम्बरम्।

कर्मधारय समास के निम्नलिखित रूप हैं–

1. विशेषण-विशेष्य कर्मधारय

शुभं कार्यम् = शुभकार्यम्। नीलम् उत्पलम् = नीलोत्पलम्।
विशालः वृक्षः = विशालवृक्षः। सन् जनः = सज्जनः।
महान् जनः = महाजनः। महत् काव्यम् = महाकाव्यम्।
महान् पुरुषः = महापुरुषः।

2. उपमानोपमेय कर्मधारय

घन इव श्यामः = घनश्यामः (उपमान पूर्वपद) ।
कमलम् इव नयनम् = कमलनयनम् ।
चन्द्र इव मुखम् = चन्द्रमुखम् ।
पुरुषः व्याघ्र इव = पुरुषव्याघ्रः (उपमानोत्तर पद)
कुछ अन्य कर्मधारय
विद्या एव धनम् = विद्याधनम्
आदौ सुप्तः पश्चात् उत्थितः = सुप्तोत्थितः।

द्विगु

जब कर्मधारय में पहला पद संख्यावाची हो तब वह समास **द्विगु** समास कहलाता है।[3] यह समास प्रायः समाहार (समूह) अर्थ में होता है। विग्रह में प्रायः षष्ठी विभक्ति का प्रयोग किया जाता है, जैसे–

---

1. नलोपो नञः । ❑ पा0 - 6.3.73
तस्मान्नुडचि। ❑ पा0 6.3.74
2. तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः । ❑ पा0 1.2.42
3. संख्यापूर्वो द्विगुः। ❑ पा0 2.1.52

त्रायाणां लोकानां समाहारः	=	त्रिलोकी।
पञ्चानां वटानां समाहारः	=	पञ्चवटी।
सप्तानां शतानां समाहारः	=	सप्तशती।
अष्टानां अध्यायानां समाहारः	=	अष्टाध्यायी।
त्रयाणां भुवनानां समाहारः	=	त्रिभुवनम्।
सप्तानां दिनानां समाहारः	=	सप्तदिनम् ।

3. द्वन्द्व

जिस समास में पूर्व और उत्तर दोनों पद प्रधान होते हैं या उनके समूह का प्रधानत्व रहता है, वह **द्वन्द्व** समास[1] कहलाता है। विग्रह में प्रत्येक पद के साथ 'च' प्रयोग होता है, जैसे–

रामश्च लक्ष्मणश्च	=	रामलक्ष्मणौ।
युधिष्ठिरश्च भीमश्च अर्जुनश्च	=	युधिष्ठिरभीमार्जुनाः।

द्वन्द्व समास तीन प्रकार का होता है

1. **इतेरत्तर योग द्वन्द्व** – समास में आए सभी पदों का योग (क्रियादि के साथ सम्बन्ध) एक साथ होता है। सभी पद अपना प्रधानत्व और व्यक्तित्व रखते हैं। समस्त पद में संख्या के अनुसार द्विवचन या बहुवचन होता है, किन्तु लिङ्ग परवर्ती-पद के अनुसार होता है।[2]

पार्वती च परमेश्वरः च	=	पार्वतीपरमेश्वरौ।
धर्मश्च अर्थश्च कामश्च मोक्षश्च	=	धर्मार्थकाममोक्षाः।
माता च पिता च	=	पितरौ, मातापतरौ ।
पुत्रश्च कन्या च	=	पुत्रकन्ये ।
धनञ्च जनश्च यौवनञ्च	=	धनजनयौवनानि ।
कन्दं च मूलं च फलं च	=	कन्दमूलफलानि ।
द्वौ च दश च	=	द्वादश।
त्रयश्च विंशतिश्च	=	त्रयोविंशतिः।
अष्ट च चत्वांरिशत् च	=	अष्टचत्वारिंशत्, अष्टाचत्वारिंशत्।

---

1. उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः । ❑ **सि0कौ0 सर्वसमास शेषप्रकरण।**
   चार्थे द्वन्द्वः । ❑ **पा0- 2.2.29**
2. परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः। ❑ **पा0 2.4.26**

2. **समाहार द्वन्द्व** – जिस द्वन्द्व समास में समूह का अर्थ प्रधान रहता है, वह **समाहार द्वन्द्व** कहलाता है। इसके साथ सदा एकवचन और नपुंसकलिङ्ग ही होता है, जैसे –

हस्तौ च पादौ च इत्येतेषां समाहारः = हस्तपादम्।
अहिश्च नकुलश्च तयोः समाहारः = अहिनकुलम्।
आहारश्च निद्रा च भयञ्च इत्येतेषां समाहारः = आहारनिद्राभयम्।

3. **एकशेष द्वन्द्व**– जिस इतरेतर द्वन्द्व समास में एक ही पद शेष रह जाए और अन्य पदों का लोप हो जाए, वह **एकशेष** कहलाता है । विग्रह में आए पदों की संख्या के अनुसार लिङ्ग और वचन होते हैं, जैसे–

बालकश्च बालकश्च बालकश्च = बालकाः।
फलञ्च फलञ्च फलञ्च = फलानि।

पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग शब्दों का समास होने पर पुंलिङ्ग शब्द ही शेष रहता है –

हंसी च हंसश्च = हंसौ।
माता च पिता च = पितरौ।
स्वसा च भ्राता च = भ्रातरौ।
दुहिता च पुत्रश्च = पुत्रौ।

द्वन्द्व समास बनाने के कुछ नियम–

1. द्वन्द्व में इकारान्त शब्द को पहले रखा जाता है[1], जैसे–
हरिश्च हरश्च = हरिहरौ।

2. जिस शब्द का पहला अक्षर स्वर हो और अन्त में अ हो समास में उसका पूर्व प्रयोग होता है[2], जैसे–
इन्द्रश्च अग्निश्च = इन्द्राग्नी।

जिस शब्द में स्वर की संख्या कम हो उसका पूर्व प्रयोग होता है[3], जैसे–
शिवश्च केशवश्च = शिवकेशवौ।

---

1. द्वन्द्वे घि। ☐ पा0 **2.2.32**
2. अजाद्यदन्तम् । ☐ पा0 **2.2.33**
3. अल्पाच्तरम्। ☐ पा0 **2.2.34**

4. बहुव्रीहि

जिस समास में न तो पूर्व पद प्रधान होता है और न उत्तर पद, अपितु कोई अन्य पद प्रधान होता है वह **बहुव्रीहि** समास कहलाता है[1]* । वह समस्त पद किसी दूसरे पद का विशेषण हो जाता है, जैसे–

पीतम् अम्बरं यस्य सः = पीताम्बरः (विष्णु)

यहाँ **पीतम्** और **अम्बरम्** का समास हुआ है, परन्तु इनमें किसी का भी अपना अर्थ यहाँ प्रधान नहीं है। यहाँ दोनों पद समस्त होने पर अन्य पदार्थ विष्णु की विशेषता बतलाते हैं। अतएव **पीताम्बरः** समस्त पद विष्णु अर्थ का बोध कराता है।

इसी प्रकार लम्बोदरः (लम्बम् उदरं यस्य सः) का अर्थ न लम्बा है और न उदर, किन्तु दोनों पद समस्त होकर एक अन्य पदार्थ गणेश का अर्थ देते है। इसलिए **लम्बोदर** का अर्थ गणेशजी होता है।

बहुव्रीहि समास में अधिकांशतः दोनों पद प्रथमा विभक्ति में होते हैं, जैसे–

पीतम् अम्बरम् यस्य सः।

इसे **समानाधिकरण**– (समान विभक्ति वाला अर्थात् प्रथमान्त पदों वाला) बहुव्रीहि कहते हैं । विग्रह में प्रयुक्त यत् शब्द की विभक्ति के अनुसार पुनः द्वितीया से सप्तमी पर्यन्त उसके छः भेद होते हैं, जैसे–

प्राप्तम् उदकं यं सः = प्राप्तोदकः (ग्रामः) द्वितीया समानाधिकरण बहुव्रीहि।

जितानि इन्द्रियाणि येन सः = जितेन्द्रियः (पुरुषः) तृ0समा0 बहु0।

दत्तं धनं यस्मै सः = दत्तधनः (ब्राह्मण) च0 समा0 बहु0।

निर्गतं धनं यस्मात् सः = निर्धनः (पुरुषः) पं0 समा0 बहु0।

महान्तौ बाहू यस्य सः = महाबाहुः ष0समा0बहु0।

वीराः पुरुषा यस्मिन् (ग्रामे) सः = वीरपुरुषो (ग्रामः) स0समा0बहु0।

---

1. अन्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहिः । □ **सि0 कौ0 सर्वसमास शेषप्रकरण**

* बहुव्रीहि पद का अर्थ है–

बहुः व्रीहिः (धान्यं) यस्य सः बहुव्रीहि। यहाँ प्रथम शब्द दूसरे शब्द व्रीहि का विशेषण है और दोनों किसी अन्य शब्द के विशेषण हैं।

ऐसे भी कुछ बहुव्रीहि समास होते हैं जिनके पूर्व और उत्तर पदों में एक प्रथमान्त होता है और दूसरा सप्तम्यन्त। वे **व्यधिकरण बहुव्रीहि** कहलाते हैं, जैसे–

चक्रं पाणौ यस्य सः = चक्रपाणिः (विष्णु)
शूलं पाणौ यस्य सः = शूलपाणिः (शिव)
रघुकुले जन्म यस्य सः = रघुकुलजन्मा (रामचन्द्रः)

सह (साथ) अर्थ में तृतीयान्त के साथ बहुव्रीहि समास होता है इसे **तुल्ययोग बहुव्रीहि** कहते हैं। यहाँ **सह** के स्थान में **स** आदेश हो जाता है। जैसे–

वत्सेन सह (सहिता) सवत्सा (गौः)।
पत्न्या सह वर्तमानः सपत्नीकः (वसिष्ठः)।

बहुव्रीहि के कुछ समस्तपदों में **इव** का अर्थ छिपा होता है। वह **उपमान वाचक बहुव्रीहि** कहलाता है, जैसे–

चन्द्र इव मुखं यस्याः सा = चन्द्रमुखी।
पाषाणवत् हृदयं यस्य सः = पाषाणहृदयः।

अलुक् समास

समास में कुछ ऐसे भी प्रयोग मिलते हैं, जिनके **प्रथम पद** की विभक्ति का लोप नहीं होता है। वे **अलुक्** समास कहलाते हैं, जैसे–

आत्मने पदम् = आत्मनेपदम्, परस्मै पदम् = परस्मैपदम् (चतुर्थी विभक्ति का अलुक् समास)। देवानां प्रियः = देवानांप्रियः। सरसि जायते = सरसिजम्। मनसि जायते = मनसिजः। युधि स्थिरः = युधिष्ठिरः। अन्ते वसति यः = अन्तेवासी। खे चरति = खेचरः। कण्ठे कालः यस्य सः = कण्ठेकालः (सप्तमी का अलुक्)।

नवीन शब्दों से ऐसे समास बनाकर प्रयोग नहीं किए जाते हैं।

अभ्यास

1. समास किसे कहते हैं? इसके प्रमुख भेदों के नाम लिखिए तथा प्रत्येक का एक-एक उदाहरण दीजिए।
2. विग्रह से आप क्या समझते हैं?
3. सन्धि और समास में क्या अन्तर है?
4. निम्नलिखित समस्त पदों का विग्रह कीजिए–

निर्जनम्	सुखप्राप्तः	
अनुवनम्	प्रतिदिनम्	
घनश्यामः	प्रत्येकम्	
त्रिभुवनम्	शोकमग्नः	
तदर्थम्	अष्टाध्यायी	
यथाविधि	असत्यम्	चक्रपाणिः
पार्वतीपरमेश्वरौ	अनादिः	जितेन्द्रियः

5. इन पदों में समास कीजिए और उनके नाम लिखिए–

गृहं गृहम्	सन् जनः
शक्तिमनतिक्रम्य	महान् पुरुषः
राज्ञः पुरुषः	कमलम् इव नयनम्
नीलं कमलम्	न उपस्थितः
त्रयाणां लोकानां समाहारः	मात्रा समः
छात्राय इदम्	भार्यया सह
पुत्रश्च दुहिता च	विद्यया विहीनः
हस्तौ च पादौ च तेषां समाहारः	रमाया ईशः
फलञ्च फलञ्च फलञ्च	दश आननानि यस्य सः
माता च पिता च	द्वौ च दश च

6. निम्नलिखित वाक्यों के स्थूलाक्षर पदों में जो समास सही हैं उन्हें कोष्ठक में ✓ इस चिह्न से चिह्नित कीजिए–

क. कदाचिदहं **पीताम्बरम्** अपि परिदधे। (बहुव्रीहिः/कर्मधारयः)

ख. आकाशः **अनादिः अनन्तः** च अस्ति। (नञ्तत्पुरुषः/बहुव्रीहि)

ग. **निर्धनं** जनं न कोऽपि आद्रियते। (बहुव्रीहिः/अव्ययीभावः)

घ. **षड्रसं** भोजनं प्रशस्यते। (द्विगुः/बहुव्रीहि)

ङ. कविषु कालिदासः हंसेषु **राजहंस** इव शोभते।

(अव्ययीभावः/तत्पुरुषः)

7. 'क' भाग में समस्तपद दिए गए हैं और 'ख' भाग में समासों के नाम दिए गए हैं। दोनों को सही ढंग से जोड़िए–

क	ख
अधिगङ्गम्	कर्मधारयः
दुःखातीतः	एकशेषः
सज्जनः	बहुव्रीहिः
पितरौ	अव्ययीभावः
त्रिलोकी	द्विगुः
अष्टादशः	द्वन्द्वः
भ्वादिः	तत्पुरुषः

नवम अध्याय

(Metres)

परिचय

पद्य लिखते समय अक्षरों की एक निश्चित व्यवस्था रखनी पड़ती है । यह व्यवस्था **छन्द** या **वृत्त** कहलाती है।

वृत्त के भेद

प्रायः प्रत्येक श्लोक के चार भाग होते हैं जो **पाद** या **चरण** कहलाते हैं। जिस वृत्त के चारों चरणों में बराबर अक्षर हों वे **समवृत्त** कहलाते हैं। जिसके प्रथम और तृतीय तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण अक्षरों की दृष्टि से समान हों, वे **अर्धसमवृत्त** हैं। जिसके चारों चरणों में अक्षरों की संख्या समान न हों वे **विषमवृत्त** कहे जाते हैं।

गुरु-लघु व्यवस्था

छन्द की व्यवस्था वर्णों पर आधारित रहती है – जिनमें स्वर वर्ण प्रमुख रहते हैं। ये वर्ण छन्द की दृष्टि से दो प्रकार के होते हैं – **लघु** एवं **गुरु**। सामान्यतः ह्रस्व स्वर लघु होता है और दीर्घ स्वर गुरु। किन्तु कुछ परिस्थितियों में ह्रस्व स्वर लघु न होकर गुरु माना जाता है। छन्द में गुरु-लघु व्यवस्था का नियम इस प्रकार है –

अनुस्वारयुक्त, दीर्घ, विसर्गयुक्त, तथा संयुक्त वर्ण के पूर्व के वर्ण गुरु होते हैं। शेष सभी वर्ण लघु होते हैं। छन्द के किसी पाद का अन्तिम वर्ण लघु होने पर भी आवश्यकतानुसार गुरु मान लिया जाता है–

सानुस्वारैश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत् ।
वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि वा ॥

-छन्दोमञ्जरी

गुरु एवं लघु के लिए निम्नलिखित चिह्न प्रयुक्त होते है –

गुरु ऽ अथवा ◡

लघु । अथवा –

गुरु एवं लघु व्यवस्था को एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है–

।	ऽ	।	ऽ	ऽ	।	।	ऽ	।	ऽ	।
त्व	मे	व	मा	ता	च	पि	ता	त्व	मे	व ।

गण-व्यवस्था

तीन वर्णों का एक **गण** माना जाता है। गुरु लघु के क्रम से गण आठ प्रकार के होते हैं–

भ-गण	ऽ ।।	य-गण	। ऽ ऽ	म-गण	ऽ ऽ ऽ
ज-गण	। ऽ ।	र-गण	ऽ । ऽ	न-गण	।।।
स-गण	।। ऽ	त-गण	ऽ ऽ ।		

इसका नियम इस प्रकार है–

भगण आदि-गुरु, जगण मध्य-गुरु तथा सगण अन्त-गुरु होते हैं। यगण आदि-लघु, रगण मध्य-लघु और तगण अन्त-लघु होते हैं। मगण में सभी गुरु और नगण में सभी वर्ण लघु होते हैं।

आदिमध्यावसानेषु भजसा यान्ति गौरवम्।
यरता लाघवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम् ॥

– छन्दोमञ्जरी (सुषमा टीका)

यति-व्यवस्था

छन्द में जिस–जिस स्थान पर किञ्चिद् विराम होता है, उसको **'यति'** कहते हैं। **विच्छेद, विराम, विरति** आदि इसके नामान्तर हैं।

यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते ।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया॥

– छन्दोमञ्जरी, 1-12

उदाहरण–

> **अनाघ्रातं पुष्पं /किसलयमलूनं कररुहै/**
> **रनाविद्धं रत्नं / मधु नवमनास्वादितरसम्/।**
> **अखण्डं पुण्यानां/ फलमिव च तद्रूपमनघं/**
> **न जाने भोक्तारं/कमिह समुपस्थास्यति विधिः/।।**
>
> **– अभिज्ञानशाकुन्तलम्,2/10**

उपर्युक्त श्लोक के प्रत्येक चरण में छठे अक्षर और सत्रहवें अक्षर के बाद यति दिखायी गयी है।

प्रमुख छन्द

अब कुछ प्रमुख छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं–

1. अनुष्टुप् या श्लोक

(आठ अक्षरों वाला समवृत्त)

लक्षण–इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ अक्षर होते हैं जिनमें पाँचवाँ अक्षर लघु तथा छठा अक्षर गुरु होता है। सातवाँ अक्षर पहले और तीसरे चरण में गुरु होता है,किन्तु दूसरे और चौथे चरण में लघु। संस्कृत में लक्षण* एवं उदाहरण–

	I	S	S	
श्लोके षष्ठं	**गु /**	**रु /**	**ज्ञे /**	**यं**
	I	S	I	
सर्वत्र ल /	**घु /**	**प /**	**ञ्च /**	**मम्।**
	I	S	S	
द्विचतुष्पा /	**द /**	**यो /**	**र्ह्र /**	**स्वं**
	I	S	I	
सप्तमं दी /	**र्घ /**	**म /**	**न्य /**	**योः।।**

– श्रुतबोध, 10

---

* संस्कृत में छन्दों के लक्षण उदाहरण का भी कार्य करते हैं ।

एक प्रसिद्ध उदाहरण–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ, वागर्थप्रतिपत्तये।
5 6 7 5 6 7
जगतः पितरौ वन्दे,, पार्वतीपरमेश्वरौ ।। – **रघुवंशम्, 1/1**
5 6 7 567

2. इन्द्रवज्रा (त, त, ज, ग, ग)

(ग्यारह अक्षर वाला समवृत्त)

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में दो तगण, एक जगण और दो गुरु वर्ण क्रम से हों वह **इन्द्रवज्रा** कहलाता है। संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण–

त	त	ज	गुरु	गुरु
S S I	S S I	I S I	S	S
स्या दि न्द्र /	व ज्रा य/	दि तौ ज/	गौ	गः

– वृत्तरत्नाकर : 3/30

अन्य उदाहरण-

3. उपेन्द्रवज्रा (ज,त,ज,ग,ग) (ग्यारह अक्षरों का समवृत्त)

जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक जगण, एक तगण, एक जगण और दो गुरु अक्षर होते हैं, वह छन्द **उपेन्द्रवज्रा** कहलाता है।

संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण–

ज	त	ज	ग	ग
I S I	S S I	I S I	S	S
उ पे न्द्र	व ज्रा ज	त जा स्त	तो	गौ

– वृत्तरत्नाकर, 3/31

ज	त	ज	ग ग
प्रजाः प्र	जाः स्वा इ	व तन्त्र	यित्वा
निषेव	तेऽशान्त	मना वि	विक्तम्।
यूथानि	संचार्य	रविप्र	तप्तः
शीतं दि	वा स्थान	मिव द्वि	पेन्द्रः॥

—अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5/5

4. उपजाति

(ग्यारह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिस छन्द में इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा के चरणों का मिश्रण होता है, यह **उपजाति** छन्द कहलाता है। संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण—

ज	त	ज	ग	ग	= उपेन्द्रवज्रा
अनन्त/	रोदीरि/	त लक्ष्म/	भा	जौ	
त	त	ज	ग	ग	= इन्द्रवज्रा
पादौ य/	दीयावु/	पजात/	यस्ताः।		

इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु,
वदन्ति जातिष्विदमेव नाम॥

—वृत्तरत्नाकर, 3/32

एक प्रसिद्ध उदाहरण—

त	त	ज	ग ग	= इन्द्रवज्रा
अस्त्युत्त/	रस्यां दि/	शि देव/	तात्मा	
ज	त	ज	ग ग	= उपेन्द्रवज्रा
हिमाल/	यो नाम /	नगाधि/	राजः।	

पूर्वाप/रौ तोय/ निधी व/ गाह्य
स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥

—कुमारसम्भवम्, 1/1

5. वंशस्थ (ज, त, ज, र)

(बारह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिस छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः जगण, तगण, जगण, रगण हों वह **वंशस्थ** छन्द कहलाता है।

संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण–

ज त ज र

I S I   S S I   I S I   S I S

ज तौ तु वं श स्थ मु दी रि . तं ज रौ ।

–वृत्तरत्नाकर, 3/47

एक प्रसिद्ध उदाहरण–

ISI SSI IS I S IS

भवन्ति नम्रास्त रवः फलो द्गमै-
र्नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् ॥

–अभिज्ञानशाकुन्तलम् 5/12

6. वसन्ततिलका (त, भ, ज, ज, ग, ग)

(चौदह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण, एवं दो गुरु वर्ण हों, वह छन्द **वसन्ततिलका** कहलाता है।

संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण–

त भ ज ज ग ग

S S I S I I I S I I S I S S

उक्ता व/ सन्तति/ लका त/ भजा ज/ गौ गः ।

–वृत्तरत्नाकरः, 3/78

त भ ज ज ग ग / (ल पदान्त= ग)

पापान्नि / वारय / ति योज / यते हि / ताय
गुह्यं निगूहति गुणान्प्रकटीकरोति।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः ॥

–भर्तृहरिनीतिशतकम्, 73

7. मालिनी (न,न,म,य,य)

(पन्द्रह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण, एक मगण तथा दो यगण, हों, वह छन्द **मालिनी** कहलाता है। इसमें पहली यति (विराम) आठवें वर्ण के बाद और दूसरी यति पन्द्रहवें वर्ण के बाद होती है।

संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण-

न न म य य

| | | | | | SS S | S S | S S

न न म य य यु तेयं मा लि नी भो गि लो कैः*।

–वृत्तरत्नाकरः,3/84

न न म य य

सरसि/जमनु/विद्धं शै/ वलेना/ पि रम्यं

मलिन/मपि हि/ मां शोर्ल/क्ष्म लक्ष्मीं/ तनोति/

इयम/धिकम/नोज्ञा व/ल्कलेना/पि तन्वी

किमिव/ हि मधु/राणां म/ण्डनं ना /कृतीनाम्।

–अभिज्ञानशाकुन्तलम्,1/20

8. शिखरिणी (य म न स भ ल ग)

(सत्रह अक्षरों वाला समवृत्त)

जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण,मगण, नगण, सगण, भगण तथा एक लघु और एक गुरु वर्ण हों, वह **शिखरिणी** छन्द कहलाता है। छठे और सत्रहवें वर्ण के बाद इसमें यति होती है। संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण–

य म न स भ ल ग

|S SSS S ||| | |SS | ||S

रसै रुद्रैश्छिन्ना य म न स भलागः शिखरिणी।

–वृत्तरत्नाकरः,3/90

---

* छन्दः शास्त्र में संख्या के लिए कपिपय विशिष्ट शब्दों के प्रयोग हुए हैं, जैसे– भोग = 8, लोक = 7, रस = 6, रुद्र = 11, सूर्य = 12, अश्व = 7 आदि।

एक प्रसिद्ध उदाहरण–

य म न स भ ल ग

अनाघ्रा/तं पुष्पं/ किसल/ यमलू/ नं कर/ रु है-

रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम् ।

अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं

न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः॥

–अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 2/10

9. मन्दाक्रान्ता

(सत्रह अक्षरों वाला समवृत्त)

मगण, भगण, नगण, दो तगणों और दो गुरुओं से **मन्दाक्रान्ता** छन्द होता है। इसमें चौथे अक्षर के बाद पहली यति, छठे अक्षर के बाद दूसरी यति तथा आठवें अक्षर के बाद तीसरी यति होती है। संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण–

म भ न त त ग ग

S S S S I I I I I S S I S S I S S

म न्दा क्रा न्ताम्बुधि र स न गै र्मो भ नौ तौ ग युग्मम्

–छन्दोमञ्जरी, 2/17

एक अन्य उदाहरण–

म भ न त त ग ग

S S S S I I I I I S S I S S I S S

धूमज्यो/ तिः सलि/ ल म रु/तां सन्नि/ पातः क्व/ मे घः

सन्देशा/ र्थाः क्वप/ टुकर / णैःप्राणि/ भिः प्राप / णीयाः।

इत्यौत्सु/ क्यादप/ रिगण/ य न्गुह्य/ क स्तं य / याचे

कामार्ता/ हि प्रकृ/ तिकृप/ णा श्चेत/ ना चेत/ नेषु॥

–मेघदूतम्, (पूर्वमेघः, 5)

10. शार्दूलविक्रीडितम् (म स ज स त त ग)

(उन्नीस अक्षरों वाला समवृत्त)

जिस छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण, दो तगण एवं एक गुरु वर्ण हो वह **शार्दूलविक्रीडित** छन्द कहलाता है। इसमें बारहवें अक्षर के बाद पहली यति और उन्नीसवें अक्षर के बाद दूसरी यति होती है। संस्कृत में लक्षण एवं उदाहरण–

म स ज स त त ग

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । । । ऽ । । ऽ ऽ । ऽ

सू र्या श्वै/ र्यदि मः/ स जौ स/ त त गाः/ शा र्दू ल /वि क्री डि तम्

—छन्दोमञ्जरी, 2/19

एक अन्य उदाहरण—

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।।

—अभिज्ञानशाकुन्तलम्,4/9

अभ्यास

1. नीचे लिखे गणों के सामने नमूने के अनुसार उनके गुरु लघु अक्षरों को चिह्नों में लिखिए—

नमूना-	भगण	ऽ।।	मगण	....
	यगण	......	नगण	....
	रगण	......	तगण	....
	सगण	......	जगण	....

2. निम्नलिखित श्लोक के अक्षरों के ऊपर गुरु-लघु का चिह्न लगाकर उनको गणों में विभक्त कीजिए—

इदं किलाऽव्याजमनोहरं वपु—
स्तपः क्षमं साधयितुं य इच्छति।
ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया
शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति।।

3. निम्नलिखित छन्दों के लक्षण उदाहरण के साथ लिखिए—

उपजाति,मालिनी, शिखरिणी, वसन्ततिलका, मन्दाक्रान्ता।

4. अनुष्टुप् तथा वसन्ततिलका छन्द का एक एक उदाहरण दीजिए।

5. टिप्पणी लिखिए–

समवृत्त, गुरु, लघु।

6. कोष्ठक में से उचित छन्दों को चुनकर निम्नलिखित पंक्तियों के सामने लिखिए–

(वसन्ततिलका, उपजाति, अनुष्टुप्, मालिनी, शिखरिणी, मन्दाक्रान्ता)

(क) ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।

(ख) कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।

(ग) रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि।

(घ) उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः।

(ङ.) दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम्।
सत्यपूतां वदेद् वाचं मनःपूतं समाचरेत् ।

(च) याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा ।

7. नीचे दिए गए नमूने के आधार पर निम्नलिखित शब्दों के गण चिह्न लिखिए–

		शब्द	**गणचिह्न**
नमूना–		मन्दं मन्दं याति	SSSSSI
	(क)	भारविः	....
	(ख)	मित्रपक्षपातः	....
	(ग)	शीलेन प्रमदा	....
	(घ)	दुःखितः	....
	(ङ.)	संसारसागरः	....

दशम अध्याय

अलङ्कार

परिभाषा

लोक में जिस प्रकार आभूषण आदि शरीर की शोभा बढ़ाने में सहायक होते हैं उसी प्रकार काव्य में अनुप्रास, उपमा आदि उसकी चारुता की अभिवृद्धि करते हैं और वे **अलङ्कार** कहलाते हैं । अलङ्कार वह है जो अलङ्कृत करे **(अलङ्करोति इति अलङ्कारः)** । यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि अलङ्कार शोभा को उत्पन्न नहीं कर सकते, अपितु उसकी अभिवृद्धि मात्र करते हैं।

शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार

शब्द और अर्थ काव्य के शरीर माने गए हैं । अतएव काव्य शरीर का अलङ्करण भी शब्द एवं अर्थ दोनों ही रूपों में होता है । जो अलङ्कार केवल शब्द की चारुता की अभिवृद्धि करते हैं वे शब्द पर आश्रित रहने के कारण **शब्दालङ्कार** कहे जाते हैं, जैसे– **अनुप्रास, यमक** आदि । जो अलङ्कार अर्थ की मनोहरता की अभिवृद्धि करते हैं, वे अर्थ पर आश्रित होने के कारण **अर्थालङ्कार** कहे जाते हैं, जैसे– **उपमा, रूपक** आदि । शब्द विशेष को हटा कर उसी अर्थ वाले दूसरे शब्द के रखने पर भी वहाँ अलङ्कार बना रहता है।

---

1. उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित् ।
   हारादिवदलङ्कारास्तेऽनुप्रासोपमादयः ॥ ❑ **काव्यप्रकाशः, 8.67**

कुछ अलङ्कार ऐसे होते हैं जो शब्द और अर्थ दोनों पर आश्रित रहते हैं, वे **उभयालङ्कार** कहे जाते हैं, जैसे– **श्लेष** ।

कुछ प्रमुख अलङ्कारों के लक्षण एवं उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं–

I. शब्दालङ्कार

1. अनुप्रास

समान वर्णों की आवृत्ति अनुप्रास[1] है, जैसे–

हंसो यथा राजतपञ्जरस्थः
सिंहो यथा मन्दरकन्दरस्थः ।
वीरो यथा गर्वितकुञ्जरस्थः
चन्द्रोऽपि बभ्राज तथाम्बरस्थः ॥

–वाल्मीकिरामायणम्, सुन्दरकाण्डम् 5.4

यहाँ थ, न्द, र – वर्णों की आवृत्ति के कारण अनुप्रास अलङ्कार होता है। अनुप्रास शब्द का अर्थ है – रसानुकूल वर्णों की चमत्कार योजना।[2] इसके कई भेद है ।

2. यमकम्

जब वर्ण समूह की उसी क्रम से पुनरावृत्ति की जाय, किन्तु आवृत्त वर्ण-समुदाय या तो भिन्नार्थक हो या अंशतः अथवा पूर्णतः निरर्थक, तब वह **यमक** अलङ्कार कहलाता है।[3] समानार्थक पदों की आवृत्ति को यमक नहीं कहा जा सकता । उदाहरण–

नवपलाशपलाशवनं पुरः
स्फुटपरागपरागतपङ्कजम् ।
मृदुलतान्त-लतान्तमलोकयत्
स सुरभिं सुरभिं सुमनोभरैः* ॥

– शिशुपालवधम् 6. 2

---

1. वर्णसाम्यमनुप्रासः । ❑ **काव्यप्रकाशः 9.79**
2. रसाद्यनुगतः प्रकृष्टो न्यासोऽनुप्रासः । ❑ **काव्यप्रकाशः 9.78**
3. सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः ।
   क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते ॥ ❑ **साहित्यदर्पणम् 10.8**

* जिसमें पलाशों (ढाकों) का वन नये पलाशों (पत्तों) से युक्त हो गया है, कमल बढ़े हुए पराग (= पुष्परज) से परागत (= व्याप्त) हो गये हैं, लतान्त (लताओं के प्रान्त) मृदुल (= कोमल) और तान्त (= विस्तृत या झुके हुए) हो गये हैं, पुष्पों से सुरभि (= सुगन्धित) सुरभि (वसन्त ऋतु) को उसने (श्रीकृष्ण ने रैवतक पर्वत पर) देखा ।

यहाँ **पलाश पलाश** और **सुरभिं सुरभिं** इनमें दोनों पद सार्थक हैं। प्रथम पलाश का अर्थ है – पत्ता, द्वितीय पलाश का अर्थ है – वृक्षविशेष (ढाक)। इसी प्रकार प्रथम **सुरभि** का अर्थ है सुगन्धित और द्वितीय का अर्थ है वसन्त ऋतु। इस प्रकार ये सार्थक पद भिन्नार्थक हैं। अतएव इनकी आवृत्ति से यहां यमक अलङ्कार है। लतान्त लतान्त में पहला निरर्थक है, क्योंकि इसका **ल** पूर्ववर्ती शब्द **मृदुल** से मिला है। **पराग पराग** में दूसरा पद निरर्थक है, क्योंकि इसमें अगले **गत** शब्द का **ग** मिलाया गया है, अतएव यहाँ भी पदों की आवृत्ति से **यमक** अलङ्कार हुआ है।

3. श्लेष

पद या पदसमुदाय द्वारा अनेक अर्थों का कथन **श्लेष** अलङ्कार कहलाता है।[1] जैसे– **उच्चरद्भूरि कीलालः शुशुभे वाहिनीपतिः।**

जिसके शरीर से अधिक मात्रा में रक्त निकला वह सेनापति शोभित हुआ। पक्ष में– जिससे अधिक मात्रा में जल उछलता है वह समुद्र शोभित हुआ। यहाँ कीलाल तथा वाहिनीपति शब्दों में अनेक अर्थ होने के कारण **श्लेष** अलङ्कार होता है (कीलाल = रुधिर/जल ; वाहिनीपति = सेनापति/समुद्र)।

श्लेष अर्थालङ्कार भी होता है। जब शब्द के परिवर्तन कर देने पर भी श्लेषत्व बना रहता है तब वह श्लेष अर्थालङ्कार होता है, जैसे–

स्तोकेनोन्नतिमायाति स्तोकेनायात्यधोगतिम्।
अहो सुसदृशी वृत्तिस्तुलाकोटेः खलस्य च ॥[2] **– पञ्चतन्त्रम्, 1.150**

यहाँ **उन्नति** शब्द का अर्थ है ऊपर उठना और अभ्युदय। **अधोगति** शब्द का अर्थ है नीचे जाना और अपकर्ष। अत एव इन पदों में श्लेष है, इनके पर्याय शब्द रख देने पर भी यहाँ श्लेष बना रहता है। अत एव यह श्लेष अर्थालङ्कार है।

श्लेष के अनेक भेद-प्रभेद हैं जिनका उल्लेख यहाँ अपेक्षित नहीं है।

---

1. श्लिष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते। □ **साहित्यदर्पणम् 10.11**
2. थोड़े में उन्नति को प्राप्त होता है और थोड़े में ही नीचे गिर जाता है। अहो! तराज़ू का पलड़ा और दुष्ट, इन दोनों का कैसा समान स्वभाव है!

II. अर्थालङ्कार

1. उपमा

दो वस्तुओं में भेद रहने पर भी जब उनका साधर्म्य (समानता) प्रतिपादित किया जाए, तब वह **उपमा** अलङ्कार होता है[1], जैसे–

कमलमिव मुखं मनोज्ञमेतत् । यहाँ मुख की उपमा कमल से दी गई है । उपमा अलङ्कार में चार उपादान होते हैं–

1) उपमान (जिससे उपमा दी जाये), जैसे – **कमलम्**
2) उपमेय (जिसकी उपमा दी जाये), जैसे – **मुखम्**
3) समान धर्म जैसे **मनोज्ञं** (मनोज्ञता, सुन्दरता)
4) उपमानवाची शब्द जैसे **इव** (यथा, वत्, तुल्य, सम आदि) ।

जहाँ इन चारों का स्पष्ट उल्लेख हो वह **पूर्णोपमा** कहलाती है, जैसे उपर्युक्त उदाहरण में । जहाँ इनमें से कुछ लुप्त रहते हैं वह **लुप्तोपमा** कहलाती है । उपमा के भेद-प्रभेद अनेक हैं।

2. रूपक

अतिशय सादृश्य के कारण जहाँ उपमेय को उपमान का ही रूप दे दिया जाये, वहाँ **रूपक** अलङ्कार होता है।[2] जैसे–

मुखं चन्द्र – यहाँ मुख उपमेय को चन्द्र उपमान का रूप दिया है ।

3. उत्प्रेक्षा

उपमेय की उपमान रूप में संभावना **उत्प्रेक्षा** अलङ्कार है[3] ।

उदाहरण –

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः ।
असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता ॥ * – मृच्छकटिकम्, 1.34

---

1. साधर्म्यमुपमा भेदे । ❑ **काव्यप्रकाशः, 10.87**
2. तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः।❑ **काव्यप्रकाशः, 10.93**
3. सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत् । ❑ **काव्यप्रकाशः, 10.92**
प्रकृतस्य = उपमेयस्य । समेन = उपमानेन

* (वर्षाकाल की रात्रि के समय) अन्धकार मानो अङ्गों को लीप रहा है, आकाश मानो काजल की वृष्टि कर रहा है और दुष्ट पुरुष की सेवा के समान मानो दृष्टि विफल हो गयी है ।

यहाँ अन्धकार का फैलना रूप उपमेय की लेपन आदि उपमान के रूप में सम्भावना की गई है । अतएव उत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

उत्प्रेक्षा वाचक शब्द हैं – **मन्ये, शङ्के, ध्रुवम्, प्रायः, नूनम्, इव**[1], आदि। इनमें **इव** का प्रयोग उपमा में भी होता है । अन्तर यह है कि इव शब्द जब उत्प्रेक्षा का वाचक होता है तब क्रिया के साथ प्रयुक्त होता है और जब उपमा का वाचक होता है तब संज्ञा के साथ ।

4. अर्थान्तरन्यास

मुख्य अर्थ का समर्थन करने वाले दूसरे वाक्यार्थ (अर्थान्तर) का प्रतिपादन (न्यास) **अर्थान्तरन्यास** कहलाता है।[2] जैसे– **हनूमानब्धिमतरद् दुष्करं हि महात्मनाम्** ।

हनूमानब्धिमतरत् (हनुमान जी ने समुद्र पार किया) मुख्य वाक्य है । इसका समर्थन **दुष्करं हि महात्मनाम्** इस अगले वाक्य द्वारा किया गया है। अतः यहाँ अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है ।

5. अतिशयोक्ति

अध्यवसाय के सिद्ध होने पर **अतिशयोक्ति** अलंकार होता है[3], तात्पर्य यह है कि जहाँ विषय (उपमेय) का निगरण करके (विषय को विषयी में विलीन करके) विषयी (उपमान) के साथ उसका अभेद ज्ञान है, उसे **अतिशयोक्ति** अलंकार कहते हैं।[4] उदाहरण –

कथमुपरि कलापिनः कलापो
विलसति तस्य तलेऽष्टमीन्दुखण्डम् ।
कुवलययुगलं ततो विलोलं
तिलकुसुमं तदधः प्रवालमस्मात् ॥

– साहित्यदर्पणम् 10/47

---

1. मन्ये शङ्के ध्रुवं प्रायो नूनमित्येवमादयः ।
उत्प्रेक्षा व्यज्यते शब्दैरिवशब्दोऽपि तादृशः ॥ □ **काव्यादर्शः, 2.234**

2. भवेदर्थान्तरन्यासोऽनुषक्तार्थान्तराभिधा । □ **चन्द्रालोकः, 5. 66**

3. सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते। □ **साहित्यदर्पणम्, 10/46**

4. विषयनिगरणेनाभेदप्रतिपत्तिर्विषयिणोऽध्यवसायः। □ **साहित्यदर्पणम्, 10/46**

अर्थात् कैसा आश्चर्य है ! सबसे ऊपर मयूर का कलाप (पिच्छ) है, उसके नीचे अष्टमी का चन्द्रमा विराजमान है। उसके नीचे दो चञ्चल नीले कमल हैं। उसके नीचे तिल का फूल और उसके नीचे सुन्दर मूंगे का खण्ड सुशोभित है।

प्रस्तुत पद्य में कामिनी के केशपाश का मयूरपिच्छ के रूप में, ललाट (मस्तक) का अष्टमी के चन्द्रमा के रूप में, दोनों नेत्रों को दो हिलते हुए नीले कमलों के रूप में, नासिका का तिलपुष्प के रूप में और अधरोष्ठ का मूंगे के रूप में विलय के साथ अभेद ज्ञान हो रहा है। अतः यहाँ **अतिशयोक्ति** अलंकार है।

6. व्याजस्तुति

जहाँ देखने में निन्दा प्रतीत हो पर वास्तव में स्तुति हो या फिर देखने में स्तुति प्रतीत हो परन्तु वास्तव में निन्दा हो वहाँ **व्याजस्तुति** अलंकार होता है।[1]

उदाहरण–

हित्वा त्वामुपरोधवन्ध्यमनसां मन्ये न मौलिः परो
लज्जावर्जनमन्तरेण न रमामन्यत्र संदृश्यते।
यस्त्यागं तनुतेतरां मुखशतैरेत्याश्रितायाः श्रियः
प्राप्य त्यागकृतावमाननमपि त्वय्येव यस्याः स्थितिः ॥

–काव्यप्रकाशः, 10.169

अर्थात् राजन् ! मुझे तो यही स्पष्ट लग रहा है कि आपको छोड़कर न तो आश्रितों के अनुरोध से रिक्तहृदय आश्रयदाताओं का कोई दूसरा शिरोमणि है और न लक्ष्मी को छोड़कर कहीं अन्यत्र (स्त्री जाति में) कोई निर्लज्जता दिखाई देती है क्योंकि आप तो ऐसे ठहरे कि नानाविध उपायों से स्वाश्रिता लक्ष्मी के अनवरत परित्याग (दान) से अपमानित होकर भी लक्ष्मी सदा आप ही के साथ रहना चाहती है।

यहाँ राजा की आपाततः निन्दा उसके महादान या लक्ष्मी–समृद्धि की स्तुति (प्रशंसा) में परिणत हो रही है। अतः **व्याजस्तुति** अलंकार है।

---

1. अ. व्याजस्तुतिर्मुखे निन्दा स्तुतिर्वा रुढिरन्यथा। ❑ **काव्यप्रकाशः10.112**
 आ. उक्ता व्याजस्तुतिः पुनः।
 निन्दास्तुतिभ्यां वाच्याभ्यां गम्यत्वे स्तुतिनिन्दयोः ॥ ❑ **साहित्यदर्पणम् 10.60**

7. अप्रस्तुतप्रशंसा

अप्रस्तुत (अप्राकरणिक) की ऐसी प्रशंसा (कथन) जो कि प्रस्तुत अर्थ के ज्ञान का निमित्त हुआ करती है, **अप्रस्तुतप्रशंसा** अलङ्कार है।[1] उदाहरण–

पादाहतं यदुत्थाय मूर्धानमधिरोहति ।
स्वस्थादेवापमानेऽपि देहिनस्तद्वरं रजः ॥ –साहित्यदर्पणः, 10.59

अर्थात् अपना अपमान होने पर भी चुप बैठे रहने वाले मनुष्यों से तो वह धूल ही अच्छी है जो ठोकर लगने पर ठोकर मारने वाले के सिर पर पहुंचती है – यह कृष्ण के प्रति बलराम की उक्ति है । शिशुपाल के अपमानों को सहन करने वाले हम लोगों की अपेक्षा धूल ही अच्छी है – यह विशेष यहाँ प्रस्तुत है । परन्तु सामान्य देही (मनुष्य) का अभिधान किया है। इस प्रकार अप्रस्तुत सामान्य देही से प्रस्तुत विशेष कृष्ण, बलराम आदि का ज्ञान होने के कारण यहाँ **अप्रस्तुतप्रशंसा** अलङ्कार है।

अभ्यास

1. **अलङ्कार किसे कहते हैं ?**
2. **शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार में क्या अन्तर है ? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए ।**
3. **निम्नलिखित अलङ्कारों के लक्षण और उदाहरण लिखिए–**
   यमक, अनुप्रास, रूपक, उपमा, व्याजस्तुति, अतिशयोक्ति ।
4. **श्लेष को आप शब्दालङ्कार मानते हैं या अर्थालङ्कार ? उदाहरण देकर समझाइए।**

---

1. अप्रस्तुतात्प्रस्तुतं चेत् गम्यते पञ्चधा ततः ।।
अप्रस्तुतप्रशंसा स्यात् । ❑ **साहित्यदर्पणः 10. 59**
(अप्रस्तुतस्य कथनात् प्रस्तुततस्य कथनम् इति निष्कृष्टोऽर्थः)

5. 'क' भाग में कुछ पङ्क्तियाँ दी गई हैं और 'ख' भाग में अलङ्कारों के नाम दिए गए हैं, उनमें से जो जहाँ उचित है, जोड़िए–

	(क)	(ख)
(अ)	पयः पानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्धनम् । उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये ।।	श्लेषः
(आ)	कमले कमला शेते हरः शेते हिमालये । क्षीराब्धौ च हरिः शेते मन्ये मत्कुणशङ्कया ।।	अर्थान्तरन्यासः
(इ)	वैनतेयसमो राजा विनतानन्दवर्धनः ।	यमकम्
(ई)	कुमारा माराभिरामा रामाद्यपौरुषा रुषा भस्मीकृतारयो रयोपहसितसमीरणा रणाभियानेन यानेन महाशंस राजानमकार्षुः ।	अप्रस्तुतप्रशंसा
(उ)	पादाहतं यदुत्थाय मूर्धानमधिरोहति । स्वस्थादेवापमानेऽपि देहिनस्तद्वरं रजः ।।	उत्प्रेक्षा

परिशिष्ट I

संख्यावाची शब्दों की सूची

अङ्क	संख्या	पूरणी संख्या पुंलिङ्ग तथा नपुं0	स्त्रीलिङ्ग
1.	एक	प्रथम (प्रथमः, प्रथमम्)	प्रथमा
2.	द्वि	द्वितीय	द्वितीया
3.	त्रि	तृतीय	तृतीया
4.	चतुर्	चतुर्थ, तुरीय, तुर्य	चतुर्थी, तुरीया, तुर्या
5.	पञ्चन्	पञ्चम	पञ्चमी
6.	षष्	षष्ठ	षष्ठी
7.	सप्तन्	सप्तम	सप्तमी
8.	अष्टन्	अष्टम	अष्टमी
9.	नवन्	नवम	नवमी
10.	दशन्	दशम	दशमी
11.	एकादशन्	एकादश	एकादशी
12.	द्वादशन्	द्वादश	द्वादशी
13.	त्रयोदशन्	त्रयोदश	त्रयोदशी
14.	चतुर्दशन्	चतुर्दश	चतुर्दशी
15.	पञ्चदशन्	पञ्चदश	पञ्चदशी
16.	षोडशन्	षोडश	षोडशी
17.	सप्तदशन्	सप्तदश	सप्तदशी
18.	अष्टादशन्	अष्टादश	अष्टादशी
19.	नवदशन्	नवदश	नवदशी
	एकोनविंशति	एकोनविंश, एकोनविंशतितम	एकोनविंशी, एकोनविंशतितमी
	ऊनविंशति	ऊनविंश, ऊनविंशतितम	ऊनविंशी, ऊनविंशतितमी
	एकान्नविंशति	एकान्नविंश, एकान्नविंशतितम	एकान्नविंशी, एकान्नविंशतितमी

20.	विंशति	विंश, विंशतितम	विंशी, विंशतितमी
21.	एकविंशति	एकविंश, एकविंशतितम	एकाविंशी/ एकविंशततमी
22.	द्वाविंशति	द्वाविंश, द्वाविंशतितम	द्वाविंशतितमी
23.	त्रयोविंशति	त्रयोविंश	त्रयोविंशी
		त्रयोविंशतितम	त्रयोविंशतितमी
24.	चतुर्विंशति	चतुर्विंश	चतुर्विंशी
		चतुर्विंशतितम	चतुर्विंशतितमी
25.	पञ्चविंशति	पञ्चविंश	पञ्चविंशी
		पञ्चविंशतितम	पञ्चविंशतितमी
26.	षड्विंशति	षड्विंश, षड्विंशतितम	षड्विंशी, षड्विंशतितमी
27.	सप्तविंशति	सप्तविंश	सप्तविंशी
		सप्तविंशतितम	सप्तविंशतितमी
28.	अष्टाविंशति	अष्टाविंश	अष्टाविंशी
		अष्टाविंशतितम	अष्टाविंशतितमी
29.	नवविंशति	नवविंश	नवविंशी
		नवविंशतितम	नवविंशतितमी
	ऊनत्रिंशत्	ऊनत्रिंश	ऊनत्रिंशी
		ऊनत्रिंशत्तम	ऊनत्रिंशत्तमी
	एकान्नत्रिंशत्	एकान्नत्रिंश	एकान्नत्रिंशी
		एकान्नत्रिंशत्तम	एकान्नत्रिंशत्तमी
	एकोनत्रिंशत्	एकोनत्रिंश	एकोनत्रिंशी
		एकोनत्रिंशत्तम	एकोनत्रिंशत्तमी
30.	त्रिंशत्	त्रिंश	त्रिंशी
		त्रिंशत्तम	त्रिंशत्तमी
31.	एकत्रिंशत्	एकत्रिंश	एकत्रिंशी
		एकत्रिंशत्तम	एकत्रिंशत्तमी

32.	द्वात्रिंशत्	द्वात्रिंश	द्वात्रिंशी
		द्वात्रिंशत्तम	द्वात्रिंशत्तमी
33.	त्रयस्त्रिंशत्	त्रयस्त्रिंश	त्रयस्त्रिंशी
		त्रयस्त्रिंशत्तम	त्रयस्त्रिंशत्तमी
34.	चतुस्त्रिंशत्	चतुस्त्रिंश	चतुस्त्रिंशी
		चतुस्त्रिंशत्तम	चतुस्त्रिंशत्तमी
35.	पञ्चत्रिंशत्	पञ्चत्रिंश	पञ्चत्रिंशी
		पञ्चत्रिंशत्तम	पञ्चत्रिंशत्तमी
36.	षट्त्रिंशत्	षट्त्रिंश	षट्त्रिंशी
		षट्त्रिंशत्तम	षट्त्रिंशत्तमी
37.	सप्तत्रिंशत्	सप्तत्रिंश	सप्तत्रिंशी
		सप्तत्रिंशत्तम	सप्तत्रिंशत्तमी
38.	अष्टात्रिंशत्	अष्टात्रिंश	अष्टात्रिंशी
		अष्टात्रिंशत्तम	अष्टात्रिंशत्तमी
39.	नवत्रिंशत्	नवत्रिंश	नवत्रिंशी
		नवत्रिंशत्तम	नवत्रिंशत्तमी
	एकोनचत्वारिंशत्	एकोनचत्वारिंश	एकोनचत्वारिंशी
		एकोनचत्वारिंशत्तम	एकोनचत्वारिंशत्तमी
	ऊनचत्वारिंशत्	ऊनचत्वारिंश	ऊनचत्वारिंशी
		ऊनचत्वारिंशत्तम	ऊनचत्वारिंशत्तमी
	एकान्नचत्वारिंशत्	एकान्नचत्वारिंश	एकान्नचत्वारिंशी
		एकान्नचत्वारिंशत्तम	एकान्नचत्वारिंशत्तमी
40.	चत्वारिंशत्	चत्वारिंश	चत्वारिंशी
		चत्वारिंशत्तम	चत्वारिंशत्तमी
41.	एकचत्वारिंशत्	एकचत्वारिंश	एकचत्वारिंश
		एकचत्वारिंशत्तम	एकचत्वारिंशत्तमी
42.	द्वाचत्वारिंशत्	द्वाचत्वारिंश	द्वाचत्वारिंशी
		द्वाचत्वारिंशत्तम	द्वाचत्वारिंशत्तमी
		द्विचत्वारिंश	द्विचत्वारिंशी
		द्विचत्वारिंशत्तम	द्विचत्वारिंशत्तमी

43.	त्रयश्चत्वारिंशत्	त्रयश्चत्वारिंश	त्रयश्चत्वारिंशी
		त्रयश्चत्वारिंशत्तम	त्रयश्चत्वारिंशत्तमी
	त्रिचत्वारिंशत्	त्रिचत्वारिंश	त्रिचत्वारिंशी
		त्रिचत्वारिंशत्तम	त्रिचत्वारिंशत्तमी
44.	चतुश्चत्वारिंशत्	चतुश्चत्वारिंश	चतुश्चत्वारिंशी
		चतश्चत्वारिंशत्तम	चतुश्चत्वारिंशत्तमी
45.	पञ्चचत्वारिंशत्	पञ्चचत्वारिंश	पञ्चचत्वारिंशी
		पञ्चचत्वारिंशत्तम	पञ्चचत्वारिंशत्तमी
46.	षट्चत्वारिंशत्	षट्चत्वारिंश	षट्चत्वारिंशी
		षट्चत्वारिंशत्तम	षट्चत्वारिंशत्तमी
47.	सप्तचत्वारिंशत्	सप्तचत्वारिंश	सप्तचत्वारिंशी
		सप्तचत्वारिंशत्तम	सप्तचत्वारिंशत्तमी
48.	अष्टाचत्वारिंशत्	अष्टाचत्वारिंश	अष्टाचत्वारिंशी
		अष्टाचत्वारिंशत्तम	अष्टाचत्वारिंशत्तमी
49.	नवचत्वारिंशत्	नवचत्वारिंश	नवचत्वारिंशी
		नवचत्वारिंशत्तम	नवचत्वारिंशत्तमी
	एकोनपञ्चाशत्	एकोनपञ्चाश	एकोनपञ्चाशी
		एकोनपञ्चाशत्तम	एकोनपञ्चाशत्तमी
	ऊनपञ्चाशत्	ऊनपञ्चाश	ऊनपञ्चाशी
		ऊनपञ्चाशत्तम्	ऊनपञ्चाशत्तमी
	एकान्नपञ्चाशत्	एकान्नपञ्चाश	एकान्नपञ्चाशी
		एकान्नपञ्चाशत्तम्	एकान्नपञ्चाशत्तमी
50.	पञ्चाशत्	पञ्चाश	पञ्चाशी
		पञ्चाशत्तम	पञ्चाशत्तमी
51.	एकपञ्चाशत्	एकपञ्चाश	एकपञ्चाशी
		एकपञ्चाशत्तम	एकपञ्चाशत्तमी
52.	द्वापञ्चाशत्	द्वापञ्चाश	द्वापञ्चाशी
		द्वापञ्चाशत्तम	द्वापञ्चाशत्तमी
	द्विपञ्चाशत्	द्विपञ्चाश	द्विपञ्चाशी
		द्विपञ्चाशत्तम	द्विपञ्चाशत्तमी

53.	त्रयःपञ्चाशत्	त्रयःपञ्चाश	त्रयःपञ्चाशी
		त्रयःपञ्चांशत्तम	त्रयःपञ्चाशत्तमी
	त्रिपञ्चाशत्	त्रिपञ्चाश	त्रिपञ्चाशी
		त्रिपञ्चाशत्तम	त्रिपञ्चाशत्तमी
54.	चतुःपञ्चाशत्	चतुःपञ्चाश	चतुःपञ्चाशी
		चतुःपञ्चाशत्तम	चतुःपञ्चाशत्तमी
55.	पञ्चपञ्चाशत्	पञ्चपञ्चाश	पञ्चपञ्चाशी
		पञ्चपञ्चाशत्तम	पञ्चपञ्चाशत्तमी
56.	षट्पञ्चाशत्	षटपञ्चाश	षट्पञ्चाशी
		षट्पञ्चाशत्तम	षट्पञ्चाशत्तमी
57.	सप्तपञ्चाशत्	सप्तपञ्चाश	सप्तपञ्चाशी
		सप्तपञ्चाशत्तम	सप्तपञ्चाशत्तमी
58.	अष्टापञ्चाशत्	अष्टापञ्चाश	अष्टापञ्चाशी
		अष्टापञ्चाशत्तम	अष्टापञ्चाशत्तमी
	अष्टपञ्चाशत्	अष्टापञ्चाश	अष्टापञ्चाशत्तमी
		अष्टपञ्चाशत्तम	अष्टपञ्चाशी
59.	नवपञ्चाशत्	नवपञ्चाश	नवपञ्चाशी
		नवपञ्चाशत्तम	नवपञ्चाशत्तमी
	एकोनषष्टि	एकोनषष्टितम	एकोनषष्टितमी
	ऊनषष्टि	ऊनषष्टितम	ऊनषष्टितमी
	एकान्नषष्टि	एकान्नषष्टितम	एकान्नषष्टितमी
60.	षष्टि	षष्टितम	षष्टितमी
61.	एकषष्टि	एकषष्ट	एकषष्टी
		एकषष्टितम	एकषष्टितमी
62.	द्वाषष्टि	द्वाषष्ट	द्वाषष्टी
		द्वाषष्टितम	द्वाषष्टितमी
	द्विषष्टि	द्विषष्ट	द्विषष्टी
		द्विषष्टितम	द्विषष्टितमी

63.	त्रयःषष्टि	त्रयःषष्ट	त्रयःषष्टी
		त्रयःषष्टितम	त्रयःषष्टितमी
	त्रिषष्टि	त्रिषष्ट	त्रिषष्टी
		त्रिषष्टितम	त्रिषष्टितमी
64.	चतुःषष्टि	चतुःषष्ट	चतुःषष्टी
		चतुःषष्टितम	चतुःषष्टितमी
65.	पञ्चषष्टि	पञ्चषष्ट	पञ्चषष्टी
		पञ्चषष्टितम	पञ्चषष्टितमी
66.	षट्षष्टि	षट्षष्ट	षट्षष्टी
		षट्षष्टितम	षट्षष्टितमी
67.	सप्तषष्टि	सप्तषष्ट	सप्तषष्टी
		सप्तषष्टितम	सप्तषष्टितमी
68.	अष्टाषष्टि	अष्टाषष्ट	अष्टाषष्टी
		अष्टाषष्टितम	अष्टाष्टितमी
	अष्टषष्टि	अष्टषष्ट	अष्टषष्टी
		अष्टषष्टितम	अष्टषष्टितमी
69.	नवषष्टि	नवषष्ट	नवषष्टी
		नवषष्टितम	नवषष्टितमी
	एकोनसप्तति	एकोनसप्ततितम	एकोनसप्ततितमी
	ऊनसप्तति	ऊनसप्ततितम	ऊनसप्ततितमी
	एकान्नसप्तति	एकान्नसप्ततितम	एकान्नसप्ततितमी
70.	सप्तति	सप्ततितम	सप्ततितमी
71.	एकसप्तति	एकसप्तत	एकसप्तती
		एकसप्ततितम	एकसप्ततितमी
72.	द्वासप्तति	द्वासप्तत	द्वासप्तती
		द्वासप्ततितम	द्वासप्ततितमी
	द्विसप्तति	द्विसप्तत	द्विसप्तती
		द्विसप्ततितम	द्विसप्ततितमी
73.	त्रयस्सप्तति	त्रयस्सप्तत	त्रयस्सप्तती
		त्रयस्सप्ततितम	त्रयस्सप्ततितमी

	त्रिसप्तति	त्रिसप्तत	त्रिसप्तती
		त्रिसप्ततितम	त्रिसप्ततितमी
74.	चतुस्सप्तति	चतुस्सप्तत	चतुस्सप्तती
		चतुस्सप्ततितम	चतुस्सप्ततितमी
75.	पञ्चसप्तति	पञ्चसप्तत	पञ्चसप्तती
		पञ्चसप्ततितम	पञ्चसप्ततितमी
76.	षट्सप्तति	षट्सप्तत	षट्सप्तती
		षट्सप्ततितम	षट्सप्ततितमी
77.	सप्तसप्तति	सप्तसप्तत	सप्तसप्तती
		सप्तसप्ततितम	सप्तसप्ततितमी
78.	अष्टासप्तति	अष्टासप्तत	अष्टासप्तती
		अष्टासप्ततितम	अष्टासप्ततितमी
	अष्टसप्तति	अष्टसप्तत	अष्टसप्तती
		अष्टसप्ततितम	अष्टसप्ततितमी
79.	नवसप्तति	नवसप्तत	नवसप्तती
		नवसप्ततितम	नवसप्ततितमी
	एकोनाशीति	एकोनाशीतितम	एकोनाशीतितमी
	ऊनाशीति	ऊनाशीतितम	ऊनाशीतितमी
	एकान्नशीति	एकान्नाशीतितम	एकान्नाशीतितमी
80.	अशीति	अशीतितम	अशीतितमी
81.	एकाशीति	एकाशीत	एकाशीती
		एकाशीतितम	एकाशीतितमी
82.	द्व्यशीति	द्व्यशीत	द्व्यशीती
		द्व्यशीतितम	द्व्यशीलितमी
83.	त्र्यशीति	त्र्यशीत	त्र्यंशीती
		त्र्यशीतितम	त्र्यशीतितमी
84.	चतुरशीति	चतुरशीत	चतुरशीती
		चतुरशीलितम	चतुरशीतितमी
85.	पञ्चाशीति	पञ्चाशीत	पञ्चाशीती
		पञ्चाशीतितम	पञ्चाशीतितमी

86.	षडशीति	षडशीत	षडशीती
		षडशीतितम	षडशीतितमी
87.	सप्ताशीति	सप्तांशीत	सप्ताशीती
		सप्ताशीतितम	सप्ताशीतितमी
88.	अष्टाशीति	अष्टाशीत	अष्टाशीती
		अष्टाशीतितम	अष्टाशीतितमी
89.	नवाशीति	नवाशीत	नवाशीती
		नवाशीतितम	नवाशीतितमी
	एकोननवति	एकोननवतितम	एकोननवतितमी
	ऊननवति	ऊननवतितम	ऊननवतितमी
	एकान्ननवति	एकान्ननवतितम	एकान्ननवतितमी
90.	नवति	नवतितम	नवतितमी
91.	एकनवति	एकनवत	एकनवती
		एकनवतितम	एकनवतितमी
92.	द्वानवति	द्वानवत	द्वानवती
		द्वानवतितम	द्वानवतितमी
	द्विनवति	द्विनवत	द्विनवती
		द्विनवतितम	द्विनवतितमी
93.	त्रयोनवति	त्रयोनवत	त्रयोनवती
		त्रयोनवतितम	त्रयोनवतितमी
	त्रिनवति	त्रिनवत	त्रिनवती
		त्रिनवतितम	त्रिनवतितमी
94.	चतुर्नवति	चतुर्नवत	चतुर्नवती
		चतुर्नवतितम	चतुर्नवतितमी
95.	पञ्चनवति	पञ्चनवत	पञ्चनवती
		पञ्चनवतितम	पञ्चनवतितमी
96.	षण्णवति	षण्णवत	षण्णवती
		षण्णवतितम	षण्णवतितमी
97.	सप्तनवति	सप्तनवत	सप्तनवती
		सप्तनवतितम	सप्तनवतितमी

98.	अष्टानवति	अष्टानवत	अष्टानवती
		अष्टानवतितम	अष्टानवतितमी
	अष्टनवति	अष्टनवत	अष्टनवती
		अष्टनवतितम	अष्टनवतितमी
99.	नवनवति	नवनवत	नवनवती
		नवनवतितम	नवनवतितमी
	एकोनशत (नपुं0)	एकोनशततम	एकोनशततमी
100.	शत	शततम	शततमी
200.	द्विशत	द्विशततम	द्विशततमी
300.	त्रिशत	त्रिशततम	त्रिशततमी
400.	चतुश्शत	चतुश्शततम	चतुश्शततमी
500.	पञ्चशत	पञ्चशततम	पञ्चशततमी
1000.	सहस्त्र	सहस्त्रतम	सहस्त्रतमी
10,000.	अयुत (नपुं0)		
1,00,000.	लक्ष (नपुं0) अथवा लक्षा (स्त्री0)		

दस लाख – प्रयुत (नपुं0)
करोड़ – कोटि (स्त्री0)
दस करोड़ – अर्बुद (नपुं0)
अरब – अब्ज (नपुं0)
दस अरब – खर्व (पुं0, नपुं0)
खरब – निखर्व (पुं0, नपुं0)
दस खरब – महापद्म (नपुं0)
नील – शङ्कु (पुं0)
दस नील – जलधि (पुं0)
पद्म – अन्त्य (नपुं0)
दस पद्म – मध्य (नपुं0)
शङ्ख – परार्ध (नपुं0)

परिशिष्ट II

प्रमुख धातु सूची

(अकारादि क्रम से)

मूल धातु	परिवर्तित रूप (सार्वधातुक लकारों में)	अर्थ	गण*	पद रूप (लट् प्र0 पु0, एकव0)	** सेट् या अनिट्
अद्		खाना	2	प0 अत्ति	
अश्		प्राप्त करना	5	आ0 अश्नुते	
अश्		खाना	9	प0 अश्नाति	
अस्		होना, रहना	2	प0 अस्ति	
अर्च्		पूजा करना	1	प0 अर्चति	सेट्
				10	उ 0
अर्चयति, अर्चयते					
(प्र +) आप्		पाना	5	प0 आप्नोति	
आस्		बैठना	2	आ0 आस्ते	सेट्
इण्		जाना	2	प0 एति	
अधि + इङ्		अध्ययन करना	2	आ0 अधीते	
इष्	(इच्छ्)	चाहना	6	प0 इच्छति	वेट्
ईक्ष्		देखना	1	आ0 ईक्षते	
ऋच्छ्		जाना	6	प0 ऋच्छति	
एध्		बढ़ना	1	आ0 एधते	
कम्		चाहना	1	आ0 कामयते	सेट्
कस्		जाना	1	प0 कसति	सेट्
कथ		कहना	10	उ0 कथयति, कथयते	सेट्

* 1. भ्वादि 2. अदादि 3. जुहोत्यादि 4. दिवादि 5. स्वादि 6. तुदादि 7. रुधादि 8. तनादि 9. क्र्यादि और 10. चुरादि।

** अनिर्दिष्ट धातुएँ अनिट् हैं।

कुप्	क्रोध करना	4	प0	कुप्यति	सेट्
कूज्	कूजना	1	प0	कूजति	सेट्
कृ	करना	8	उ0	करोति, कुरुते	
कृत्	काटना	6	प0	कृन्तति	
कृष्	खींचना	1	प0	कर्षति	
कृष्	जोतना	6	उ0	कृषति, कृषते	
कृ (विक्षेपे)	फैलाना/ बिखेरना	6	प0	किरति	सेट्
क्री	खरीदना	9	उ0	क्रीणाति, क्रीणीते	
क्रीड्	खेलना	1	प0	क्रीडति	सेट्
क्षिप्	फेंकना	6	उ0	क्षिपति, क्षिपते	
खाद्	खाना	1	प0	खादति	
गद्	कहना	1	प0	गदति	
गम् (गच्छ्)	जाना	1	प0	गच्छति	
गुह्	छिपाना	1	उ0	गूहति, गूहते	
गै	गाना	1	प0	गायति	
ग्रन्थ्	बाँधना	9	प0	ग्रथ्नाति	
ग्रह्	लेना	9	उ0	गृह्णाति, गृह्णीते	
घुष्	शब्द करना	1	प0	घोषति	
घ्रा (जिघ्र्)	सूँघना	1	प0	जिघ्रति	
चर्	चलना	1	प0	चरति	
पाल्	पालना	10	उ0	पालयति, पालयते	सेट्
चल्	चलना	1	प0	चलति	
चि	इकट्ठा करना	5	उ0	चिनोति, चिनुते	
चिन्त्	सोचना	10	उ0	चिन्तयति, चिन्तयते	
चुर्	चुराना	10	उ0	चोरयति, चोरयते	सेट्
छिद्	काटना	7	उ0	छिनत्ति, छिन्ते	
जन्	पैदा होना	4	आ0	जायते	सेट्
जागृ	जागना	2	प0	जागर्ति	सेट्
जि*	जीतना	1	प0	जयति	
जीव्	जीना	1	प0	जीवति	सेट्
ज्ञा	जानना	9	उ0	जानाति, जानीते	

* वि0 और परा0 के साथ आत्मनेपद होता है

आ+ज्ञा	आज्ञा करना	10	उ0 आज्ञापयति, आज्ञापयते	
तन्	फैलाना	8	उ0 तनोति, तनुते	सेट्
तप्	तपना	1	प0 तपति	
तुद्	कष्ट देना	6	उ0 तुदति, तुदते	
तृप्	तृप्त होना	4	प0 तृप्यति	
तृ	तैरना, पार करना	1	प0 तरति	
त्रुट्	तोड़ना	6	प0 त्रुटति/त्रुट्यति	
त्रुट्	फाड़ना	10	आ0 त्रोटयते	
त्यज्	छोड़ना	1	प0 त्यजति	
त्रस्	काँपना	1	प0 त्रसति	
		4	प0 त्रस्यति	
त्वर्	शीघ्रता करना	1	आ0 त्वरते	
दंश्	काटना	1	प0 दशति	
दह्	जलाना	1	प0 दहति	
दा	देना	3	उ0 ददाति, दत्ते	
दाण् (यच्छ)	देना	1	प0 यच्छति	
दिव्	खेलना, जुआ खेलना	4	प0 दीव्यति	सेट्
दृश् (पश्य्)	देखना	1	प0 पश्यति	
द्विष्	द्वेष करना	2	उ0 द्वेष्टि, द्विष्टे	
धा	रखना, धारण करना	3	उ0 दधाति, धत्ते	
धाव्	दौड़ना	1	उ0 धावति, धावते	सेट्
ध्मा (धम्)	फूँकना (साँस से फूँक कर बजाना)	1	प0 धमति	
नद्	शब्द करना	1	प0 नदति	
नम्	प्रणाम करना, झुकना	1	प0 नमति	
नश्	नष्ट होना	4	प0 नश्यति	
नी	ले जाना	1	उ0 नयति, नयते	
पच्	पकाना	1	उ0 पचति, पचते	
पठ्	पढ़ना	1	प0 पठति	

पत्	गिरना	1	प0 पतति	
पद्	जाना, पाना	4	आ0 पद्यते	
पा (पिब)	पीना	1	प0 पिबति	
पा	रक्षा करना	2	प0 पाति	
पूज्	पूजा करना	10	उ0 पूजयति, पूजयते	सेट्
पू	पवित्र करना	9	उ0 पुनाति, पुनीते	सेट्
प्रच्छ् (पृच्छ्)	पूछना	6	प0 पृच्छति	
प्रथ्	प्रसिद्ध होना	10	उ0 प्राथयति, प्राथयते	सेट्
फल्	फलना, सफल होना; फटना, फाड़ना	1	प0 फलति	
बन्ध्	बाँधना	9	प0 बध्नाति	
बन्ध्	"	10	उ0 बन्धयति, बन्धयते	
बुध्	जानना	1	प0 बोधति,	
		4	आ0 बुध्यते	
ब्रू	कहना	2	उ0 ब्रवीति, ब्रूते/आह	सेट्
भक्ष्	खाना	1	उ0 भक्षति, भक्षते	
		10	उ0 भक्षयति, भक्षयते ।	सेट्
भज्	सेवा करना	1	उ0 भजति, भजते	
भा	चमकना	2	प0 भाति	
भिद्	तोड़ना, फोड़ना	7	उ0 भिनत्ति, भिन्ते	
भी	डरना	3	प0 बिभेति	
भुज्	भोगना	7	प0 भुनक्ति	
	खाना		आ0 भुङ्क्ते	
भू	होना, उत्पन्न होना.	1	प0 भवति	सेट्
भृ	भरना	1	उ0 भरति, भरते	
	पालन पोषण करना धारण करना	3	उ0 बिभर्ति, बिभृते	
मन्थ्	मथना	1,9	प0 मन्थति, मथ्नाति	
मिल्	मिलना	6	उ0 मिलति, मिलते	सेट्

मुच्	छोड़ना, मुक्त करना, त्यागना,	6	उ0	मुञ्चति, मुञ्चते	
मुद्	प्रसन्न होना	1	आ0	मोदते	सेट्
मुद्	मिलाना	10	उ0	मोदयति, मोदयते	
यज्	पूजा करना	1	उ0	यजति, यजते	
या	जाना	2	प0	याति	
याच्	माँगना	1	उ0	याचति, याचते	सेट्
रक्ष्	रक्षा करना	1	प0	रक्षति	
(आ+) रभ्	आरंभ करना	1	आ0	रभते	
रम्	क्रीड़ा करना	1	आ0	रमते	
वि+रम्	विश्राम करना	1	प0	विरमति	
राज्	चमकना	1	उ0	राजति, राजते	
रुद्	रोना	2	प0	रोदिति	सेट्
रुध्	रोकना	7	उ0	रुणद्धि, रुन्धे	
रुह्	उत्पन्न होना	1	प0	रोहति	
लभ्	प्राप्त करना, पाना	1	आ0	लभते	
लिख्	लिखना	6	प0	लिखति	सेट्
लू	काटना, पृथक् करना	9	उ0	लुनाति, लुनीते	सेट्
वच्	कहना	2	प0	वक्ति	
वद्	कहना	1	प0	वदति	सेट्
वप्	बोना काटना	1	उ0	वपति, वपते	
वस्	रहना	1	प0	वसति	
वह्	ढोना	1	उ0	वहति, वहते	
विद्	जानना	2	प0	वेत्ति	सेट्
विद्	पाना	6	उ0	विन्दति, विन्दते	
वृत्	होना	1	आ0	वर्तते	सेट्
वृध्	बढ़ना	1	आ0	वर्धते	सेट्
व्रज्	जाना	1	प0	व्रजति	सेट्
शंस्	कहना, प्रशंसा करना	1	प0	शंसति, प्रशंसति	

शक्	सकना, सहना	5	प0	शक्नोति	
शङ्क्	डरना, शङ्का करना	1	आ0	शङ्कते	सेट्
शम्	शान्त होना	4	प0	शाम्यति	
शास्	पढ़ाना, शिक्षा देना, शासन करना	2	प0	शास्ति	सेट्
शी	सोना	2	आ0	शेते	सेट्
शुच्	शोक करना	1	प0	शोचति	
श्रु	सुनना	1	प0	शृणोति	
शुभ्	चमकना, प्रसन्न होना	1	आ0	शोभते	सेट्
सद् (सीद्)	दुःखी होना	6	प0	सीदति	
सह्	सहन करना	1	आ0	सहते	
सिच्	सींचना	6	उ0	सिञ्चति, सिञ्चते	
सू	जन्म देना	2,4	आ0	सूते, सूयते	
सृज्	बनाना	6	प0	सृजति	
सृप्	रेंगना	1	प0	सर्पति	
सेव्	सेवा करना	1	आ0	सेवते	सेट्
स्तम्भ्	रोकना	1	आ0	स्तम्भते	
	अवलंब देना	9	प0	स्तभ्नाति	
स्तु	स्तुति करना	2	उ0	स्तौति, स्तुते	
स्तृ	ढँकना	5	उ0	स्तृणोति, स्तृणुते	
स्था (तिष्ठ्)	रुकना, प्रतीक्षा करना, होना, पास रहना	1	प0	तिष्ठति	
स्पृश्	छूना	6	प0	स्पृशति	
स्मि	मुस्कराना	1	आ0	स्मयते	
स्मृ	स्मरण करना	1	प0	स्मरति	
स्पन्द्	टपकना	1	आ0	स्पन्दते	
स्रु	बहना, टपकना	1	प0	स्रवति	

स्वज्	आलिंगन करना	1	आ० स्वजते	
स्वप्	सोना	2	प० स्वपिति	
हन्	मारना	2	प० हन्ति	
हा	छोड़ना	3	प० जहाति	
हिंस्	हिंसा करना	7	प० हिनस्ति	
हु	हवन करना	3	प० जुहोति	
हृ	हरण करना, लैना, जीतना	1	उ० हरति, हरते	
हृष्	प्रसन्न होना	4	प० हृष्यति	सेट्
ह्री	लज्जित होना	3	प० जिह्रेति	
आ+ ह्वे	पुकारना (स्पर्धा)	1	उ० ह्वयति, ह्वयते, आह्वयति, आह्वयते	

परिशिष्ट III

पारिभाषिक शब्दावली

अनुनासिक — मुख के साथ नासिका की सहायता से उच्चरित होने वाला वर्ण **अनुनासिक** कहलाता है। **(मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः । पा0 1.1.8)** जैसे – ङ्,ञ्,ण्,न् एवं म् ।

आगम — शब्द या धातु के प्रारम्भ,मध्य या अन्त में जो अक्षर जुड़ जाता है उसे **आगम** कहते हैं, जैसे– अभवत् में अ, भविष्यत् में इ और फलानि में न् आगम हैं। किसी अक्षर का आगम होने पर उससे सम्बद्ध अन्य वर्ण का नाश नहीं होता है । अतएव कहा गया है, **मित्रवदागमः** ।

आदेश — ज़ब किसी वर्ण के स्थान में कोई दूसरा वर्ण आ जाता है तब वह **आदेश** कहलाता है, जैसे– इति+आदि = इत्यादि में इ के स्थान में य् का आदेश हुआ है ।

आदेश शत्रुवत् होता है । वह जिसके स्थान पर आता है उसे मारकर स्वयं उसके स्थान में बैठ जाता है **(शत्रुवदादेशः)** ।

उपधा — किसी शब्द के अन्तिम वर्ण के ठीक पहले वाले वर्ण को **उपधा** कहते हैं । **(अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा । पा0 1.1.65)**

जैसे– राजन् शब्द में ज का अ उपधा है ।

उपपद विभक्ति — देखिए– कारक विभक्ति ।

उपसर्ग — प्र आदि क्रिया के योग में **उपसर्ग** कहलाते हैं **(उपसर्गाः क्रियायोगे । पा0 1.4.59),**

जैसे– प्रणमति । प्रादि निम्नलिखित हैं– प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि और उप।

कारक विभक्ति क्रिया को आधार बनाकर संज्ञादि शब्दों में जो विभक्ति होती है, उसे **कारक विभक्ति** कहते हैं। जैसे– **गुरुः शिष्याय ज्ञानं ददाति** । यहाँ देना क्रिया शिष्य के लिए हुई है जिस कारण यह संप्रदान कारक है। अतएव इसमें चतुर्थी विभक्ति हुई है।

किसी पद विशेष का आश्रय लेकर होने वाली विभक्ति **उपपद विभक्ति** कहलाती है, जैसे– **गुरवे नमः** में चतुर्थी विभक्ति उपपद विभक्ति है, क्योंकि यह **नमः** पद के कारण हुई है ।

गुण अ, ए और ओ को **गुण** कहते हैं । **(अदेङ्गुणः । पा0 1.1.2)**

तिङन्त तिङ् (लकारों के प्रत्यय) जोड़ने से धातु का जो रूप बनता है वह **तिङन्त** कहलाता है, जैसे– भवति, गच्छति आदि । तिङ् प्रत्यय निम्नलिखित अठारह हैं जो विभिन्न लकारों के अर्थ को प्रकट करने के लिए धातु में जोड़े जाते हैं–

तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस्, त, आताम् झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इट्, वहि, महिङ् । **(पा0 3.4.78)**

इनमें प्रथम नौ प्रत्यय परस्मैपद के हैं और अन्तिम नौ आत्मनेपद के ।

निपात च, वा, ह, एव, एवम्, नूनम्, शश्वत्, युगपद् आदि अव्यय **निपात** कहलाते हैं । **(चादयोऽसत्त्वे। पा0 1.4.57)**

निष्ठा	क्त (त) और क्तवतु (तवत्) प्रत्ययों को **निष्ठा** कहते हैं । (**क्तक्तवतू निष्ठा । पा0 1.1.26**) ये प्रत्यय भूत काल के अर्थ में होते हैं । गतः, गतवान्, तीर्णः, तीर्णवान् ।
	सुप् (सु औ जस् आदि कारक विभक्ति) या तिङ् (तिप् तस् झि आदि धातुओं में लगने वाले लकारों के प्रत्यय) से युक्त शब्द पद कहलाता है । (**सुप्तिङन्तं पदम् । पा0 1.4.14**) जैसे– बालकः पठति, इसमें बालकः सुबन्त पद है और पठति तिङन्त पद । संस्कृत में कोई भी शब्द पद बनने के बाद ही प्रयोग के योग्य होता है ।
प्रकृति	शब्द या धातु जिससे कोई प्रत्यय जुड़ता है उसे **प्रकृति** कहते हैं, जैसे– रामः पठति । यहाँ रामः में राम प्रकृति है और पठति में पठ् ।
प्रगृह्य	i) ईकारान्त, ऊकारान्त तथा एकारान्त द्विवचनान्त पद **प्रगृह्य** कहलाते हैं । (**ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम् । पा0 1.1.11**) जैसे– मुनी, साधू, लते । ii) अदस् शब्द का मकार से युक्त ईकारान्त, ऊकारान्त रूप अमी, अमू भी **प्रगृह्य** संज्ञक होते हैं । (**अदसो मात् । पा0 1.1.12**)
प्रत्याहार	जो वर्णों को संक्षेप में बतला दे वह **प्रत्याहार** कहलाता है । (**प्रत्याह्रियन्ते संक्षिप्यन्ते वर्णाः यत्र असौ प्रत्याहारः ।**) जैसे– अ इ उ ण् ऋ लृ क्– में अ से लेकर क् के पहले तक के सभी वर्णों को अक् द्वारा बतलाया जाता है । अतः यह प्रत्याहार है ।

प्रत्याहार पाणिनि-व्याकरण का मूलाधार है । पाणिनि ने निम्नलिखित चौदह माहेश्वर सूत्रों के आधार पर लगभग 44 प्रत्याहारों की कल्पना की जिससे उनके व्याकरण में अत्यन्त संक्षिप्तता आ सकी–
अ इ उ ण् ।1। ऋ लृ क् ।2। ए ओ ङ् ।3। ऐ औ च् ।4। ह य व र ट् ।5। ल ण् ।6। ञ म ङ ण न म् ।7। झ भ ञ् ।8। घ ढ ध ष् ।9। ज ब ग ड द श् ।10। ख फ छ ठ थ च ट त व् ।11। क प य् ।12। श ष स र् ।13। ह ल् ।14।
उपर्युक्त किसी भी सूत्र के अन्तिम हलन्त वर्ण के साथ उसके पहले के किसी भी वर्ण को मिलाकर प्रत्याहार बनाया जाता है– **आदिरन्त्येन सहेता। पा0 1.1.71**
प्रत्याहार–सूत्र के वर्णों में अन्तिम हलन्त वर्ण की गिनती नहीं होती, जैसे– अक् प्रत्याहार में अ इ उ ऋ लृ– इन वर्णों को ही गिना जाता है। यहाँ सूत्र के अन्त में स्थित क् और ण् को इसमें नहीं गिना जाता है ।

प्रातिपदिक

i) धातु और प्रत्यय को छोड़कर सभी अर्थयुक्त शब्द **प्रातिपदिक** कहलाते हैं। (**अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् । पा0 1.2.45**) जैसे– बालक, फल आदि।
ii) कृदन्त, तद्धितान्त और समास भी **प्रातिपदिक** कहलाते हैं
(**कृत्तद्धितसमासाश्च। पा0 1.2.46**), जैसे– पाठक(कृदन्त), दाशरथि (तद्धितान्त), राजपुरुष (समास) ।

विकरण

धातु में लकारों के तिङ् प्रत्यय लगने के पूर्व उनके बीच में होने वाले शप्, श्यन् आदि उपप्रत्यय को **विकरण** कहते हैं । विकरण के भेद के कारण ही धातुएँ दस गणों में विभक्त हुई हैं ।

विभाषा जहाँ किसी कार्य के होने या न होने–दोनों की स्थिति हो, उसे **विभाषा** कहते हैं। (**न वेति विभाषा । पा0 1.1.44**) इस को **'विकल्प'** या **'वा'** भी कहते हैं।

वृद्धि आ, ऐ और औ को **'वृद्धि'** कहते हैं। (**वृद्धिरादैच्। पा0 1.1.1**)

सवर्ण जिन वर्णों के मुखगत उच्चारण स्थान और आभ्यन्तर प्रयत्न समान होते हैं, वे आपस में **सवर्ण** कहलाते हैं।

(**तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् । पा0 1.1.9**) जैसे– क् और ग् । दोनों का उच्चारण स्थान 'कण्ठ' है और आभ्यन्तर प्रयत्न 'स्पृष्ट'। इसी प्रकार अ और आ, इ और ई, क् और ख् सवर्ण हैं। अ और ह् परस्पर सवर्ण नहीं हैं, क्योंकि दोनों का उच्चारण स्थान कण्ठ है, किन्तु आभ्यन्तर प्रयत्न भिन्न–भिन्न हैं। अ विवृत है तो ह् ईषद्विवृत। विभिन्न वर्णों के आभ्यन्तर प्रयत्न और मुखगत उच्चारण स्थान इस प्रकार है–

आभ्यन्तर प्रयत्न बोधक चक्र

स्पृष्ट	ईषत्स्पृष्ट	विवृत	ईषद्विवृत	संवृत*
क् ख् ग् घ् ङ्	य्	अ ए	श्	अ
च् छ् ज् झ् ञ्	र्	इ ऐ	ष्	(प्रयोग दशा
ट् ठ् ड् ढ् ण्	ल्	उ ओ	स्	में मात्र
त् थ् द् ध् न्	व्	ऋ औ	ह्	ह्रस्व अ)
प फ् ब् भ् म्		लृ		

* सवर्णसंज्ञा के लिए **संवृत** भेद की अपेक्षा नहीं है। क्योंकि प्रक्रिया काल में **'अ' विवृत** ही माना जाता है।

मुखगत उच्चारण स्थान बोधक चक्र

कण्ठ	तालु	ओष्ठ	मूर्धा	न्त	नासिका	कण्ठतालु	कण्ठोष्ठ	दन्तोष्ठ	जिह्वामूल	उपध्मानीय
अ	इ	उ	ऋ	लृ	ङ्	ए	ओ	व्	≍क	प
क्	च्	प्	ट्	त्	ञ्	ऐ	औ		≍ख	फ
ख्	छ्	फ्	ठ्	थ्	ण्					
ग्	ज्	ब्	ड्	द्	न्					
घ्	झ्	भ्	ढ्	ध्	म्					
ङ्	ञ्	म्	ण्	न्	अनुस्वार (ं)					
ह्	य्	≍प्	र्	ल्						
विसर्ग (:)	श्	≍फ	ष्	स्						

संयोग दो या अधिक व्यञ्जन जब बीच में बिना किसी स्वर के व्यवधान के मिलते हैं तो उन्हें **संयोग** कहते हैं। **हलोऽनन्तराः संयोगः । पा0 1.1.7)** जैसे मित्रम् के त्र (त् + र् + अ) में त् र् तथा राष्ट्रम् के ष्ट्र में ष् ट् र् संयोग हैं ।

संहिता वर्णों की अत्यन्त समीपता (अर्थात् अव्यवहित उच्चारण) को **संहिता** कहते हैं (**परः सन्निकर्षः संहिता । पा0 1.4.109)** जैसे– इ न् द् उ : (विसर्ग) जब अव्यवहित रूप में उच्चरित होते हैं तब इनका स्वरूप इन्दुः पद के रूप में प्रकट होता है । एक पद में, समास में, धातु और उपसर्ग के योग में संहिता अनिवार्य है । किन्तु वाक्य के दो पदों के बीच यह वक्ता की इच्छा पर निर्भर करता है कि वह (प्रथम पद के अन्तिम वर्ण और दूसरे पद के प्रथम वर्ण में) संहिता करे या न करे । जैसे– 'भाति इन्दुः' में संहिता करने पर 'भातीन्दुः' रूप

बनता है । परन्तु यह वक्ता की इच्छा पर आधारित है । संहिता कहाँ अनिवार्य और कहाँ ऐच्छिक होती है। इसके लिए प्रसिद्ध श्लोक है–

संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः ।
नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते ॥

संहिता होने पर ही सन्धि होती है ।

सम्प्रसारण

य्, व्, र्, ल् के स्थान पर क्रमशः इ, उ, ऋ, लृ का होना **सम्प्रसारण** कहलाता है । (**इग्यणः सम्प्रसारणम् । पा0 1.1.45**)

सुबन्त

सुप् (कारक विभक्ति) से अन्त होने वाले पद **सुबन्त** कहलाते हैं, जैसे– रामः, अहम् आदि । सुप् के अन्तर्गत निम्नलिखित इक्कीस प्रत्यय आते हैं–

सु औ जस् अम् औट् शस्, टा भ्याम् भिस्, ङे भ्याम् भ्यस्, ङसि भ्याम् भ्यस्, ङस्, ओस् आम्, ङि ओस् सुप् । (**पा0 4.1.1**)

सेट्

कुछ धातुओं में प्रत्यय लगने से पूर्व इट् (इ) का आगम होता है । ऐसे धातुओं को **सेट्** धातु कहते हैं । जैसे–

पठ्– पठितः, लिख् – लेखितुम् आदि ।

जिन धातुओं में इट् का आगम नहीं होता है, वे **अनिट्** कहलाते हैं, जैसे –

कृ – कृतः, गम्–गतः आदि ।

परिशिष्ट IV

प्रमुख ग्रन्थ-सूची

(क) व्याकरणग्रन्थ

	पुस्तक	लेखक	प्रकाशक
1.	अष्टाध्यायी	पाणिनि	चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी ।
2.	हायर संस्कृत ग्रामर	मोरेश्वर रामचन्द्र काले (डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी-अनुवादक)	रामनारायण लाल, बेनी प्रसाद इलाहाबाद (211002)
3.	काशिका	जयादित्यवामन (न्यास पदमञ्जरी संहिता)	चौखम्बा संस्कृत विद्याभवन, वाराणसी ।
4.	पातञ्जलं महाभाष्यम्	पतञ्जलि	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना ।
5.	प्रौढमनोरमा	श्री भट्टोजिदीक्षित	चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी ।
6.	प्रौढ रचनानुवाद कौमुदी	डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी	विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी ।

7.	बृहद् अनुवाद चन्द्रिका	श्री चक्रधर नौटियाल 'हंस'	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना ।
8.	मध्यसिद्धान्तकौमुदी	श्री वरदराज (सम्पा0 पं0 विश्वनाथ शास्त्री)	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली ।
9.	रूपचन्द्रिका	पं0 रामचन्द्र झा	चौखम्बा सं0 सिरीज औफिस, वाराणसी ।
10.	लघुसिद्धान्तकौमुदी	श्री वरदराज सम्पा0 पं0 विश्वनाथ शास्त्री	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना ।
11.	लघुशब्देन्दुशेखर	श्री नागोजिभट्ट	चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी ।
12.	वैयाकरण-सिद्धान्तकौमुदी	श्री भट्टोजिदीक्षित	खेमराज, बम्बई ।
	(क) तत्त्वबोधिनी टीका		
	(ख) बालमनोरमा टीका	श्री वासुदेव दीक्षित सम्पा0 म0म0पं0 गिरिधर शर्मा म0म0पं0 परमेश्वरानन्द	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना ।
13.	व्याकरणचन्द्रोदय	श्री चारूदेव शास्त्री	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना ।
14.	व्याकरण प्रदीप	कु0 उषा अग्रवाल	सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, दरियागंज, दिल्ली
15.	संस्कृत व्याकरण प्रवेशिका	डा0 बाबूराम सक्सेना	साहित्य संस्थान, 28 (44) लाउदर रोड़, इलाहाबाद ।

16.	संस्कृत व्याकरण प्रवेशिका	डा0 आर्थर ए0 मैकडान अनुवादक–डा0 कपिलदेव द्विवेदी	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना ।
17.	संस्कृत व्याकरणोदय	प्रो0 जयमन्त मिश्र	चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी ।

(ख) छन्दः ग्रन्थ

1.	छन्दोमञ्जरी	श्री गङ्गादास	चौखम्बा सं0 सिरीज, वाराणसी ।
2.	वृत्तरत्नाकर	श्री केदार भट्ट	मेहरचन्द लक्ष्मनदास, दिल्ली ।
3.	श्रुतबोध	महाकवि कालिदास	चौखम्बा सं0 सिरीज, वाराणसी ।

(ग) अलङ्कारग्रन्थ

1.	अलङ्कारमञ्जरी	श्री नारायण खिस्ते	चौखम्बा सं0 सिरीज, वाराणसी ।
2.	काव्यप्रकाश	मम्मट (व्याख्याकार) आचार्य विश्वेश्वर	ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी ।
3.	कुवलयानन्द	श्री अप्पय्य दीक्षित	चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी
4.	चन्द्रालोक	पीयूषवर्ष जयदेव	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना।
5.	साहित्यदर्पण	श्री विश्वनाथ कविराज	चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी ।